विषय–सूची ।

—:o:—

निवेदन ।

—:o:—

एक भाषा का दूसरी भाषा में अनुवाद करना कोई आसान बात नहीं है। किसी काव्य-ग्रन्थ का अनुवाद करना तो अत्यन्त कठिन कार्य है। हिन्दी मेरी मातृ-भाषा नहीं अतएव मेघनाद-वध जैसे परमोत्तम और क्लिष्ट काव्य-ग्रन्थ के सूक्ष्म भावों, अलङ्कारों और उक्तियों को यथातथ्य हिन्दी में अनुवाद करना मेरे लिये कितना कठिन कार्य हुआ होगा इसे सहृदय पाठक स्वयम् सोच सकते हैं। ऐसी दशा में भूलों का हो जाना एक साधारण सी बात है। मुझे आशा है कि उदार पाठक महोदय उन त्रुटियों के लिये मुझे क्षमा प्रदान करेंगे।

निवेदिका,

अनुवादिका।

भूमिका।

बङ्गाल के विख्यात कवि माइकेल मधुसूदन दत्त का नाम हम लोगों के लिए नया नहीं। उनकी कुछ कविताओं का हिन्दी पद्यानुवाद प्रकाशित हो चुका है। उनके प्रसिद्ध मेघनाद-बध काव्य के पद्यानुवाद के लिए भी उद्योग हो रहा है। वह कब तक सफल होगा, नहीं कहा जा सकता। तब तक उस का हिन्दी गद्यानुवाद पाठकों के आगे उपस्थित होता है। श्रीमती बाला जी के हम लोग कृतज्ञ हैं, जिन की कृपा से हमें इस के रसास्वादन करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

रामायण के एक अंश को लेकर इस काव्य की रचना की गई है। पर, कवि ने अपनी उच्च कल्पना से और भी कितनी ही बातों का इस में समावेश किया है। उन से यह एक स्वतन्त्र काव्य बन गया है।

एक बात और भी है जो इस की स्वतन्त्रता और नव्यता की सहायक है। पाठक देखेंगे कि इस में रावण का चरित्र यथेष्ठ उज्ज्वल भावों के साथ चित्रित किया गया है। कवि की उस के साथ हार्दिक सहानुभूति है। परन्तु इतना होने पर भी, रावण के उस अनाचार का निराकरण कैसे हो सकता था जिस के कारण उस का सवंश विध्वंस हुआ। कवि ने, आरम्भ में ही, एक छोटे से वाक्य में कैफियत देने का प्रयत्न किया है। रावण सारा दोष शूर्पणखा के मत्थे मढ़ता हुआ कहता है कि, "किस कुसाइत में तेरे दुख से दुखी होकर पावक-शिखा-रूपिणी जानकी को मैं अपने सोने के घर में लाया था?" रावण किस प्रकार सीता को अपने सोने के घर में लाया था, इसे सब जानते हैं। और, यह

वाक्य शूर्पणखा को सम्बोधन कर के कहा गया है। पर शूर्पणखा वहां उपस्थित न थी। मालूम नहीं, वह इस का क्या उत्तर देती। जान पड़ता है, कवि भी इस बात का निश्चय नहीं कर सका। क्योंकि, आगे चल कर जब चित्राङ्गदा ने रावण को उपालम्भ देते हुए कहा कि राम को तुम देश-वैरी क्यों कहते हो? क्या वह तुम्हारे सिंहासन के लिए लड़ रहा है? तुम अपने ही कर्म-फल से अपने को डुबा रहे हो, तब रावण इस का कुछ उत्तर नहीं देता और इसी जगह इस दृश्य पर परदा गिर जाता है। रावण ने सीता जी के लिए जो पावक-शिखा की उपमा दी है वह ठीक ही है—

प्रज्वलित वह्नि पर-दार हुई,
सोने की लङ्का छार हुई।

जो हो, कवि के साथ हम को भी रावण से सहानुभूति है। इतना भेद अवश्य है कि उस में प्रेम और आत्मीयता की जगह खेद और क्रोध के भाव विद्यमान हैं। इस का कारण, चित्राङ्गदा के शब्दों में, ऊपर प्रकट हो चुका है।

शत्रु का कितना ही बड़ा वैभव और विक्रम हो वह उस के विजेता के ही गौरव का बढ़ाने वाला होता है। रावण के वैभव और विक्रम का कहना ही क्या? कवि ने उस का वर्णन भी खूब किया है। खेद इतना ही है कि राक्षस-परिवार के ऊपर अत्यधिक आकर्षित हो जाने के कारण वह भगवान् रामचन्द्र के आदर्श की रक्षा न कर सका। कहीं कहीं वह उस आदर्शहीन हो गया है। जिन्हें हिन्दू लोग ईश्वर का अवतार अथवा आदर्श वीर, आदर्श राजा और आदर्श गृहस्थ मानते और जानते हैं उन में भीरुता, दीनता और दुर्बलता का आरोप करना अनुचित है। किसी कथानक में आवश्यकतानुसार फेर-फार करने का अधिकार कवियों

को है पर आदर्श को विकृत करने का अधिकार किसी को नहीं। किन्तु माइकेल मधुसूदन दत्त का जीवन ही अनियमित और असंयत था। कवियों के स्वभाव में कुछ न कुछ उच्छृङ्खलता होती ही है। माइकेल का स्वभाव तो मानों उसी से बनाया गया था। उन्हों ने अपना कुटुम्ब छोड़ा, समाज छोड़ा, धर्म छोड़ा और धनी पिता के पुत्र होने पर भी बङ्गाल के इस अनुपम कवि को अन्त में, दातव्य चिकित्सालय में अपना शरीर छोड़ना पड़ा। मधुसूदन के जीवन में सर्वत्र एक आवेग भरा हुआ था। यही आवेग, ओज के रूप में, उनकी कविता के लिए सब दोषों को छिपा देने वाला विशेष गुण बन गया। इसी के कारण 'मेघनाद-वध' सदोष होने पर भी परम मनोहर काव्य है।

कवि ने जहां जिस विषय का वर्णन किया है वहाँ उसका चित्र सा खींच दिया है। एक के ऊपर एक कल्पना-तरङ्ग का चमत्कार देखते ही बन पड़ता है। उपमाएँ यद्यपि सभी उपयुक्त नहीं हुई हैं पर उनकी कमी नहीं। उनमें नवीनता और विशेषता भी है। वर्णन-शैली अविच्छिन्न धारा की तरह बहती हुई जान पड़ती है। वह पढ़ने वाले को आकण्ठ मग्न कर के बरबस अपनी गति के साथ खींच ले जाती है। इस काव्य को पढ़ते पढ़ते कभी कौतूहल बढ़ता है, कभी आश्चर्य होता है, कभी क्रोध हो आता है और कभी करुणा से हृदय द्रवित हो उठता है। कभी आकाश की सैर करने को मिलती है कभी पाताल की। कवि की पृथ्वी भी सोने की है। फिर कौन ऐसा सहृदय है जो मेघनाद-वध को पढ़ कर मुग्ध न हो जाय? सचमुच वंग-भाषा भाग्य-शालिनी है जिसमें माइकेल मधुसूदन दत्त जैसा कवि उत्पन्न हुआ है।

या तो सभी जगह कवि की पूर्ण प्रतिभा का परिचय मिलता है परन्तु प्रमीला का लङ्का-प्रवेश, सीता और सरमा का सम्वाद, मेघनाद के मरने पर रावण का रण-गमन, श्रीरामचन्द्र जी का यमपुरी-निरीक्षण, सारण का शत्रु शिविर में जाना और प्रमीला का सती होना बहुत ही चित्ताकर्षक विषय हैं। उन्हें पढ़ कर पाठक देखेंगे कि मधुसूदन दत्त कैसे मार्मिक कवि थे। निस्सन्देह मेघनाद-वध साहित्य-गगन का एक अद्भुत नक्षत्र है। कहते हैं, बहुतों को इस नक्षत्र ने नया मार्ग दिखा कर अपनी ओर आकर्षित किया पर कोई भी इतना ऊंचा न चढ़ सका। अस्तु।

इस अनुवाद के औचित्य के विषय में मेरा कुछ कहना साहस का काम होगा। इसका विचार वही कर सकते हैं जो वंग भाषा के ज्ञाता हैं। मैं केवल यही कह सकता हूं कि श्रीमती बाला जी स्वयं बंगालिन हैं। बहुत दिनों से इस प्रान्त में रहने के कारण उन्हें हिन्दी पर प्रेम हो गया है और वे उसकी सेवा करना अपना कर्त्तव्य समझती हैं। कई पुस्तकें उन्हों ने हिन्दी में प्रकाशित कराई हैं। कभी कभी हिन्दी पत्रों में भी वे लिखती हैं। हिन्दी भी उनकी अच्छी होती है। व्याकरण की कुछ भूलों के सिवा इस पुस्तक की भाषा भी ख़ासी है। जो त्रुटियां दृष्टि-दोष अथवा शीघ्रता के कारण रह गई होंगी वे अगले संस्करण में ठीक कर दी जायँगी। आशा है, पाठक इस पुस्तक का उचित आदर कर के उनको उत्साह प्रदान करेंगे।

चिरगाँव।
हनूमज्जयन्ती,
१९७५ } मैथिलीशरण गुप्त।

वन्दना।

हे श्वेतभुजे भारति × मैं मन्दमति तुम्हारे चरणारविन्द की वन्दना करके तुम्हें आवाहन करता हूँ।

हे माता, जिस समय निषाद ने गहन कानन में क्रौञ्ची के संग क्रौञ्च* को अपने तीक्ष्ण बाण से बेधा था, जैसे उस समय तुम बाल्मीकि की रसना पर आ विराजीं, वैसे ही अब मुझ दास पर कृपा कीजिए।

देवि! इस भवमण्डल में तुम्हरी महिमा को कौन जान सकता है? दस्युवृत्तिरत नराधम बाल्मीकि तुम्हारे प्रसाद से मृत्युञ्जय ÷ उमापति के समान अमर हो गया, हे वरदे §, तुम्हारी अनुग्रह से चोर-रत्नाकर ‡ काव्य-रत्नाकर बन गया और तुम्हारे ही स्पर्श से उस विषवृक्ष ने सुचन्दन-वृक्ष की शोभा प्राप्त की। आहा! क्या कभी मेरा पुण्य भी ऐसा उदय होगा? मां, जननी का सब से अधिक स्नेह गुणहीन और मूढ़मति सन्तान पर होता है। मैं इस मेघनादवधगीत ‡ को वीररस में मग्न होकर गाना चाहता हूँ। अतएव, मुझ दास पर अवतीर्ण होकर अपनी पदच्छाया † प्रदान कीजिए।

हे, मधकरी कल्पना देवि! तुम भी आओ और कवियों के चित्तरूपी पुष्पोद्यान से मधु ले ले कर ऐसे मधुचक्र × की रचना करो, जिसके सुधा को रसिक-जन चिरकाल तक आनन्द से पान करते रहें।

× सरस्वती, * एक पक्षी; ÷ मृत्यु को जीतने वाला § वर देने वाली; ‡ बाल्मीकि का पहला नाम; ‡ मेघनाद-वध नामक महाकाव्य; † आश्रय, × छत्ता।

पहला सर्ग।

मेघनाद का अभिषेक।

वीर दशानन स्वर्ण-सिंहासन पर ऐसा शोभायमान है जैसे कान्तिमय हेमकूट पर तेजपुञ्ज-शृङ्गवर। चारों ओर मित्र, मन्त्री और सभासद वीरबाहु¶ के मृत्यु-शोक से मुख नीचा किए बैठे हैं। पृथ्वी पर यह स्फटिक-गठित अतुलनीय सभा-स्थल विविध रत्नों से ऐसी शोभित है, मानो मान-सरोवर में सहस्रों सरस कमल विकसित हुए हों। श्वेत, रक्त, नील, और पीतवर्ण के श्रेणीबद्ध स्तम्भ ऊँची सुनहरी छत को ऐसे धारण किए हैं, जैसे फणीन्द्र‡ अपने असंख्य फणों को फैला कर वसुधा* को सहज में धारण करता है। झालरों के मोती, पन्ने और हीरे, नयनों को झिलमिलाते हुए ऐसे लटक रहे हैं, जैसे राजकीय स्वयम्वर-गृह में वन्दनवारों में गुथे हुए फूल और पल्लव। रत्नों से उत्पन्न हुई दीप्ति नयनों में चकाचौंध करती हुई बिजली की भाँति चमचमा रही है।

¶ रावण का एक पुत्र; ‡ शेषनाग; * पृथ्वी।

चन्द्रानना और चारुलोचना किङ्करी ¶ अपनी मृणाल-भुजा † से सुन्दर चमर को आनन्दपूर्वक हिला रही हैं । छत्रधर छत्र लिए हुए ऐसा शोभायमान है, मानो कामदेव हर के कोपानल से भस्म न होकर आज रावण की सभा में छत्र-धर के रूप में आ खड़ा हुआ है। भीषण-मूर्ति द्वारपाल द्वार पर ऐसे टहल रहा है जैसे शूलपाणि रुद्रेश्वर पाण्डव-गृह-द्वार पर।

शीतल मन्द-सुगन्धित समीर अपने संग पक्षियों का ऐसा मनभावन कलरव ला रही है, मानो गोकुल-विपिन में मनोहर वंशी बज रही हो। हे दानवपति मय! तुमने जो अपूर्व सुन्दर सभा-स्थल पाण्डवों के सन्तोषार्थ इन्द्रप्रस्थ में रचा था, वह इसके सामने तुच्छ प्रतीत होता है।

ऐसी सुन्दर सभा में सुशोभित राक्षस-पति रावण के मुख से पुत्र-शोक के मारे कोई शब्द नहीं निकलता; उसके वस्त्र अविरल अश्रुधारा से ऐसे भीग गए हैं मानो तीक्ष्ण शरों से विधे हुए सरस तरु से जल-विन्दु-धारा वह निकली हो। इसी समय एक दूत हाथ जोड़ कर सामने आ खड़ा हुआ। उसका सारा शरीर धूल से भरा और रक्त से सना था।

दूत ने कहा—"हे वीर दशानन! वीरबाहु के साथ सैकड़ों योद्धा समर-सागर में विलुप्त हो गए—काल-तरङ्ग ने सब का ग्रास कर लिया!"

¶ दासी; † कमल के डंठल की सी भुजा।

राज-कुल-मणि रावण सुत की मृत्यु का समाचार दूत से सुनते ही शोकाकुल हो गया। राजा के दुःख से दुखी होकर सभासदों के नेत्रों में ऐसा अँधेरा छा गया जैसे दिननाथ के मेघाच्छन्न हो जाने से जगत में अँधेरा छा जाता है। कुछ क्षण में रावण सचेत हुआ और विषादाकुल हो साँस भर कर कहने लगाः—

"रे दूत, तेरी यह बात स्वप्नवत् है। जिसके भुज-बल से अमरवृन्द भयभीत हो जाते थे, क्या उस धनुर्धर को भिखारी राम ने सन्मुख-रण में मार डाला? क्या विधाता ने तरुवर शाल को फूलदल से काट डाला? हा पुत्र! हा वीरबाहु! हा वीर चूड़ामणि! मैंने किस पाप से तुझ जैसे धन को आज खो दिया? रे दारुण विधि! तू ने मेरा ऐसा कौन सा दोष देखा जिस से तू ने मेरे इस रत्न को हर लिया? हाय! मैं इस यातना को कैसे सह सकूंगा? इस काल-समर में मेरे विपुल कुल-मान को कौन बचावेगा? हे विधाता! जैसे लकड़हारा एक एक शाख को काट कर सारे वृक्ष का नाश कर देता है वैसे ही यह दुरन्त रिपु मेरा नाश कर रहा है। क्या मैं इसके शर से समूल नष्ट हो जाऊंगा? यदि ऐसा सम्भव न होता तो पराक्रमी भाई कुम्भकर्ण की अकाल मृत्यु क्यों होती; और राक्षस-कुल-रक्षण योद्धागण क्यों मरते? अरी अभागिनी शूर्पनखा! तूने किस कुसमय में कालरूपी पञ्चवटी वन में, कालकूट से परिपूर्ण इस भुजङ्ग को देखा था? अरी, किस कुसाइत में तेरे दुःख से दुखी होकर मैं पावक-शिखा-रूपिणी जानकी को इस हेम-गृह में लाया था? जी में तो ऐसा आता है कि इस कनक-लङ्का

को छोड़ कर निविड़ कानन में चला जाऊं और वहाँ मन की इस ज्वाला को एकान्त में शान्त करूँ। मेरी यह लङ्का-पुरी कुसुम-दास से सज्जित, दीपावलि-तेज से उज्ज्वलित और नाट्यशाला-सदृश सुन्दर थी, किन्तु अब उसका एक एक फूल मुरझा रहा है। दीपक तेजहीन हो गए हैं। वीणा, मुरज, मुरली, आदि बाजे नीरव हैं। अब मैं यहां क्यों रहूं?

जब रावण इस प्रकार विलाप कर चुका तब मन्त्री सारण ने विनीत भाव से हाथ जोड़ कर कहा—"हे भुवन-विख्यात राक्षस-कुल-मुकुट-राजन्, इस दास को क्षमा-दान दीजिए। इस जगत में ऐसा कौन है जो तुम्हें समझा सके? हे प्रभो, स्वयम् सोचिए। यदि अभ्रभेदी चूड़ा वज्रा-घात से चूर हो जाता है तो उसकी पीड़ा से भूधर कभी अधीर नहीं होता। स्वामिन्! यह भवमण्डल मायामय है। इसका सारा सुख-दुख वृथा है। अज्ञानी ही इसके मोह-छल में अपने आप को भूल जाते हैं।"

लङ्काधिपति ने उत्तर दिया—"हे सचिव-प्रधान सारण, तुम्हारा कथन सत्य है। मैं जानता हूं कि यह भव-मण्डल मायामय है और इसके सुख-दुःख वृथा हैं। किन्तु, यह सब जानकर भी मेरा अबोध मन रोए देता है। जो फूल हृदय-रूपी वृंत में खिलता है, यदि काल-रूपी चोर उसे तोड़ ले तो हृदय व्याकुल होकर शोक-सागर में ऐसे डूबता है, जैसे कमल के तोड़े जाने पर मृणाल जल में।"

इतना कहकर राजा ने दूतकी ओर देखा और उससे पूछा—*अमरत्रास बली वीरबाहु की मृत्यु कैसे हुई?

* जिससे देवता डरते हैं।

दूत ने हाथ जोड़कर और राजेन्द्र के चरणों में प्रणाम करके कहना आरम्भ किया—" हे लङ्काधिपति, मैं उस अपूर्व कहानी को कैसे कहूं? वीरबाहु की वीरता का वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। जैसे मतवाला हाथी नलवन में प्रवेश करता है वैसे ही वह धनुर्धर वीर कुञ्जर अरिदल में प्रवेश करता था। उसकी भैरव-हुङ्कार को स्मरण करने मात्र से मेरा हृदय थरथर काँपता है। हे राक्षसपति! मैंने मेघ-गर्जन, सिंह-नाद, जलधि का घोर कल्लोल, और पवन-पथ में द्रुतगामी वज्राग्नि की कड़कड़ाहट को सुना है, किन्तु, त्रिभुवन में घोर *कोदण्ड-टङ्कार कभी नहीं सुनी।

"वीरेन्द्र-वृन्द के साथ वीरबाहु ने रण में ऐसे प्रवेश किया जैसे यूथनाथ †गजयूथ के साथ प्रवेश करता है। गगन-मण्डल में धूल ऐसे घनाकार में उड़ी, मानो मेघदल ने रोष में आकर आकाश को आच्छादित कर लिया हो। बाण-समूह की विद्युच्छटा सनसन करती दिखाई देने लगी। धन्य है वीरबाहु की शिक्षा को। राजन! उसके हाथ से मारे गए शत्रुओं का गिनना अति कठिन है। हे प्रभु! इस प्रकार स्वदल सहित तुम्हारा पुत्र शत्रुओं के बीच में जूझ गया! कुछ समय के उपरान्त राम ने युद्ध में प्रवेश किया। उसके शीश पर कनक-मुकुट और कर में भीम धनु था। वह धनु इन्द्रधनुष की भांति विविध रत्नों से जड़ा है।" इतना कह कर राक्षस विलाप करने लगा; मानो उसे पूर्व-दुःख स्मरण हो आया। उसे विलाप करते देख सभाजन भी चुपचाप रोने लगे।

---

* धनुष; † राजा-हाथी

अश्रुनयन होकर ¶ मन्दोदरी-मनोहर रावण फिर बोला— "रे ‡ सन्देश-वाहक ! मैं सुनना चाहता हूँ कि शूर दशाननात्मज का नाश दशरथात्मज ने किस प्रकार किया ?"

दूत ने कहा—"हे महीपति, हाय ! मैं इसका वर्णन कैसे करूं ? आप उसे कैसे सुन सकेंगे ? ज्योंही वीरवाहु ने अपने नेत्रों को सिंह के नेत्रों की भाँति लाल२ कर अपने भीम दांतों को कटकटा कर उछाल मारी, त्योंही राम ने कुमार पर आक्रमण किया। चारो ओर ऐसी भीषण समर-तरङ्ग उठने लगी मानो सिन्धु अपने प्रतिद्वन्दी वायु से घोर युद्ध कर रहा है। वीर-दल में भयङ्कर शब्द होने लगे और धूमपुञ्जसम ढालों के बीच में अग्नि-शिखा सी असंख्य तलवारें चमकने लगीं। हे देव, और क्या कहूं—समर-शङ्ख सागर-रव की भांति नाद कर रहा था। हे राक्षस-कुल-पति, केवल मैं ही, पूर्व जन्म के पापों से, बच गया। अरे विधाता, किन पापों के बदले तूने मुझे आज यह दुःख दिया है ! कनक-लङ्का के अलङ्कार वीरवाहु के साथ रण-भूमि की शर-शय्या पर मैं क्यों न सो गया ? किन्तु, इस में मेरा कुछ दोष नहीं है। हे नरमणि ! रिपु के प्रहारों से मेरा वक्षस्थल * क्षत ‡ हो गया है; पर देखिये, मेरी पीठ पर कोई अस्त्र-चिह्न नहीं है।"

इतना कहकर राक्षस मनस्ताप से स्तब्ध हो गया। तब, रावण हर्ष और विषाद से बोला—"दूत, तेरी बातों को सुनकर ऐसा कौन वीर-हृदय है जो संग्राम में न जाए ? डमरू की

¶ मन्दोदरी का मन हरने वाला; ‡ सन्देश लाने ले जाने वाला; * छाती ‡ घायल।

ध्वनि सुनकर क्या कालरूपी फणी बिल में छिपा रह सकता है? वीरपुत्र-धात्री लङ्का, तू धन्य है! हे सभासदजन! चलो, सब चल कर देखें कि वीर-चूड़ामणि वीरबाहु रण-भूमि में किस प्रकार पड़ा है। उसे देख कर अपने नेत्रों को तृप्त करें।"

जैसे अंशुमाली[1] दिनमणि कनक-उदयाचल में चढ़ता है वैसे ही राक्षस-पति रावण प्रासाद-शिखा पर चढ़ा। लङ्का के किरीट-स्वरूप स्वर्ण-राजमन्दिर उसकी मनोहरता और शोभा को चारों ओर से बढ़ा रहे हैं। पुष्प-वाटिकाओं में रानियों के श्रेणीबद्ध कनक भवन सुशोभित हैं। कमलालय सरोवर की रजच्छटा और पुष्पित तरुराजी, युवती-यौवन की भाँति नेत्रों के लिए विनोदकारी है। नगर की दुकानें विविध रत्नों और नाना रङ्गों से रञ्जित हैं। जान पड़ता है कि जगत की विविध सम्पत्ति सुचारु लङ्का के पद-तल में पूजा-विधि से सजाई गई है। अहा! आज यह राक्षस-पुरी सांसारिक भोगों और सुखों का वासस्थान बन रही है।

राक्षसेश्वर ने उन्नत, अटल और अचल प्राचीर पर दृष्टिपात करते ही मदमत्त शस्त्रधारी वीरों को उस पर ऐसे फिरते देखा जैसे पर्वत पर सिंह। लङ्का के चारों सिंह-द्वार बंद हैं। उनके आस पास असंख्य रथ, रथी, गज, अश्व और पैदल युद्ध के लिए तैयार हो रहे हैं। उसने नगर के बाहर, सिन्धु के तट पर, बालुका-क्षेत्र में रामसैन्य की ऐसी बड़ी संख्या देखी जैसे आकाश-मण्डल में तारागण। पूर्व-द्वार पर संग्राम में दुर्निवार वीर नील पहरा दे रहा है;

[1] किरणों का समूह-सूर्य।

दक्षिण-द्वार पर हाथी के समान नवदलधारी वली अङ्गद ऐसे फिर रहा है जैसे हेमऋतु के अन्त में विचित्र केंचुल से भूषित सतेज और सगर्व विषधर त्रिशूल सदृश जीभ लपलपाता और फणों को फनफनाता हुआ भ्रमण करता है। उत्तरी द्वार पर वीर सिंह सुग्रीव सिंहनाद कर रहा है। पश्चिम-द्वार पर जानकी-विहीन राम ऐसे कान्ति-हीन हैं, जैसे कौमुदी-विहीन कुमुद-रञ्जन चन्द्रमा। वायुपुत्र हनुमान और मित्रवर विभीषण लक्ष्मण के साथ हैं। इन सब ने स्वर्णमयी लङ्कापुरी को ऐसे घेर लिया है जैसे व्याध-दल बड़ी चतुराई से गहन कानन में केशरि-कामिनी को जाल में घेर लेता है। वह रूप में नवल-रमणी है, किन्तु पराक्रम में बड़ी भीषण है। राक्षस-पति ने बड़ी दूर तक रण-क्षेत्र का निरीक्षण किया। शृगाल, गृद्धिनी, शकुनि, श्वान और पिशाच-दल कोलाहल करते हुए फिर रहे हैं। कोई उड़ रहा है। कोई बैठा है। कोई लड़ रहा है। कोई अपने प्रतिद्वन्दी को पंखो से मार २ कर भगा रहा है। कोई रक्त पीकर अपनी तृप्ति कर रहा है। मृत कुञ्जर-पुञ्ज भीषण आकृति में पड़ा है। शीघ्रगामी घोड़े गतिहीन हैं। अगण्य रथ चूर्ण हो गए हैं। निषादी ¶, सादी, शूली, रथी और पैदल सब एक साथ भूमि पर लोट रहे हैं! यत्रतत्र वर्म, चर्म, असि, धनु, भिन्दिपाल, तूण, शर, मुद्गर और परशु पड़े हुए हैं। वीरों के महातेजस्कर आभरण, मणिमय किरीट और शीर्षक बिखर रहे हैं। यन्त्रिदलों * में यन्त्रों के ढेर लगे हैं। ध्वजवह हाथ में हेम-दण्ड लिए हुए यम-दण्डाघात से गिर गया है।

¶ महावत * बाजेवाले।

हा ! जैसे किसानों के बल से सुनहरे धानों की बालियाँ कट कर खेत में गिर जाती हैं वैसे रवि-कुल-मणि शूर राघव के शरों से राक्षस-गण गिर गए हैं ! महाशोक से शोकाकुल हो रावण कहने लगा—"हे प्रियतम कुमार, आज तुम जिस शय्या पर सो रहे हो, उसकी आकांक्षा वीरजन सदा से करते आए हैं। जन्मभूमि की रक्षा के लिए रिपुदलबल दलनार्थ समर में मरने से कौन डरता है ? जो डरता है वह मूढ़ और भीरु है। उसे शतबार धिक्कार है ! तथापि, हे वत्स ! मेरा हृदय मोह-मद में मुग्ध और कुसुमसम कोमल है। इस वज्राघात से मैं कितना कातर हूं—इसे अन्तर्यामी ही जानता है। मैं उसे कह नहीं सकता। हे विधि, यह भवभूमि तुम्हारी लीलास्थली है; किन्तु, दूसरों की वेदना देखकर क्या तुम सुखी होते हो ? पिता तो पुत्र के दुःख से दुखी होता है। तुम तो जगत-पिता हो, न मालूम तुम्हारी यह कैसी रीति है ? हा पुत्र ! हा वीरबाहु ! वीरेन्द्र-केशरि ! तुम्हारे बिना मैं कैसे जी सकूंगा ?"

इस प्रकार विलाप कर रावण ने आंखें उठा कर दूरस्थ मकरालय-सागर को देखा। सागर-जल में शिलाएं ऐसी दृढ़ता से बंधी हैं जैसे नीलाकाश में एक अचल मेघ-श्रेणी। दोनों ओर तरङ्ग-समूह निरन्तर गम्भीर निर्घोष करता हुआ उथल-पुथल कर रहा है। सेतु का बांध अपूर्व और राजपथ सा प्रशस्त है। वर्षा-काल के जलस्रोत की भाँति समुद्र-जल कलरव करता हुआ प्रवाहित हो रहा है।

महामानी वीरकुल-श्रेष्ठ रावण ने सिन्धु की ओर देख कर अभिमान से कहा—"क्या ही सुन्दर माला आज तू ने

गले में डाली है ! रे जलदलपति, धिक्कार है तुझे ! क्या इस प्रकार के साज से तू अजेय और अलङ्ध्य रह सकता है ? हे रत्नाकर, हाय ! क्या यही तेरा भूषण है? हे देव ! किस गुण से दशरथ-नन्दन ने तुझे मोल ले लिया है? जब कि तू पवन से भी शत्रुता करते नहीं डरता, तो फिर तू ने किस डर से यह बेड़ी पहन ली है ? मदारी अधम भालू को रस्सी से बाँध कर नचाता है; किन्तु, उसकी यह सामर्थ नहीं कि वह राज-केशरी को फंदे में बांध ले । हे नीलाम्बु-स्वामिन ! तुम्हारे वक्षःस्थल पर हेमवती लंकापुरी ऐसी शोभा पा रही है जैसे माधव के वक्षःस्थल में कौस्तुभ-मणि । हे बली, उठो और अपने वीरबल से इस सेतु को तोड़ कर अपना अपवाद दूर करो। इस प्रबल रिपु को अतल जल में डुबा कर मेरे मन की ज्वाला को शान्त करो । हे वीरेन्द्र, तुम्हारे चरणों में मेरी यह विनती है कि तुम अपने भाल से इस कलंक-रेखा को मिटा डालो ।"

इतना कह, राजेन्द्र रावण सभास्थल में लौट आया और कनक-सिंहासन पर बैठ कर शोक में निमग्न हो गया । पात्र, मित्र, सभासद आदि भी चारों ओर चिन्ता के मारे चुपचाप बैठे रहे । इस अवसर पर सहसा मृदु रोदन-निनाद के साथ नूपुर और किंकिणी की ध्वनि सुन पड़ी । देवी चित्राङ्गदा ने हेमाङ्गी-सङ्गिनी-दल-सहित सभास्थल में प्रवेश किया । उसका केशबन्धन विशृङ्खल हो गया है! उसकी भूषण-विहीन देह ऐसी हो गई है जैसे बरफ के गिरने से वन-सुशोभिनी-लता कुसुम-रत्न-हीन हो जाती है । उसके अश्रुमय नेत्र निशा के शिशिरपूर्ण पद्मपर्ण के से हो गए हैं । वीरबाहु के शोक से राज-महिषी उस पक्षी की भाँति विवशा है, जिसके बच्चे को

काल-रूपी सर्प उसके घोसले में घुस कर उसके बच्चे को खा जाता है! उसके पदार्पण करते ही सभा में शोक रूपी आँधी बहने लगी. उसके मुक्त केश मेघमाला के समान हैं: उसके मुख से निश्वासरूपी प्रलय-वायु जल्दी २ निकल रही है: नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बह रही है और मेघ-गर्जन के समान हा हा-रव हो रहा है । कनक-सिंहासनारूढ़ रावण चौंक पड़ा । किंकरी नेत्रनीर में भीग गईं । उनके हाथ से चमर छूट गया । छत्रधर छत्र छोड़ कर रोने लगे । भीमरूपी द्वार-पाल ने क्षोभ और रोष में आकर तलवार खींच ली । पात्र, मित्र, और सभासद अधीर होकर घोर कोलाहल कर रोने लगे ।

कुछ समय के उपरान्त सती चित्राङ्गदा रावण की ओर देख कर कहने लगी—"कृपामय! विधि ने मुझे एक रत्न दिया था । जैसे चिड़िया अपने बच्चे को वृक्ष के खोलने में रखती है वैसे ही मुझ दीना ने उसे तुम्हारे पास रक्खा था । हे लङ्कानाथ! कहो, तुमने उसका क्या किया? मेरा वह अमूल्य रत्न कहाँ है? दरिद्री के धन की रक्षा करना राजा का धर्म है । तुम राजकुलेश्वर हो और मैं कङ्गालिनी अबला । हे राजन्! तुमने मेरे उस धन की रक्षा भली भांति की होगी!"

बली दशानन ने उत्तर दिया—"हे प्रिये! तुम इस प्रकार मेरा तिरस्कार क्यों करती हो? हे सुन्दरि! ग्रह-दोष से दोषी की निन्दा कोई नहीं करता । देवि! मैं विधिवश इस यातना को सहन कर रहा हूं! देखो, यह वीरपुत्र-धात्री कनकपुरी अब ऐसी वीरशून्या है जैसे ग्रीष्म में वनस्थली

पुष्पशून्या और नदी जलशून्या हो जाती हैं। ललने! तुम केवल अपने ही पुत्र के शोक से व्याकुल हो, किन्तु मेरा हृदय सैकड़ों पुत्रों के शोक से रात दिन विदीर्ण हुआ करता है। हाय! विधि मेरी लंका का विनाश करने के लिए हाथ दढ़ाए बैठा है।"

राक्षस-नाथ चुप हो गया। गन्धर्वनन्दिनी विधुमुखी चित्राङ्गदा शोक से अधोमुख हो रोती रही और पुत्र को याद करते २ विह्वल हो गई। रावण फिर कहने लगा—"हे देवि! क्या ऐसा विलाप करना तुम्हारे लिए शोभा की बात है? तुम्हारा पुत्र देश के वैरी को रण में नाश कर स्वर्ग को सिधार गया। तुम वीरमाता हो। जो पुत्र वीर कर्म करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ है क्या उसके लिए क्रन्दन करना उचित है? तुम्हारे पुत्र के पराक्रम से आज मेरा वंश उज्ज्वल हुआ है। हे इन्दुनिभानने, तुम अश्रुनीर में क्यों डूब रही हो?"

चारुनेत्रा चित्राङ्गदा ने उत्तर दिया—"जो समर में देश के वैरी का नाश करता है वह शुभ क्षण में जन्मा है। ऐसे वीर-प्रसून की प्रसू को भाग्यवती मान कर मैं उसके लिए धन्य २ कहती हूं। किन्तु, हे नाथ! सोचो तो सही, कहाँ तुम्हारी लंका और कहाँ अयोध्यापुरी! हे राजन, मुझे बताओ कि किस लोभ और किस कारण से राम यहाँ आया है? यह देवेन्द्र-वाञ्छित स्वर्णमयी लंका भवमण्डल में अतुलनीय है। इसके चारों ओर रजत-प्राचीर-सम जलधि शोभा पा रहा है। मैं सुनती हूं कि वह क्षुद्र नर सरयू-तीर बसता है। क्या, वह तुम्हारे हेम-सिंहासन के पाने के लिये युद्ध कर रहा है? हे बली! तुम उसे देश-रिपु क्यों कहते हो? सांप सिर नीचा

किये रहता है, किन्तु यदि उस पर कोई प्रहार करता है तो वह अपना फण उठा कर प्रहारक को अवश्य काट खाता है। ठीक ऐसी ही घटना घटित हुई है। अच्छा कहो, इस काल-रूपी अग्नि को लंकापुरी में किसने प्रज्वलित किया है? हाय! नाथ, अपने कर्मफल से राक्षस-कुल को डुबा कर आप भी डूब रहे हो!"

इतना कह कर वीरबाहु-जननी चित्राङ्गदा ने सखि-दल को साथ ले अन्तःपुर में प्रवेश किया। रावण शोक और अभि-मान से कनकासन त्याग कर बोला—"इतने दिन में मेरी लंका वीर-शून्या हो गई! इस काल-समर में अब किसे भेजूं? राक्षस-कुल का मान अब कौन रक्खेगा? अच्छा, अब मैं स्वयम् जाऊंगा। लंका के भूषण वीरो, जाओ और सजो! देखूं, रघुकुल-मणि राम में कितना बल और वैभव है? अब पृथ्वी रावण या राम रहित होने वाली है।"

जब शूरसिंह रावण ने इतना कहा, तब सभास्थल में गम्भीर मेघगर्जन की भांति दुन्दुभी बज उठी। राक्षस-दल वीरमद से मत्त हो गया और उसकी भैरव-रव से देव, दानव और मनुष्य त्रासित होगए। युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं। हाथी-दल सवेग जल की भांति निकला। वक्रग्रीव घोड़े अश्वशाला से निकलते और हिनहिनाते हुए दिखाई दिए। पुरी को अपनी सुनहरी छतों की विभा से चमकाने वाले रथ शीघ्रता से आ पहुँचे। सिरों पर कनक-टोपी पहने उज्ज्वल म्यानों में तलवारें डाले, पीठ पर अभेद्य ढाल बांधे, हाथ में शूल और अभ्रभेदी शाल-वृक्ष लिए, अपनी देहों को लोह-निर्मित कवच से ढके वीर लोग श्रेणीबद्ध हुए। महा-

वत हाथों में अङ्कुश लिए हुए वज्रधारी इन्द्र के समान प्रतीत हुए। सवार विश्वनाशी परशु को लेकर आगे बढ़े। आकाश-मण्डल में ऐसी आभा उठी मानो वनस्थल में दावानल ने प्रवेश किया हो। बली ध्वजधर ने राक्षस-कुल की रत्नखचित ध्वजा को ऐसा फैलाया मानो गरुड़ अपने पंखों को फैला-कर आकाश में उड़ने लगा हो। रण-वाद्य गम्भीर नाद से चारों ओर बजने लगा। अश्वव्यूह उल्लास से हिन-हिनाने और गजसमूह चिकारने लगे। शङ्खों का भैरव-नाद सुनाई पड़ने लगा। धनुषों की टङ्कारों और तलवारों की झनझनाहट ने अपने महा कोलाहल से कानों को बहरा कर दिया। कनक-लंका वीरों के पद-भार से हिल गई। चि-त्राङ्गदा ने मेघनाद की धात्री, प्रभाषा, से पूछा—"मैं राक्षस-कुल केशरी इन्द्रजित मेघनाद को इस युद्ध में क्यों नहीं देखती ?"

प्रभाषा ने उत्तर दिया—"कदाचित् युवराज प्रमोद-उद्यान में भ्रमण कर रहा होगा। उसे मालूम न होगा कि आज रण में वीरबाहु मारा गया है। इतना कह कर, प्रभाषा देवराज इन्द्र को भयभीत करने वाले वीर-मणि मेघनाद के पास चल दी। चिर-रण-जयी इन्द्रजित की पुरी अमरावती के सदृश है। अलिन्द * में सुन्दर रत्नों से जटित हेममय स्तम्भावलि है। चारों ओर नन्दन-कानन की सी रम्य कु-सुम-वन-राजि विकसित है। कोयल डालों पर 'कुहू कुहू' कर रही हैं। भौंरों की गुञ्जार मन को लुभा रही है। चारों ओर पुष्प खिल रहे हैं। पत्ते मर मर शब्द कर रहे हैं।

* बरामदा।

शीतल-मंद-सुगन्ध वायु बह रही है । झरने झरझर शब्द करते हुए झर रहे हैं। प्रभाषा ने कनक-प्रासाद में प्रवेश करके देखा कि स्वर्ण-द्वार पर वामा कर में धनुष लिये निर्भयता से फिर रही है । रत्नों से अलंकृत वेणी विद्युत-प्रभा की भाँति चमचमा रही है। तरकश के शर मणिमय फणी के समान शोभा पा रहे हैं। जैसे रवि-कर-जाल प्रफुल्ल कमल को घेर लेता है वैसे स्वर्ण-कवच कुच-युग पर शोभा पा रहा है। तरकश में महा तीक्ष्ण शर हैं; किन्तु उन शरों से भी तीक्ष्ण उनके लोचनरूपी शर हैं। वह यौवन-मद में मत्त होकर ऐसे फिर रही है जैसे मधुकाल में मतङ्गिनी फिरती है। विशाल नितम्ब में करधनी मधुर शब्द कर रही है। पैरों में नूपुर हैं। वीणा, मुरज, मुरली और सप्तस्वरा बज रहे हैं। संगीत-तरंगावलि इन सब के साथ चित्त को आनन्दित कर रही है। वीरवर मेघनाद वरांगना-कुल के साथ ऐसे विहार कर रहा है जैसे रजनी-नाथ दक्ष-बाला-दल के साथ ।

मेघनाद की धात्री प्रभाषा उससे जा मिली। वीरेन्द्र केशरी इन्द्रजित ने उसे देखते ही कनक-आसन त्याग दिया और धात्री के चरणों में प्रणाम करके कहने लगा—"हे माता, आज तुम इस भवन में किस लिए आई हो? लंका में तो सब कुशल है न?"

धात्री ने उसका सिर चूम कर कहा—"पुत्र, कनक-लङ्का की दुर्दशा क्या कहूँ! तुम्हारा प्रिय भाई वीरबाहु घोर संग्राम में मारा गया। शोक से महाशोकी राक्षसाधिपति युद्ध के लिए अब स्वयम् सज रहे हैं।"

मेघनाद ने विस्मित हो कर पूछा—"भगवति, तुमने क्या कहा ? मेरे प्रिय अनुज का वध किसने किया ? निशा-रण में तो मैं ने राम का संहार कर डाला था । मैंने तो प्रचण्ड शरों की वर्षा से वैरिदल का खण्ड खण्ड कर दिया था । जननि ! यह वार्ता, यह अद्भुत वार्ता, तुमने कहां से सुनी ? कृपा कर मुझ दास से शीघ्र कहो ।"

प्रभाषा ने उत्तर दिया—"हाय पुत्र ! सीतापति मायावी मानव है । तुम्हारे शरों से मर कर वह फिर जी उठा । हे राक्षस-चूड़ामणि, तुम शीघ्र जाकर इस काल-समर में राक्षस-कुल के मान की रक्षा करो ।"

महाबली मेघनाद ने क्रोध से कुसुम-माला को तोड़ डाला और कनक-माला को दूर फेंक दिया । उसके कुण्डल पदतल में पड़े हुए ऐसे शोभा पाने लगे जैसे आभामय अशोक के फूल अशोक के नीचे शोभा पाते हैं । कुमार ने गम्भीरता से कहा—"मुझे धिक् है । हा ! वैरि-दल ने स्वर्णलङ्का को घेर लिया और मैं यहां रमणीदल में विहार कर रहा हूं । हा ! धिक्कार है मुझे ! क्या मुझ दशाननात्मज इन्द्रजित को यह शोभा देता है ? अरे शीघ्र रथ लाओ । रिपुदल को वध कर मैं इस अपवाद को मिटाऊँगा ।"

रथीन्द्रवर वीराभरण से ऐसा सजा मानो हेमवती-सुत तारकासुर का नाश करने जा रहा हो । मेघस्वरूप रथ का घूमता हुआ रथ-चक्र विद्युत-छटा सा प्रतीत होता है । रथ की ध्वजा इन्द्र-चाप से भी अधिकतर मनोहर है । घोड़े वायु-सम वेगमान हैं । जिस समय वीर-चूड़ामणि मेघनाद

वीरोचित दर्प से रथ पर चढ़ने लगा तो सुन्दरी प्रमीला ने आकर अपने पति का हाथ ऐसे पकड़ लिया जैसे हेमलता तरुकुलेश्वर को आलिङ्गन करती है । उसने रोकर कहाः—हे प्राण-सखे ! आप मुझ दासी को छोड़ कर कहां जा रहे हो ? यह अभागिनी तुम्हारे विरह में प्राण कैसे रख सकेगी ? नाथ, यदि गहन-कानन में लता स्वेच्छा से गज-पद में लिपट जाये और मातङ्ग उसके रङ्गरस पर ध्यान न भी दे तथापि वह उसे पदाश्रय अवश्य देता है। हे गुणनिधे ! तुम मुझ किङ्करी को आज क्यों त्याग रहे हो ?"

मेघनाद ने हँस कर उत्तर दिया—"हे सती, तुमने इन्द्रजित को जीत कर जिस दृढ़ बन्धन से उसे बांधा है, उस बन्धन को कौन खोल सकता है ? हे कल्याणी, मैं समर में राम का नाश कर तुम्हारे कल्याणार्थ शीघ्र लौट आऊंगा। हे विधुमुखी, अब मुझे जाने दो ।"

मेघनाद का रथ ऐसे घोर रव से पवन-पथ में उठा, जैसे मैनाक-शैल अपने स्वर्ण-पक्ष फैला कर आकाश को उज्ज्वल करता हुआ उड़ता है । वीरेन्द्र ने क्रोध से धनुष को ऐसी टङ्कार दी मानों पक्षेन्द्र मेघों में भयंकर नाद कर रहा हो । लंका कांप उठी । जलधि हिल गया । रावण वीरमद से मत्त होकर सज रहा है । रण में बाजे बज रहे हैं। हाथी चिंघार रहे हैं। घोड़े हिनहिना रहे हैं। पैदल और रथी हुंकार कर रहे हैं। रेशमी ध्वजाएं उड़ रही हैं। काञ्चन-कञ्चूक विभा आकाश तक उठ रही है । इस अवसर पर महारथी मेघनाद द्रुतगति से वहां जा पहुँचा । राक्षस-दल ने वीरवर को देख कर महा गर्व से नाद किया । पुत्र ने पिता के चरणों को नमस्कार

किया और हाथ जोड़ कर कहने लगाः—"हे राक्षस-कुल-पति, मैं ने सुना है कि वैरी राम मर कर फिर जी उठा। हे पिता, मैं तो इस माया को समझ नहीं सकता; किन्तु यदि अनुमति दो तो उस पामर को समूल निर्मूल कर दूँ। उसे घोर शरानल से भस्म कर, उसकी भस्म को वायु-अस्त्र से उड़ा दूँ, अथवा उसे बांध कर तुम्हारे राजपद में ला उपस्थित करूं।"

लंकापति ने कुमार का आलिङ्गन किया और उस का शिर चूम कर मृदु-स्वर में कहाः—"हे वत्स, तुम राक्षस कुल-शेखर हो। तुम लंकेश्वर की एक मात्र आशा हो। मेरा जी नहीं चाहता कि इस काल-समर में तुम्हें वारम्बार भेजूं। हा! विधि मेरे प्रतिकूल है। पुत्र क्या कभी किसी ने सुना है कि शिलायें जल में तैरती हैं और मनुष्य मर कर भी जी उठा करते हैं?

मेघनाद ने वीर-दर्प से उत्तर दिया—"हे राजेन्द्र! राम एक तुच्छ नर है। तुम उससे क्यों डरते हो? मुझ दास के रहते हुए यदि तुम रण में जाओगे तो हे पिता, इस कलंक की घोषणा सारे जगत में हो जायगी। देवेन्द्र हँसेगा और अग्नि रुष्ट हो जायगा। मैं ने राम को दो बार पराजित किया है। हे पिता! एक वार मुझे आज्ञा दो तो देखूं कि अब वह किस प्रकार बच सकता है?"

राक्षस-पति ने कहाः—"मैं ने डर कर बली भाई कुम्भकर्ण को असमय में जगा कर युद्धार्थ भेजा था। देखो, उसका शरीर सिन्धु के तीर ऐसे पड़ा है जैसे गिरिशृङ्ग अथवा तुङ्ग तरु

वज्राघात से गिरता है । तथापि यदि तुम्हें समर में जाना ही है, तो हे वत्स, पहले निकुम्भिला-यज्ञ द्वारा इष्ट-देव की पूजा कर लो । अच्छा, मैं तुम्हें सेनापति-पद पर नियत करता हूं । देखो, अब दिनमणि अस्ताचल को जा रहा है । वत्स ! प्रभात में राम के साथ युद्ध करना होगा ।"

इतना कह कर पिता ने गंगा-जल से कुमार का यथाविधि अभिषेक किया । उसी समय बन्दी-गण आनन्द से वीणाध्वनि करने लगे । राक्षस-पुरी में आनन्द की अश्रुधारा बहने लगी । हे राजसुन्दरी लंके ! उठ कर अब अपना शोक दूर करो । वह देखो राक्षस-कुल-रवि उदयाचल में दिखाई देता है । तुम्हारे दुःख की रात्रि का अब प्रभात होने वाला है । देखो, उस भीम-कर (मेघनाद) की कोदंड-टङ्कार से अमरावती में सुरपति इन्द्र पाण्डुवर्ण हो गया है । देखो उसके तरकश में पाशुपत के से भयानक अस्त्र हैं । गुणीगणों में श्रेष्ठतम गुणी वीरेन्द्र केशरी कामिनी-रञ्जन मेघनाद को देखो ! धन्य है रानी मन्दोदरी । आकाश-दुहिते,* तुम सब से मुक्त कण्ठ से कहो कि अरिन्दम इन्द्रजित युद्ध के लिए सज रहा है । राक्षस कुल-कलंक विभीषण, दण्डकारण्य के समस्त क्षुद्र प्राणी, और रघुपति भयाकुल होकर अब थर थर कांपेंगे ।

राक्षसगण वाद्य बजाने और नाद करने लगे । कनक-लंका "जय-जय" ध्वनि से परिपूर्ण हो गई ।

---

* प्रतिध्वनि

दूसरा सर्ग

सूर्य अस्त हो गया। सन्ध्या आ गई। सरोवर में विरस-वदना नलिनी ने नेत्र बन्द कर लिये। पक्षीगण चहचहाते हुए अपने २ घोसलों में जा रहे हैं। गायें गृहों को लौटने लगीं। चन्द्रमा दिखाई पड़ने लगा। सुन्दर तारों वाली हँसमुख रात्रि आगई। सुगन्धित वायु चारों ओर ऐसे बहने लगी, मानो वह सब के पास जा जाकर धीरे धीरे कह रही है कि अमुक फूल के चुम्बन से उसे अमुक सुगन्धि प्राप्त हुई है। निद्रादेवी आ पहुंची। थके हुए बालक माँ की गोद में विश्राम करने लगे। खेचर, भूचर और जलचर आदि सब प्राणी निद्रादेवी के चरणाश्रम में आश्रय लेने लगे। तारा-रत्नों ने आकाश-मण्डल को पूर्णतया अलङ्कृत कर दिया।

शशिप्रिया * इन्द्रालय में भी आ पहुंची। देवपति इन्द्र हैम-आसन पर देव-सभा में आ विराजे। चारुनेत्रा देवी इन्द्राणी उसकी बाईं ओर बैठ गई। देवेन्द्र के शिर पर मणिमय आभायुक्त राजच्छत्र शोभा पाने लगा। किङ्करी रत्न-खचित चमर को डुला रही है। समीर नन्दन-कानन से गन्ध-मधु लेकर आ रही है। चारों ओर स्वर्गीय बाजे बज रहे हैं। छयों राग और छत्तीस रागनियों ने सङ्गीत आरम्भ कर दिया। सुचारु-हासिनी रम्भा, उर्वशी, चित्र-

* रात्रि

लेखा, सुकेशिनी और मिश्रकेशी आदि सब देवताओं के मनोरञ्जनार्थ छुम छुम करती हुई नृत्य करने लगीं। गन्धर्व-गण स्वर्ण-पात्रों में सुधा-रस दे रहे हैं। कोई कुमकुम, कोई कस्तूरी, कोई केशर, कोई चन्दन और कोई सुगन्धित कुसुम-माला ला रहा है। अमरावती में देवराज इन्द्र त्रिदिव निवासियों सहित सुख-सागर में मग्न हैं। इस अवसर पर अपने सुन्दर रूप की आभा से सुरपुर को आलोकित करती हुई राक्षसकुल-राजलक्ष्मी राज-सभा में आ पहुंची। इन्द्र ने भक्तिपूर्वक रमा के चरणों में प्रणाम किया। पुण्डरीकाक्ष-वक्ष-निवासिनी पद्माक्षी इन्द्र को आशिष देकर स्वर्णासन पर बैठ गई और कहने लगी–"हे सुरपति, आज मैं तुम्हारी सभा में आई हूं, सो ध्यानपूर्वक सुनो।"

इन्द्र ने कहा:–"हे वारीन्द्र-नन्दिनी, इस विश्व में तुम्हारे चरणों की आकाङ्क्षा सब करते हैं। हे कृपामयी, तुम जिस की ओर कृपादृष्टि करती हो, उसका जन्म सफल हो जाता है। देवि, मेरे किस पुण्य-फल से आज इस दास को तुमने कृतार्थ किया है, सो मुझ से कहो।"

"हे सुरनिधि, मैं चिरकाल से कनक-लङ्का में वास करती हूं। राक्षस-राज रावण विविध रत्नों और यत्नों से मुझे पूजता है किन्तु इतने दिनों के उपरान्त विधि उसके प्रतिकूल हो गया है। पापी अपने कर्म-दोष से सवंश डूबने वाला है। तथापि हे देव, मैं उसे छोड़ नहीं सकती। जबतक बन्दी के लिए कारागार का द्वार नहीं खुलता तबतक वह बाहर कैसे निकल सकता है? जबतक रावण जीता रहेगा, तबतक मैं उसके घर की बन्दी रहूंगी।

हे वृत्रविजयी, रावण के पुत्र मेघनाद को तुम अच्छी तरह जानते हो। लङ्का में अब एक वही वीर है। शेप सब इस समर में मारे गये। दशानन ने उसे सेनापति-पद के लिए चुना है। विक्रम-केशरी-शूर कल रामपर आक्रमण करेगा। राम देवप्रिय हैं। राम की कल कैसे रक्षा हो, यह तुम सब को सोचना चाहिए। मैं तुम से सच कहती हूं कि यदि दम्भी मेघनाद ने निकुम्भिला-यज्ञ पूर्ण करके युद्ध आरम्भ किया, तो वैदेही-नाथ विपम सङ्कट में पड़ेंगे। हे देवेन्द्र, मन्दोदरी-नन्दन जगत में अजेय है। जैसा विहङ्ग-कुल में विनता-नन्दन गरुड़ है वैसा मन्दोदरी-नन्दन मेघनाद राक्षस-कुल में है।"

इतना कह केशव-प्रिया रमा चुप हो गई। अहा, मानों सुमधुर नाद से चित्त को आनन्दित कर बिनोदकारी वीणा नीरव हो गई! कमला की वाणी सुन सब अपने २ काम को ऐसा भूल गये जैसे वसन्त-काल में पक्षीगण गुञ्जरित कुञ्ज में पिकवर की ध्वनि सुन कर नीरव हो जाते हैं।

सुरेश्वर ने कहा:—"हे माता, इस घोर विपद में विश्व-नाथ के विना राम की रक्षा और कौन कर सकेगा? रावण-नन्दन रण में दुर्वार है। गरुड़ से नाग इतना नहीं डरता जितना मैं मेघनाद से डरता हूँ। यह वज्र जिससे वृत्रासुर का शिर चूर्ण हो गया था, इस महाबली ने अपने अस्त्र-बल से इसे भी पराजित कर दिया। इसी लिए आज वह इन्द्रजित कहलाता है। सर्व-शुचि शिव के वर से ही वीरवर मेघनाद सर्वजयी हुआ है। मुझ दास को आज्ञा दो तो मैं शीघ्र ही कैलाश जाऊं।"

विष्णु-प्रिया वारीन्द्र-नन्दिनी ने कहाः—"हे सुरनाथ, जाओ, शीघ्र जाओ। कैलास-शिखर पर चन्द्रशेखर के चरणों में यह सब बातें निवेदन करना। उनसे कहना कि सती वसुन्धरा सदा रोया करती हैं। अनन्त! अब उसका भार नहीं सह सकता। वह बिलकुल थक गया है। राक्षस-पति के समूल निर्मूल न होने से भवतल रसातल को चला जायगा। शङ्कर मुझ से बहुत प्रेम करते हैं। उन से कहना कि वैकुण्ठ को छोड़ कर यह चिरकालसे लंका की बन्दी है। वह सदा तुम्हारा ध्यान करती है, किन्तु न मालूम उसके किस दोष से तुम उसका स्मरण कभी नहीं करते। हे अदिति-नन्दन, उनसे पूछना कि ऐसा कौन पिता है जो दुहिता को पति-गृह से दूर रखता हो! यदि त्र्यम्बक* न मिलें तो अम्बिका के चरण-कमलों में यह सब निवेदन करना।"

इतना कहकर हरि-प्रिया शशिमुखी इन्द्र से विदा हुई। सुकेशिनी केशव-वासना अम्बर† पथ से स्वच्छ आकाश को उज्ज्वल करती हुई नीचे ऐसे उतरी जैसे कोई चतुर गोताखोर गम्भीर जल-सागर में डुबकी लगाता है।

मातलि‡ रथ ले आया। शचीकान्त ने शची की ओर देखकर मधुर स्वर से कहाः—"हे देवि, तुम मेरे साथ चलो। हे ललने, परिमल-सुधा के साथ होने से पवन का दुगना आदर होता है। प्रस्फुटित कमल के गुण से मृणाल की शोभा बढ़ जाती है!" पति के वचनों को सुनकर शची हँसी और पति का हाथ पकड़ कर रथ पर चढ़ गई।

---

* त्रि = तीन, अम्बक् = आंख अर्थात महादेव † आकाश ‡ इन्द्र का सारथी।

रथ स्वर्ग के हैम-द्वार पर शीघ्र पहुँचा । द्वार मधुर निनाद से अपने आप खुल गया । देवयान वेग से बाहर निकल कर आकाश में शोभायमान हुआ । सारा जगत विस्मित होकर सोचने लगा कि कदाचित् भुवनभास्कर उदयाचल में उदय होरहा है । पक्षिगण कलरव करने लगे, पद्म खिल उठे, कुमुद बंद होगये । लज्जाशीला कुलवधू ने कुसुम-शय्या त्याग कर अपना कमल-वदन ढक लिया ।

कैलाश-शिखर मानसरोवर के समीप शोभायमान है । उसके शिर पर शंकर का आभामय भवन ऐसी शोभा पा रहा है जैसे शिखि-पुच्छ-चूड़ा माधव के शिर पर । पर्वत श्याम-तरुराजी से युक्त होरहा है । स्थान स्थान पर निर्झर-झरित शुभ्र जलराशि ऐसी मालूम होती है मानो श्याम अङ्ग में श्वेत चन्दन लगाया गया हो ।

रथ से उतर कर सुरेश्वर और सुरेश्वरी ने आनन्द-भवन में प्रवेश किया । राजराजेश्वरी अम्बिका स्वर्णासन पर बैठी है । विजया चमर डुला रही है । जया राजछत्र लिए है। कवि *भव-भवन के विभव का वर्णन किस प्रकार कर सकता है ? हे कल्पनाशील व्यक्तिगण, आप अपनी कल्पना-शक्ति से भव-भवन के विभव की कल्पना कीजिए । महेन्द्र और इन्द्राणी ने महा शक्ति के पद-कमलों में महा भक्ति-भाव से प्रणाम किया । अम्बिका ने आशिष देकर पूछा:-" हे देव, अपना कुशल-समाचार कहो । तुम दोनों आज किस लिए यहां आये हो?"

इन्द्र ने हाथ जोड़ कर कहा," हे माता, तुम इस अखिल जगत में क्या नहीं जानती हो । देवद्रोही लंकापति ने विग्रह से आकुल होकर मेघनाद को सेनापति-पद पर नियत किया

---

* शिव ।

है। कल सवेरे वह इष्टदेव की पूजा करके और मनोनीत वर लेकर रण में प्रवेश करेगा। हे करुणामयी, तुम से उसका पराक्रम छिपा नहीं है। हे भगवती, राक्षसकुल-राजलक्ष्मी ने मेरे धाम में आकर मुझ दास को यह सम्वाद दिया है। हरिप्रिया ने कहा है कि, "वसुन्धरा रोती है और अब वह यह असह्य भार नहीं सह सकती। विश्वधर शेष भी क्लान्त हो गया है। वह कनक-लंका को छोड़ने के लिए सर्वदा चञ्चल रहती है। हे देवि, अन्नदा ने तुम्हारे चरणों में यह सम्वाद निवेदन करने के लिए मुझ दास को आदेश दिया है। वीर रघु-कुल-मणि देव-कुल-प्रिय हैं। किन्तु देव-कुल में ऐसा कौन वीर है जो रण-भूमि में रावण के साथ लड़सके? माँ, मेरा विश्वव्यापी वज्र अब समर में निस्तेज है। इसी लिए मेघनाद राक्षस-जगत में इन्द्रजित नाम से विख्यात होगया है! हे कात्यायनी, राम की रक्षा किस उपाय से होगी। तुम्हारी कृपा बिना दुरन्त* रावण पृथ्वी को कल राम रहित कर डालेगा।"

देवी ने उत्तर दियाः—"रावण शिवभक्तों में श्रेष्ठतम है। त्रिशूली उससे बड़ा स्नेह करते हैं। हे सुरेन्द्र, क्या कभी मुझ से उसका अमंगल होना सम्भव है? तापसेन्द्र आजतक तप में मग्न हैं, इसलिए लंका की ऐसी दुर्गति होरही है।"

इन्द्र ने हाथ जोड़ कर फिर कहाः—"निशाचर-पति परम अधर्माचारी और देव-द्रोही है। हे नगेन्द्र-नन्दिनी, तुम स्वयम् विवेचना करो। हे माता! जो महा दरिद्र का धन हरता है क्या उस पर कृपा करना उचित है? सुशील राघव ने पिता की प्रतिज्ञा के पालनार्थ सुख-भोग त्याग कर भिखारी के भेष में

* दुरन्त = जिसका मरण कठिन है।

निबिड़-कानन में वास किया था। उनके पास केवल एक अमूल्य रत्न था जिसे वह महान यत्न से रखते थे। दुष्ट मायावी रावण ने मायाजाल फैलाकर उस रत्न को हर लिया। हाय माँ, इस बात का स्मरण कर मन कोपानल से दग्ध हो जाता है। त्रिशूली शंकर के वर से बली राक्षस देवगण को तृण समान समझता है। यह पामर पर-धन और पर-दारा के लोभ में सदा डूबा रहता है। हे दयामयि, यह समझ में नहीं आता कि उस मूढ़ पर तुम क्यों दया करती हो ?" इतना कह कर इन्द्र चुप होगया।

तब वीणा-वाणी सुरेश्वरी ने मधुर स्वर से कहाः-"हे देवी ! वैदेही के दुःख से किसका हृदय विदीर्ण नहीं होता ? वह रूपवती सती अशोकवन में बैठी हुई रात दिन रोती है, और कुञ्जवन-प्रिय पक्षी की भांति पिञ्जर में रहती है। हे माता ! वह विधुवदना पति-विरह से कितनी मनोवेदना सहन करती है, यह आपको विदित है। हे देवी ! यदि तुम इस पाखण्डी राक्षस-नाथ को दण्ड न दोगी तो फिर उसे कौन दण्ड देगा ? हे शशांक-धारणी ! मेघनाद का नाश कर और वैदेही को वैदेही-रञ्जन से पुनः मिला कर इस दासी का कलंक मिटादो। मां, लोगों के मुख से यह सुनकर कि राक्षसेश्वर ने देवेश्वर को रण में पराजित कर दिया, मैं लज्जा से मर जाती हूं।"

उमाने हँसकर कहाः-" हे शचि ! क्या देवेन्द्र रावण से द्वेष करते हैं ? तुम मेघनाद के नाश के लिए इतनी चिन्तित क्यों हो ? तुम दोनों लंका के विध्वंस के लिए मुझ से इतना अनुरोध क्यों कर रहे हो ? इस कार्य को पूरा करने की साम-

र्य्य मुझ में नहीं है। विरुपाक्ष राक्षस-कुल के रक्षक हैं। उनके विना जगत में इस कार्य को कोई नहीं कर सकता है? हे देवराज! आज वृषध्वज योग में मग्न हैं। योगीन्द्र घोर जङ्गल के अन्दर योगासन नाम के महा भयंकर शृङ्ग पर एकान्त में आसीन हैं। तुम उनके पास कैसे जाओगे? पक्षीन्द्र गरुड़ भी वहां तक नहीं उड़ सकता।"

अदितिनन्दन ने विनीत भाव से कहा:—"हे मुक्तिदायिनी जगदम्बे! तुम्हारे विना और किसकी शक्ति है जो त्रिपुरारि के पास जाये? हे देवी! राक्षस-कुल का विनाश कर त्रिभुवन की रक्षा करो। मां, धर्म की संस्थापना और समृद्धि द्वारा वसुधा के भार को हलका कर वसुन्धरा-धर वासुकि को स्थिर करो।"

दैत्य-रिपु ने इस प्रकार सती की स्तुति की।

इस अवसर पर सहसा कैलास-पुरी गन्धामोद से भर गई। चारों ओर शङ्ख-घण्टा-ध्वनि और मंगलाचरण होने लगा। यह सब ऐसा मृदु मालूम होता था कि मानों दूर कुञ्ज-वन में पिककुल मिलकर गायन कर रहा है। कनकासन हिल उठा। भवेश-भाविनी ने मधुर स्वर से अपनी सखी से पूछा:—"अरी विधुमुखि, इस असमय में मेरी पूजा कौन कर रहा है?"

सखी ने हँस कर उत्तर दिया:—"हे देवी! दाशरथी राम जलपूर्ण घट को सेंदुर से अङ्कित कर तुम्हारे सुन्दर पद-युग में नीलोत्पलाञ्जलि* से तुम्हारी पूजा और वन्दना कर रहा है। हे अभये! उसे अभय प्रदान करो। हे तारिणि! रघुकुल श्रेष्ठ कौशल्यानन्दन तुम्हारा परम भक्त है।"

---

* कमल

राजराजेश्वरी ने कनक-आसन त्याग कर सती विजया से कहाः—"विजये ! तुम देव-दम्पती की यथाविधि सेवा करो । मैं विकट शिखर पर योगासन में आसीन धूर्जटि के पास जाऊँगी ।"

इतना कह कर गज-गामिनी दुर्गा ने हैम-गृह में प्रवेश किया । सुन्दरी विजया ने देवेन्द्र और देवेन्द्राणी के साथ सम्भाषण कर उन्हें स्वर्णासन पर बैठाया । परम आह्लाद से दोनों ने महादेव का प्रसाद ग्रहण किया । जया ने शची के गले में तारा सम उज्ज्वल फूल-माला डाली और सुरुचि और सुविकसित कुसुम रत्न-राजी केश-बन्धन में लगा दी । चारों ओर वाद्य होने लगा । वामादल गाने और नाचने लगा । त्रिभुवन मोहित हो गया । सोये हुए शिशु उस मधुर ध्वनि को स्वप्न में सुन कर मां के पास हँसने लगे । निद्राहीन विरहिनी बालायें यह सोच कर कि द्वार पर प्रिय-पद शब्द हो रहा है, चौंक उठीं ! कोयल वन में नीरव हो गई । योगी-गण यह सोच कर कि इष्टदेव हमें दर्शन देने के लिए पधारे हैं और कहते हैं "वर मांगो" अपने २ स्थान पर खड़े होगये ।

भवानी स्वर्ण-गृह में आकर सोचने लगीं कि आज मैं महेश से कैसे मिलूं । सती ने क्षण भर सोच कर रति का स्मरण किया । परिमलमय वायु निमेष मात्र में उमा की इच्छा को वहां ले गई, जहां मदनमोहिनी वरागना मनमथ के साथ कुञ्ज-वन में सुख से विहार कर रही थी । रति का हृदय ऐसा कम्पायमान हो गया जैसे अँगुली के स्पर्श से वीणा का तार । मधुमती कामवधू द्रुतगति से कैलास-शिखर पर आ पहुंची । जैसे निशान्तकाल में सरोजिनी खिल कर सूर्योदय की सम्वाददात्री दूती ऊषा के चरणों में प्रणाम

करती है, वैसे मदन-प्रिया ने हर-प्रिया के चरणों में प्रणाम किया! अम्बिका ने रति को आशिष् दिया और हँस कर कहाः—

"हे विधुमुखी! योगीन्द्र योगासन में बैठे हुए तप में मग्न हैं। मैं उनकी समाधि को कैसे भङ्ग करूँ?" सुकेशिनी रति ने प्रणाम कर कहाः—"हे देवी! मोहिनी-मूर्ति धारण करो। आज्ञा हो तो नाना प्रकार के आभरण लाकर तुम्हारे सुन्दर शरीर को सजा दूँ। पिनाकी तुम्हें देख कर ऐसे मोहित हो जायंगे जैसे वसन्तऋतु में ऋतुपति वनस्थल की कुसुम-कुन्तला को देख कर मोहित हो जाता है।"

इतना कह कर रति ने सुवासित तेल लगा कर मनोहर केश-विन्यास कर दिया। युवती ने हीरे, मुक्ता, और मणि-खचित विविध भूषण, चन्दन, कुमकुम, और कस्तूरी आदि सुगन्धियाँ और रत्न-संकलित आभायुक्त पट-वस्त्रों को ला उपस्थित किया। शशिमुखी ने महावर से पैरों को सहर्ष रञ्जित किया। नगेन्द्र-बाला ने भुवन-मोहिनी मूर्ति धारण कर ली। दुर्गा का रूप रसाल-अर्जित हेम-कान्ति के समान देदीप्यमान हो गया। देवी ने अपने चन्द्रानन को दर्पण में ऐसा देखा जैसे विमल सलिल में प्रफुल्लनलिनी अपनी प्रस्फु-टित कान्ति को देखती है। हर-प्रिया ने मदन-प्रिया की ओर देख कर कहा, "सती अब अपने प्राणनाथ को बुलाओ।" मदन-वाञ्छा ने मदन को ऐसे बुलाया जैसे कोयल ऋतुवर को बुलाती है। फूल-धनुधारी ऐसे आया जैसे प्रवास में प्रवासी स्वदेश की सङ्गीत-ध्वनि सुन कर उल्लास से आता है।

शैलसुता ने कहाः—"हे मनमथ! तुम मेरे सङ्ग शीघ्र

चलो। मैं वहां जाऊँगी जहां योगिपति इस समय ध्यान में मग्न हैं। आनन्दमय मायानन्दन मदन ने अभया को भय से उत्तर दियाः—"हे देवी! मुझ दास को ऐसी आज्ञा क्यों देती हो? मां, पूर्व कथा के स्मरण मात्र से मेरा प्राणान्त हुआ जाता है। हे सती! जब आपने मूढ़ दक्ष के दोष से देह त्याग कर हिमाद्रि के गृह में जन्म लिया था, तब विश्वनाथ ने विश्व का भार उतार कर ध्यान-योग आरम्भ किया था। उस समय देव-पति ने मुझ दास को योगीश्वर का ध्यान भङ्ग करने का आदेश दिया था। जिस जगह विश्वेश्वर, शंकर तप कर रहे थे वहां जाकर मैंने फूल-धनु से फूल-शर को उन पर छोड़ा। जैसे सिंह भीषण गर्जन कर गजराज पर सहसा आक्रमण करता है, वैसे ही, हे भवेश्वरी! भवेश्वर के भाल-स्थित अग्नि ने क्रोध में आकर मेरा ग्रास कर डाला था। मां, अग्नि से जल कर जितनी यन्त्रणा मैंने सहन की थी उस का वर्णन कैसे करूं? मैं हाहाकार-रव से इन्द्र, चन्द्र, पवन, और सूर्य सब को पुकारा किया किन्तु कोई भी न आये थे। बस, मैं शीघ्र ही भस्म हो गया था! हे क्षेमङ्करी! तुम्हारे चरणों में यह विनती है कि मुझ दास को क्षमा करो। मैं भवेश के भाव मात्र से भयभीत हो कर भग्नोद्यम हो जाता हूं।"

शंकरी ने मदन को आश्वासन दिया और हँस कर कहाः—"हे अनङ्ग! तुम मेरे साथ आनन्द से निर्भय होकर चलो। मेरे वर से तुम जीवित रहोगे। जिस अग्नि ने उस समय अपने तेज से तुम्हें जलाया था, आज वही तुम्हारी ऐसी पूजा करेगा, जैसे प्राणनाशकारी विष रसायन विद्या द्वारा औषधि बन कर प्राण की रक्षा करता है।"

काम ने उमा के चरणों में प्रणाम कर के फिर कहा:—"हे अभये! तुम जिसे अभय दान करती हो क्या त्रिभुवन में उसे कोई भय हो सकता है? किन्तु हे नगेन्द्रवन्दिनी! आप इस मोहिनी वेश में मन्दिर से बाहर कैसे जाओगी? इस रूप-माधुरी को देख कर मुहूर्त्त मात्र में सारा जगत मस्त हो जायगा। जब सुरासुर वृन्द ने सिन्धु मथ कर अमृत प्राप्त किया था और दुष्ट दिति-सुतों ने देवताओं के साथ सुधा-मधु के लिए विवाद किया था और श्रीपति मोहिनी मूर्ति धारण कर के आये थे, तब छद्मवेश हृषीकेश को देख कर मुझ दास के शर से सब ज्ञानहीन हो गये थे। देवता और दैत्य अधरामृत की आशा में अमृत को भूल गये थे। वेणी को देख कर नागों ने लज्जा से शिर नीचा कर लिया था। मन्दराचल पर्वत उच्च कुचयुग को निहार कर अचल हो गया था! हे देवी! उस बात को स्मरण कर मुख पर हँसी आती है। जब ताम्र पर मलम्बा अम्बर इतनी शोभा धारण कर सकता है तो विशुद्ध काञ्चन-कान्ति कितनी मनोहरता धारण करेगी।"

मदन की बातों को सुनते ही मायामयी अम्बिका ने माया से अपने चारु अवयवों को ऐसे ढक लिया जैसे नलिनी दिन के अन्त में अपने चन्द्रवदन को ढक लेती है, अथवा जसे अग्नि-राशि भस्म-राशि में अपने तेज को छिपा लेती है; सुहासिनी हस्ति-दन्त-रचित गृहद्वार से मेघावृत ऊपा की भांति बाहर आई। उसके साथ हाथ में फूल-धनु लिए हुए मन्मथ है। उसकी पीठ पर फूलों के तीक्ष्ण बाणों से भरा हुआ तरकश ऐसा प्रतीत होता है मानो कण्टकमय मृणाल में नलिनी खिली है। भुवन मोहिनी देवी कैलाश के भीषण शिखर

के योगासन नामी विख्यात स्थान पर गज-गति से पहुंची। उस समय गम्भीर गह्वर के वद्ध जल-दल का भैरव निनाद ऐसा नीरव हो गया, जैसे तूफान के बाद समुद्र नीरव होजाता है। मेघदल ऐसे भागे जैसे ऊषादेवी के हास्य से तम भागता है। उमादेवी ने अपने सामने जटाधारी तपस्वी को ध्याना-वस्थित देखा। उनकी देह विभूति-भूषित है। नयन मुद्रित हैं और वाह्य ज्ञान-हीन (समाधिस्थ) होकर तप में मग्न है।

सुचारुहासिनी ने हँस कर मदन से कहा—"हे देव, अब विलम्ब क्यों करते हो? फूल-शर छोड़ो"। देवी के आदेश से मदन ने घुटने टेके और धनुष टङ्कार कर सम्मोहन-शर से उमेश को बेध दिया। शूलपाणि चौंक पड़े। उनके मस्तक का जटाजूट ऐसे हिला जैसे गिरि-शिर पर स्थित तरुराजी भूकम्प से हिल जाती है। प्रभु अधीर हो गये। भालका भानु उज्वल तेज से जल उठा! फूल-धनुधारी भयाकुल होकर भवानी के वक्षस्थल में ऐसे आ छिपा, जैसे जब घन-दल गम्भीर निर्घोष से गर्जता है और विद्युत अपने कालानल-तेज से नेत्रों को झुलसता है, तब केशरी-किशोर भय से केशरी की गोद में छिप जाता है। जब गिरजापति ने आखें खोली तो गिरजा ने माया के आवरण को त्याग दिया।

पशुपति ने दुर्गा के मोहनी रूप से मोहित होकर हर्षपूर्वक कहाः—"हे गणेन्द्र-जननि, इस विजन-स्थल में तुम्हें अकेली क्यों देखता हूं? हे मृगेन्द्र शंकरि, तुम्हारी किंकरी विजया और जया कहां है?" सुचारुहासिनी उमा ने हँस कर उत्तर दियाः—"हे योगीन्द्र, आप मुझ दासी को भूल कर विरल

वन में वास करते हो, इसीलिए, हे नाथ, श्री चरणों के दर्शन की आशा से यहां आई हूं। क्या पतिपरायणा रमणी सहचरी को साथ लेकर पति के पास जाया करती है ? हे प्रभु, चक्रवाकी बड़े सवेरे अकेले ही अपने प्राण-कान्त के पास जाती है !"

शंकर ने शंकरी को बड़े आदर से मृगासन पर बैठा लिया। उसी समय चारों ओर फूल खिल गये। भँवर मकरन्द लोभ से मत्त होकर आ गये। मलय-वायु बहने लगी। कोयल गाने लगी। निशा-शिशिर से धुले हुए पुष्पों ने शङ्कर को ढक लिया। मदन ने कुसुम-धनु टंकार कर अपना शर छोड़ दिया। त्रिशूली प्रेमामोद से मत्त हो गये। विभावसु* हँस कर छिप गया, और लज्जा रूपी राहु ने चन्द्रमा को ग्रास कर लिया। महादेव ने मोहन-मूर्त्ति धारण कर मोहिनी को मोहित किया और हँस कर कहने लगेः—"हे देवी! मैं तुम्हारे मन की बात जानता हूं। मुझे मालूम है कि सुरेश्वर और सुरेश्वरी कैलाश-सदन में क्यों आये हैं और रघुमणि असमय में तुम्हारी पूजा क्यों कर रहे हैं। रावण मेरा परम भक्त है, किन्तु वह दुष्टमति अब अपने कुकर्मों से अपनी अवनति कर रहा है। हे महेश्वरी! उसकी दुर्दशा का स्मरण करके मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है। हे देवी! देव अथवा मानव, किसी की सामर्थ्य नहीं जो पूर्वकृत कर्म-फल की गति को रोक सके ? हे उमा! काम को देवेन्द्र के पास भेजो और उसे (इन्द्र को) माया देवी के निकेतन में

* कपालस्थ अग्नि।

शीघ्र जाने का आदेश करो। माया के प्रसाद से वीर लक्ष्मण मेघनाद का वध कर सकेगा।"

मीनध्वज यह सुनते ही वहां से चल दिया। विधुमुख मदन-मोहिनी पति के विरह से अश्रुनयना हुई हेम-द्वार पर खड़ी है। इतने में मधु-सखा (कामदेव) वहां आ पहुंचा। उसने उल्लास से दोनों हाथ फैला कर और ललना को आलिङ्गन-पाश में बांध कर प्रेम-सम्भाषण किया। उसके अश्रुबिन्दु ऐसे सूख गये जैसे उदयाचल में सूर्योदय से कमल पर पड़ी हुई शिशिर-नीर की बूंदें सूख जाती हैं। रति अपने प्राणधन को पाकर मुख से मुख मिला प्रिय भाषण करने लगी—"हे नाथ! मुझ दासी के पास शीघ्र आकर तुमने मेरी प्राण-रक्षा की है। मैं कितने सोच में थी सो किस से कहूं? मैं पूर्व-कथा स्मरण कर वामदेव के नाम से सदा कांपती हूं। शूलपाणि अतिशय हिंसक हैं। हे प्राणेश्वर! तुमको मेरी शपथ है; अब तुम उनके पास कभी न जाना।"

पञ्चशर ने हँस कर उत्तर दियाः—"हे सुन्दरी! छाया के आश्रय में रहकर भास्कर से कौन डरता है? चलो, अब देवेन्द्र के पास चलें।"

मनमथ ने इन्द्र के पास पहुंच कर उसे नमस्कार किया और महादेव की आज्ञा कह सुनाई। देवराज रथ पर चढ़ कर द्रुत गति से माया के मन्दिर को चला। अग्निवत् तेजवान् घोड़े आकाश को स्पर्श करते हुए इतनी तेजी से चले कि उन की गर्दन के बाल हिलते हुए नहीं जान पड़ते हैं। चमर स्थिर है। रथ-चक्र गम्भीर निर्घोष से मेघ-दल को चूर्ण करते जाते हैं। थोड़ी देर में बली सहस्राक्ष माया के वासस्थान के निकट

पहुँच गया। और रथ को त्याग कर माया के मन्दिर में प्रवेश किया। इन्द्र ने जो कुछ वहां देखा, उसका वर्णन कौन कर सकता है? शक्तीश्वरी सूर्य की किरणों से उत्पन्न हुई आभा से युक्त स्वर्णासन पर बैठी हैं। इन्द्र ने प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर कहाः—"हे विश्वविमोहिनी, मुझ दास को आशिष दो।" देवी ने आशिष देकर पूछाः—"हे अदिति-नन्दन, कहो, किस लिए आये हो?"

देवपति ने उत्तर दियाः—"हे महामाया, मैं महेश के आदेश से तुम्हारी शरण में आया हूं। मुझ दास को बताइये कि कल सुमित्रा-नन्दन दशानन-पुत्र को किस कौशल से जीत सकेगा! महेश्वर ने कहा है कि तुम्हारे प्रसाद से ही वीर लक्ष्मण मेघनाद का नाश कर सकेगा।"

देवी ने थोड़ी देर सोच कर इन्द्र से कहाः—"हे सुर-कुल-पति, जब दुरन्त तारकासुर ने तुम्हें हराकर स्वर्ग छीन लिया था, तब देवकुल-वल्लभ सेनापति कार्तिक ने पार्वती के गर्भ में जन्म लिया था। वृषभ-ध्वज ने स्वयम रुद्र-तेज से अस्त्र बना कर दानव-राज को वध करने के लिए वीर को सजाया था। देव, देखो यह ढाल सुवर्ण-मण्डित है और इस तलवार में स्वयम् यमराज वास करते हैं। हे देवेन्द्र, देखो यह अक्षय तरकश भयंकर शरों से ऐसा पूर्ण है जैसे विषधारी सर्पों से नाग-लोक! हे देव, ज़रा इस धनुष को देखो।" इन्द्र ने धनुष की कान्ति देखते ही हँस कर कहाः—"मुझ दास का रत्नमय धनुष इसके सामने तुच्छ है। यह श्रेष्ठ ढाल सूर्य-मण्डल की भाँति नेत्रों में चकाचौंध कर रही है। अग्नि शिखा-सम कृपाण महा तेजस्कर है! हे मात, क्या जगत में

ऐसा दूसरा तरकश नहीं है ?" माया देवी ने फिर कहाः—"हे देव, इन अस्त्रों के बल से ही षड़ानन ने तारक का नाश किया था। हे बली. मैं तुम से सत्य कहती हूँ कि इन अस्त्रों से मेघनाद की मृत्यु होगी, किन्तु त्रिभुवन में ऐसा कोई वीर नहीं है जो न्याय-युद्ध से मेघनाद का वध कर सके। तुम इन अस्त्रों को रामानुज के पास भेज दो। कल मैं स्वयम् लङ्कापुरी जाकर संग्राम में लक्ष्मण की रक्षा करूंगी। हे सुरदल-निधि, अब तुम सुर-देश को जाओ। कल जब ऊषा-आगमन से फूल खिलेंगे और पूर्व-दिक् उज्ज्वल होगा. तब वीरेन्द्र-केशरी लक्ष्मण तुम्हारे चिर-त्रास शत्रु को मार कर तुम्हें त्रास-हीन करेगा और लंका का पंकज-रवि अस्ताचल में डूब जायगा।"

इन्द्र ने आनन्द से देवी की वन्दना की और अस्त्र लेकर अपने लोक को चल दिया। इन्द्र-लोक में पहुँच कर इन्द्र ने सभास्थल में कनक-आसन पर बैठ कर शूर चित्ररथ से कहाः—"हे महाबली, तुम इन अस्त्रों को बड़े यत्न से लंका में लेजाओ। सुमित्रा-नन्दन-केशरी कल समर में माया के प्रसाद से मेघनाद का वध करेगा। किस प्रकार से उसे वध करना होगा, सो मायादेवी उनसे कहेंगी। हे गन्धर्व-कुल-पति, प्रभु राम से कह देना कि इन्द्रलोक-निवासी उनके मंगलाकांक्षी हैं और हर-प्रिया पार्वती स्वयम् आज उन पर प्रसन्न हैं। हे सुमति, उन्हें अभय प्रदान करना। रावणि के मर जाने से रावण अवश्य मरेगा। वैदेही-मनोरञ्जन रघुकुल-मणि वैदेही को पुनः प्राप्त करेंगे। हे रथिवर, मेरे रथ पर चढ़ कर जाओ। कदाचित् राक्षसगण तुम्हें लंकापुरी में देखकर विवाद करें, अतएव

मैं मेघदल को गगनाच्छादित करने के लिए आज्ञा दूंगा और प्रभञ्जन को बुलाकर क्षण काल के लिए वायुकुल को छोड़ देने के लिये कहूंगा। चपला बाहर निकलकर चमकने लगेगी और वज्र के गम्भीर नाद से गगन परिपूर्ण हो जायगा।

चित्ररथ ने देवेन्द्र-पद में प्रणाम किया और सावधानी से अस्त्र लेकर मृत्युलोक को चल दिया।

उसी समय इन्द्र ने प्रभञ्जन को बुलाकर कहाः—"हे वायु-पति, लङ्कापुरी में प्रलयकारी आंधी शीघ्र चलाओ। कारावद्ध समस्त वायु-दल को शीघ्र छोड़ दो और मेघदल को साथ लेकर अपने वैरी सिन्धु से क्षणकाल के लिए खूब द्वन्द्व करो। बन्धन के टूट जाने पर जैसे सिंहिनी उल्लास से भागती है, वैसे वायुपति उस ओर भागा, जहां तिमिरागार गिरि-गर्भ में पवन-दल बन्द था। पवनों को वायुपति के आगमन का घोर कोलाहल बहुत दूर से सुनाई पड़ा। उन्होंने देखा कि पर्वत इस प्रकार हिल रहे हैं मानो वे अपने पराक्रम से प्रबल प्रभञ्जन के रोकने में असमर्थ हैं। वायुपति ने स्पर्श मात्र से शिलामय द्वार को खोल दिया। पवन हुङ्कार करते हुए ऐसे वेग से बाहर निकले जैसे कोई जलराशि किसी विपुल पुल को तोड़ती हुई गम्भीर घोष से बहती है। पृथ्वी कांप गई। समुद्र गरज उठा। कल्लोलित तरङ्ग-निकर तुङ्ग-शृङ्गधर का आकार धारण कर पवन-दल के संग रण-रङ्ग में मत्त होगया। मेघदल गम्भीरनाद करते हुए चारों ओर से धावित होगये। क्षणप्रभा हँसने लगी। वज्र कड़कड़ाने लगे। तारा-नाथ तारादल सहित छिप गया। मेघ वैद्युतानल-राशि को चमकाते हुए चारों ओर छागये। वनों में वृक्ष गिरने लगे।

आकाश में प्रबल आंधी चलने लगी। सृष्टि को डुबाने वाली वृष्टि होने लगी। भयानक शिलावृष्टि का आरम्भ हो गया। राक्षस भयभीत होकर अपने अपने घरों में भागने लगे।

चित्ररथ सहसा राघवेन्द्र के पास पहुंचा। दूत की देह पर राज-आभरण सूर्य की भांति चमकते थे। तेजोराशि-सम कटि-बन्धन कटि में शोभित है। उसमें चारों ओर आभा फैलाने वाली तलवार लटक रही है। कवि उसकी तूण, धनु, चर्म, वर्म, शूल और किरीट की स्वर्ण-मयी दीप्ति का वर्णन कैसे कर सकता है? सभासदों के नयन देव-विभा से मुँद गयें और स्वर्गीय सौरभ से सारा देश भर गया।

रघुवर ने सम्मानपूर्वक देव-दूत के चरणों में प्रणाम करके पूछा:—"हे देवलोकवासी, नन्दन-कानन को छोड़ कर आज तुम यहां क्यों आये हो? देव के बैठाने के योग्य मेरे पास स्वर्णासन नहीं है। तुम्हें क्या दूं? तथापि यदि मुझ दास पर कृपा हो तो इस कुशासन पर विराजिए।" देव-दूत आशिष दे कर कुशासन पर बैठ गया और मधुर स्वर से कहने लगा;—

"हे दाशरथि, मेरा नाम चित्ररथ है। मैं देवेन्द्र का चिर-अनुचर हूं और अहर्निशि उनकी सेवा करता हूं। मेरे अधीन गन्धर्व-कुल है। मैं इस पुरी में देवेन्द्र के आदेश से आया हूं। देवेश और देव-कुल तुम्हारा मंगल चाहते हैं। हे राघव, इन अस्त्रों को जिन्हें तुम देख रहे हो, देवराज ने तुम्हारे अनुज के लिए भेजा है। माया महादेवी प्रभात में प्रगट हो कर बताएंगी कि कल किस कौशल से वीर लक्ष्मण

मेघनाद का नाश कर सकेगा। हे रघुकुल-मणि! तुम देव-कुल के प्रिय हो। अभया स्वयम् तुम पर प्रसन्न हैं।"

राम ने कहा:—"हे गन्धर्व-श्रेष्ठ, इस शुभ सम्वाद से मुझे बड़ा आनन्द हुआ है। देव. मैं अज्ञ नर हूं; अतएव आप ही बताइये कि मैं अपनी कृतज्ञता कैसे प्रकाशित करूं?"

दूत ने हंस कर कहा:—"हे रघुनन्दन, देव-प्रति कृतज्ञता तो दान, इन्द्रिय-दमन, सर्वकालीन धर्मानुष्ठान और सत्य-निष्ठा से प्रगट होती है। यदि उपासक वास्तव में धार्मिक नहीं है, तो देवगण चन्दन, कुसुम, नैवेद्य और पट-वस्त्र आदि समस्त बाह्य सामग्री को तुच्छ समझते हैं। मैं तुम से यह सार वस्तु कहता हूं।"

रामचन्द्र ने प्रणाम किया और चित्ररथ आशिष देकर देवरथ में देवपुर को चल दिया। आंधी रुकी और समुद्र शान्त हो गया। चन्द्रमा तारादल सहित कनक-लङ्का में फिर निकल आया। कौमुदिनी* और कुमुदिनी × ने आनन्द से हँस कर तरल सलिल में पुनः प्रवेश किया और जल-क्रीड़ा करने लगे। रणक्षेत्र में शवाहारी शृगाल आ पहुंचे। गृद्धिनी, शकुनि, और पिशाचों के दल के दल आने लगे। भीम अस्त्रधारी राक्षस गण वीर मद से मत्त हो कर फिर बाहर निकल आये।

---

*चांदनी ×एक फूल।

तीसरा सर्ग ।

समागम ।

दानव-नन्दिनी प्रमीला पति-विरह से व्याकुल होकर प्रमोदोद्यान में रो रही है । विधु-मुखी युवती विरह-वेदना से व्यथित होकर पुष्प-वन में ऐसे फिर रही है, जैसे पीताम्बर-धारी मुरारी को अधर में मुरली लिए हुए न देख कर विरहिणी-ब्रजाङ्गनायें ब्रज-कुञ्ज-वन में । वह कभी भीतर आती है और कभी बाहर जाती है, कभी कोठे पर चढ़ कर सुदूर लंका की ओर देखती है और कभी अञ्चल से अविरल चक्षु-धारा को पोंछती है । बांसुरी, वीणा, मृदंग आदि सब नीरव हैं । सुन्दरी के शोक से सब सखियां ऐसी विरस-वदना हैं जैसे जब वसन्त के विरह से वनस्थली तप जाती है तो फल विरस-वदना हो जाते हैं ।"

निशा-देवी प्रमोदोद्यान में आ गई । प्रमीला का शरीर रोमाञ्चित हो गया । उस ने वसन्त की सी सौरभ वाली सखी वासन्ती के गले में हाथ डाल कर मृदु स्वर से कहा:—"देखो तिमिरावृत यामिनी*काल-भुजङ्गिनी के रूप में मुझे डसने आई है ! अरी सखी, इस विपत्ति-काल में राक्षस-कुल-पति अरिन्दम † इन्द्रजित कहां हैं ? अभी आऊंगा, इतना कहकर वह महाबली चला गया । हे भामिनी, मेरी समझ में नहीं आता कि इतना विलम्ब क्यों हो रहा है । यदि तुम समझी हो तो कहो ।

* रात, † जो शत्रु से दमन न हो,

जैसे बसन्त में कोयल बोलती हैं, वैसे वासन्ती ने कहा "मैं नहीं जानती कि तुम्हारे प्राणनाथ आज इतना विलम्ब क्यों कर रहे हैं। किन्तु, हे सीमन्तिनी¶! चिन्ता दूर करो। शूर इन्द्रजित राम का नाश कर शीघ्र ही आ जायँगे। सखी, तू क्यों डरती है? जिस का शरीर सुरासुर के शरों से अभेद्य है, उस से कौन युद्ध कर सकता है? आओ, कुंज-वन में चलें और सरस कुसुम उठाकर सुन्दर माला गूथें। तुम भी अपने प्रियतम के गले में हंस कर माला को ऐसे डाल देना, जैसे लोग विजयी के रथ-चूड़ा पर आनन्द से विजय-माला डालते हैं।

इतना कहकर दोनों ने कानन में प्रवेश किया। कौमुदी सरोवर-सलिल के साथ कुमुद को हँसाकर खेल रही है। भ्रमरी गुञ्जार कर रही है। पिकवर कुहू २ कर रहे हैं। फूल खिल रहे हैं। खद्योत वनराजी के भाल पर मणियों की भांति शोभा पा रहा है। मलयानिल मन्द मन्द बह रही है। पत्ते मरमर शब्द कर रहे हैं।

दोनों ने अञ्चल भर कर फूल उठाये। प्रमीला की आंखों से शिशिर-नीर सा अश्रु-जल फूल दल पर कितना गिरा सो कौन कह सकता है? वामा ने दुखी सूर्यमुखी को मिहिर* विरह से मलिन-वदना देख कर मधुर स्वर से कहाः— "अरी भानुप्रिये! इस निशाकाल में तेरी यातना का अनुभव मैं खूब कर रही हूं। मैं इन नेत्रों से इस समय इस संसार में अन्धकार ही अन्धकार देखती हूँ! विच्छेद—अनल से मेरे प्राण जले जा रहे हैं। जिस रवि-छवि को देख कर मैं सदा

¶ जिस की मांग में सेंदुर हो अर्थात् सधवा, * सूर्य,

जीती थी, आज वह अस्ताचल में अदृश्य है। जैसे पुण्यवती ऊषा के अनुग्रह से तू अपने प्राणेश्वर रवि को पा जायगी क्या वैसे मैं भी अपने प्राणेश्वर को फिर प्राप्त कर सकूँगी?"

माला गुथ जाने पर सखी ने कहा "आज तुम लङ्का में कैसे जाओगी? अलङ्घ्य सागर सम राघवीय सेना ने उसे घेर लिया है। लाखों शस्त्रधारी शत्रु दण्डधर यमराज की भांति चारो ओर फिर रहे हैं। दानव-बाला रूपवती प्रमीला ने क्रोध से उत्तर दिया—"वासन्ती, क्या तू नहीं जानती कि जब नदी पर्वत-गृह छोड़ कर जलधि से मिलने को गमन करती है; तो किस का सामर्थ्य है जो उस की गति को रोक ले। मैं दानव-नन्दिनी और राक्षस-कुल-वधू हूं। रावण मेरा श्वशुर और इन्द्रजित मेरा स्वामी है। क्या मैं भिखारी राम से डरती हूं? आज मैं लङ्का में अपने भुजबल से प्रवेश करके देखूंगी कि वह मुझे कैसे नहीं जाने देता?"

रोषावेश में इतना कह कर प्रमीला ने गजपति-गति से सुवर्ण-मन्दिर में प्रवेश किया।

प्रमीला अपनी सखियों सहित खूब सज्जित हुई। चारो ओर से दुन्दुभि-ध्वनि उठने लगी। वीराङ्गनाओं ने वीर-मद में मत्त होकर मियान से तलवारें निकाल लीं और धनु टंकार करतीं और ढालों को हिलाती हुई बाहर निकल आईं। काञ्चन काञ्चक* की विभा ने पुरी को उज्ज्वलकर दिया। अश्वशाला में अश्व हिनहिनाने और नूपुर की झनझन और किङ्किणी की किनकिन को कान उठा कर सुनने लगे। वे रणोल्लास में ऐसे नाचने लगे जैसे डमरू की डम डम से काल-फणि।

* कंचन का सामान।

गजशाला में गज, कानों को विदीर्ण करने वाली ऐसी चिंघारें मारने लगे जैसे दूर आकाश में घनपति का गम्भीर निर्घोष। गिरि-शृङ्ग, कानन और कन्दरा में प्रति-ध्वनि निद्रा त्याग कर जाग उठी। सहसा घोर कोलाहल से समस्त देश परिपूर्ण हो गया।

नरमुण्ड-मालिनी उग्रचण्डा (कोपमूर्ति) एक सौ घोड़ों को विविध साजों से सजा कर अश्वशाला से बाहर लाई। एक सौ चेरियां उन पर सवार हुईं। अश्व-पार्श्व * में तलवारें झनझना उठीं, उनके सिर का चूड़ा हिल गया। तरकश के साथ मणिमय वेणी भी पीठ पर हिलने लगी। उस के कर-कमल में कण्टकमय मृणाल रूपी शूल है। घोड़ों की पीठों पर चेरियों के सवार होने से वे हर्ष से ऐसे हिनहिनाने लगे जैसे दानव-दलनी के पद-पद्म को वक्ष पर धारण कर शङ्कर ने नाद किया था। समर-वाद्य बज उठा। स्वर्ग में देवगण, पाताल में नागगण और नरलोक में नरगण चौंक पड़े।

तेजस्विनी प्रमीला लज्जा और भय को त्याग कर सजने लगी। केशों पर किरीट-छटा ऐसी शोभा पा रही है जैसे मेघों के शिर पर इन्द्र-चाप। भाल पर चन्दन की रेखा ऐसी शोभित है जैसे भैरवी के भाल पर नयन-रञ्जिका शशिकला। सुलोचना ने अपने उच्च कुचों को कवच से ढक कर विविध रत्न-जटित कमरबन्द से कमर को कस लिया। जैसे रवि-मण्डल नेत्रों में चकाचौंध कर देता है वैसे प्रमीला की तेजो-

---

* बगल

मय ढाल ने चकाचौंध कर दिया। उस के उरु ऐसे गोल और स्थूल हैं जैसे केले का वृक्ष। उसके हेमकोष में तेजोमय तलवार और हाथ में दीर्घ शूल है। अंग में नाना आभरण झिलमिला रहे हैं। दानव-बाला ऐसी सजी जैसे हैमवती दुर्गा महिषासुर अथवा वीरमदोन्मत्त शुम्भ-निशुम्भ को नाश करने के लिए सजी थी। चेलीवृन्द ने अश्वारूढ़ होकर डाकिनियों और योगिनियों की भांति प्रमीला को चारो ओर से घेर लिया। वड़वा नाम की अश्विनी वड़वाग्नि-शिखा के वेग से चली।

प्रमीला ने बिजली की भांति कड़क कर अपनी सखियों से उच्चस्वर में कहाः—

"हे वीराङ्गनाओ, मेरी यह प्रतिज्ञा है कि मैं निज भुजबल से रघुश्रेष्ठ राघव के विकट कटक * को पराजित कर नगर में प्रवेश करूंगी और वीरवर के पास जाऊंगी, नहीं तो रण में मर मिटूंगी। कर्म-फल को कोई मेट नहीं सकता। हे दानवी, हम सब दानव-कुल-सम्भवा हैं। शत्रु का वध करना अथवा शत्रु-शोणित-नद में डूब मरना दानव-कुल का नियम है। हे सखी, हम लोग अधर में मधु और लोचन में गरल धारण करती हैं। क्या हमारी मृणाल-भुजा में बल नहीं है? चलो हम सब राम की वीरता को देखें। मैं उसके रूप को अवश्य देखूंगी जिसके सौन्दर्य पर शूर्पनखा पञ्चवटी में मदन-मद से मत्त हो गई थी। मैं शूर लक्ष्मण को भी देखूंगी जिसने लंका को भयाकुला कर रखा है। अरी, मैं राक्षस-कुलाङ्गार विभीषण को नाग-पाश में बांध लाऊंगी। जैसे मातङ्गिनी ¶ नलवन

* सेना ¶ हथिनी

को दलन करती है वैसे मैं विपक्ष-दल का दलन करूंगी। अरी, विद्युत-आकृति, तुम सब विद्युत-गति से शत्रु-दल के बीच में जा गिरो।"

दानव-बालाओं ने ऐसी हुंकार की, मानो मातङ्गिनी-यूथ मधुकाल ‡ में मत्त हो गया हो।

जैसे वायु दावानल-गति को दुर्वार कर देती है वैसी ही दुर्वार गति से सती प्रमीला पति से मिलने को चली। कनक-लंका हिल गई। जलधि गरज उठा। मेघाकार सदृश रेणु चारों ओर उड़ने लगे। किन्तु जैसे निशाकाल में धूम-पुञ्ज अग्नि-शिखा को नहीं ढक सकता वैसे रात्रि का अन्धकार इस वामादल की दीप्ति को न छिपा सका।

विधुमुखी क्षणमात्र में पश्चिमी द्वार पर जा पहुंची। सौ बालाओं ने शङ्खों को ध्वनित कर अपने अपने भीम धनुषों को ज़ोर से टङ्कारा। आतंक से लंका कांप उठी। मातङ्ग पर महावत, रथ पर रथी, अश्व पर अश्वारोही, सिंहासन पर राजा, अन्तःपुर में कुलवधू, घोसलों में पक्षी, पर्वत-गह्वर में सिंह, वन में वन-हस्ती, आदि सब सहसा हिल गये। जलचर अतल जल में डूब गये।

भीषण-दर्शन पवन-नन्दन हनुमान ने क्रोध म अग्रसर हो, गर्जकर कहा:—"तुम कौन हो जो इस निशाकाल में मरने के लिए आये हो? क्या तुम नहीं जानते कि इस द्वार पर वह हनुमान जग रहा है जिसका नाम सुनकर राक्षस-नाथ सिंहासन पर थर थर कांपता है? रघुकुल-मणि प्रभु स्वयम्, मित्र विभीषण, सौमित्रि-केशरी और दुर्दमनीय वीरों

‡ बसन्त

के सैकड़ों दल जग रहे हैं। अरे दुर्मति, किस रङ्ग से यह अङ्गना-वेश धारण किया है ? मैं जानता हूं कि निशाचर परम मायावी होते हैं. किन्तु माया-बल का भेदन मैं बाहुबल से करता हूं। मुझे जहां शत्रु मिल जाता है मैं उसे वहीं भीम-प्रहार से मार डालता हूं।"

सखी नरमुण्ड-मालिनी ने कोदण्ड टंकार कर और रोष से हुंकार भर कहाः—"रे पशु, तू अपने सीतानाथ को यहां शीघ्र बुला ला। तुझ क्षुद्र जीव के मुंह कौन लगे! तेरे ऐसे तुच्छ प्राणी पर हम अस्त्र नहीं चलातीं। क्या सिंहिनी शृगाल के साथ विवाद करती है ? रे वनवासी, मैं तुझे छोड़े देती हूं। जा प्राण लेकर भाग जा। अरे अबोध, तुझे वध करने से क्या लाभ होगा ? तू यहां से जाकर सीतानाथ-राम, लक्ष्मण और राक्षस-कुल-कलंक विभीषण को बुला ला। तूने अरिन्दम इन्द्रजित का नाम सुना होगा। प्रमीला सुन्दरी उस की पत्नी हैं। वह आज पति-पद पूजने के लिए निज बाहु-बल से लंकापुरी में प्रवेश करेगी ! अरे मूढ़, किस योधा की सामर्थ्य है जो उसे रोक सके ?"

बली हनुमान ने प्रबल-बल से अग्रसर हो वीराङ्गनाओं के बीच दानवी प्रमीला को भय से देखा। उस के किरीट में क्षण प्रभा ‡ सम विभा चमक रही है। जैसे सौर-अंशु-राशि मणि-समूह पर पड़ कर शोभा पाती है वैसे ही प्रमीला के वराङ्ग में वर्म शोभा पा रहा है।

‡ बिजली,

हनुमान विस्मित होकर इस प्रकार सोचने लगेः—जब मैं अलङ्घ्य सागर को लांघ कर लंका में आया था, तब भयंकरी *प्रचण्डा कर में कपाल और खड्ग लिये और गले में मुण्ड-माला पहने हुए फिर रही थी। मैंने रावण की दानव-नन्दिनी मन्दोदरी आदि सब प्रणयिनियों को देखा था, शशि-कला सम रूपवान राक्षस-कुल-बालाओं और वधुओं का निरीक्षण घोर निशाकाल में घर घर जाकर किया था, अशोक-बन में शोकाकुल रघुकुल-कमलिनी का भी दर्शन किया था, किन्तु इस प्रकार की रूप माधुरी इस भुवन में कभी नहीं देखी। वीर मेघनाद धन्य है जिसने मेघरूप पाश में ऐसी सौदामिनी को अपने प्रेम-पाश से सदा के लिये बांध रक्खा है।

अञ्जना-नन्दन ने इतना सोच कर गम्भीर स्वर से कहा "सुन्दरी, मेरे प्रभु रवि-कुल-रवि सिन्धु को शिलाओं से बन्दी की भांति बांध कर और लाखों वीरों को साथ लेकर इस नगरी में आये हैं। राक्षस-राज उनका वैरी है। तुम सब अबला इस असमय में यहां क्यों आई हो, सो निर्भय होकर कहो। मैं हनुमान प्रभु राम का दास हूं। रघुकुल-निधि दया-सिन्धु हैं। हे सुलोचने! तुम से उनका कोई विवाद नहीं है। क्या तुम उनके अनुग्रह की कामना करती हो? शीघ्र कहो तो तुम्हारा निवेदन प्रभु-पद में उपस्थित करूं।"

सती ने मधुर वाणी में उत्तर दिया—अहा! यह वाणी हनुमान के कानों में सुमधुर वीणा-वाणी के समान ध्वनित

* एक देवी जो शिव की आज्ञा से लंका में पहरा देती थी।

हुई—"राम मेरे पति का वैरी अवश्य है, किन्तु मैं इस कारण उस से विवाद करना नहीं चाहती। मेरे पति वीरेन्द्र केशरी हैं। उन्हों ने अपने भुजबल से भुवन को विजय किया है। रिपु के साथ युद्ध करना मुझे प्रयोजनीय नहीं। हम सब कुल-बाला अवला अवश्य हैं, किन्तु याद रक्खो कि जो विद्युत छटा नेत्रों का रञ्जन करती है, उसी के स्पर्श से मनुष्य भस्मीभूत भी हो जाता है। हम देखने में सुन्दरी हैं, किन्तु यदि कोई हम पर हाथ उठाये तो हम उसे मारे विना नहीं छोड़तीं। हे शूर, तुम मेरी इस दूती को अपने साथ लेजाओ। वह राम से मेरी प्रार्थना विस्तारपूर्वक कह देगी। जाओ, शीघ्र जाओ।"

भीमाकृति दूती ने शत्रुदल में निर्भयता से ऐसे प्रवेश किया जैसे गरुत्मती तरी * तरङ्ग-निकर ‡ की अवहेलना करके अकूल × सागर में अकेली बहती है। हनमान उसे मार्ग दिखलाते हुए आगे बढ़े। वीर-वृन्द वामा को ऐसे देखने लगा जैसे लोग रात्रि समय किसी घर में अग्नि लग जाने पर अग्नि-शिखा को देखते हैं। भामिनी अपने मन में हंसने लगी। सब वीर शीघ्र गति से एकत्रित होकर दृढ़ता-पूर्वक उसे देखने लगे। उसके पैरों में नूपुर और कटि में काञ्चि बज उठी। हस्थि-गति-गामिनी हाथ में भीमाकार शूल लिये सब को तीक्ष्ण कटाक्ष रूपी वाण से घायल करती हुई चली जा रही है। उस के सिर पर चन्द्ररेखांकित मोर-पुच्छ का चूड़ा नाच रहा है। कुच-युग के बीच में रत्नावलि शोभा पा रहा है। पीठ पर मणिमय वेणी ऐसी हिलती है मानो

---

* पालवाली, * नांव, ‡ समूह, + जिसका किनारा न हो।

वसन्त-ऋतु में कामदेव की पताका उड़ रही हो। रङ्गिनी नवमातङ्गिनी दश दिशाओं को दीप्तिमान करती हुई चन्द्र-प्रभामयी पृथ्वी पर ऐसी शोभायमान प्रतीत होती है जैसे चांदनी रात में विमल सलिल में कुमुदिनी अथवा जैसे गिरिशृङ्ग के बीच में अंशुमयी ऊषा।

शिविर में रघु-चूड़ामणि प्रभु बैठे हैं। सामने शूर-सिंह लक्ष्मण खड़ा है। बगल में सखा विभीषण और रुद्रकुल सम तेजयुक्त भैरवमूर्त्ति सब वीर उपस्थित हैं। पीछे देवदत्त‡ अस्त्र-पुञ्ज शोभा पा रहा है। वे सब रञ्जन-राग § से रञ्जित और कुसुमाञ्जलि से आवृत हैं। धूपदान में धूप जल रही है। चारों ओर दीप दीप्तिमान हैं। कोई खड्ग की प्रशंसा करता है और कोई सुवर्णमण्डित चर्म-ढाल की। जैसे दिनान्त में रवि के प्रभाव से मेघ शोभा पाते हैं, वैसे उक्त ढाल शोभा पा रही है। कोई तरकश की और कोई तेजोराशि वर्म की स्तुति कर रहा है। राम ने धनुष को हाथ में लेकर कहाः—"मैंने वैदेही के स्वयम्वर में अपने बाहुबल से हर-धनु का भङ्ग किया था, किन्तु आज मैं इस धनु को खींचने में असमर्थ हूं। भला भाई लक्ष्मण इसे कैसे झुकायेगा?" सहसा सेना में सागर-कल्लोल की सी घोर कोलाहलमय "जयराम" ध्वनि उठी। विभीषण ने त्रस्त-भाव से राम की ओर देख कर कहाः—"हे राघवेन्द्र! ज़रा बाहर देखो! क्या रात्रि में ऊषा यहां आ पहुंची है?"

सब विस्मय से शिविर के बाहर देखने लगे। राम ने कहाः—"हे सखे! देखो यह भैरवी रूपिणी वामा देवी है या

---

‡ देवताओं के दिये हुए, § लाल चन्दन

दानवी ? लंकाधाम मायामय है। वह इन्द्रजाल से पूर्ण है। तुम्हारा जेष्ठ भ्राता काम-रूपी* है। अच्छी तरह निरीक्षण करो। यह रहस्य तुम से छिपा नहीं होगा। मैंने तुम्हें शुभक्षण में पाया है। हे मित्र! इस विपत्ति-काल में इस दुर्बल सैन्य की रक्षा तुम्हारे सिवा और कौन करेगा? इस राक्षस-पुरी में एक मात्र तुम्हीं राम के रक्षक हो।"

इस अवसर पर हनुमान दूती को साथ लिए हुए आ पहुंचे। वामा ने हाथ जोड़ कर और प्रणाम कर के कहा:— "मैं राघवेन्द्र और गुरुजनों के पदों में प्रणाम करती हूं। मेरा नाम नरमुण्ड-मालिनी है। मैं वीरेन्द्र-केशरी इन्द्रजित की कामिनी दैत्यबाला प्रमीला सुन्दरी की दासी हूं।"

राम ने आशिष देकर पूछा:—"हे दूती! तुम यहां किस लिए आई हो? मैं किस प्रकार तुम्हारी भर्त्री† को सन्तुष्ट कर सकता हूं।" दूती ने उत्तर दिया:—"हे वीरश्रेष्ठ रघुनाथ! तुम बाहर आकर हम सब से युद्ध करो, अथवा हमें रास्ता दो! रूपवती प्रमीला अपने पति को पूजने के लिये लङ्कापुरी में जाना चाहती है। तुमने अपने भुजबल से अनेक राक्षसों का वध किया है, किन्तु अब राक्षस-वधू तुम से युद्ध करना चाहती हैं। हे वीरेन्द्र! उन के साथ युद्ध होने दो। हम सब एक सौ रमणी हैं। तुम जिस से कहोगे वही अकेली युद्ध करेगी। हे नरवर! चाहे धनुष-बाण लो और चाहे ढाल-तलवार। मल्ल-युद्ध में भी हम सदा रत रहती हैं। हे देव! आप की जैसी रुचि हो वैसा करो। अब विलम्ब असहनीय है।" इतना कह चुकने पर दूती ने शिर नीचा करके

---

* इच्छानुसार रूप धारण करने वाला। † मालकिन

ऐसे प्रणाम किया, जैसे शिशिर-मण्डित ‡ प्रफुल्ल कुसुम मन्द समीर को शिर झुका कर वन्दना करता है।

रघुपति ने उत्तर दियाः—"हे सुकेशिनी! मैं कभी अकारण विवाद नहीं करता। रावण मेरा शत्रु है और तुम सब उस की कुलबाला और कुलवधुयें हो किन्तु क्या तुम ने मेरा कोई अपराध किया है कि मैं तुम्हारे साथ वैरी का सा व्यवहार करूं? तुम निशङ्क होकर आनन्द से लंका में प्रवेश करो। हे सुन्दरी! राम का जन्म वीर रघुकुल में हुआ है। तुम्हारी भर्त्तिणी वीर-पत्नी है। हे ललने! तुम उस से कह देना कि मैं उसकी पतिभक्ति की प्रशंसा सहस्र मुख से करता हूं। वीरा और सबला प्रमीला से युद्ध किए बिना ही मैं अपनी हार माने लेता हूं। धन्य है इन्द्रजित और धन्य है उसकी प्रमीला सुन्दरी! हे दूती! राम भिक्षुक है, यह जगत को विदित है। मैं विधि-विडम्बना से धनहीन और वनवासी हूँ। आज मैं तुम्हें तुम्हारे योग्य क्या प्रसाद दूँ? मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम सदा सुखी रहो।"

इतना कह कर प्रभु ने हनुमान से कहाः—"हे बलवान हनुमान! तुम सब और बातों को छोड़ कर बड़ी सावधानी से शिष्टाचार द्वारा वामा-दल को सन्तुष्ट करो।"

दूती सीतानाथ को प्रणाम कर बाहर चली गई। विभीषण ने हँस कर कहाः—"हे रघुपति, बाहर आकर प्रमीला का पराक्रम देखो। यह एक अपूर्व कौतुक है। मैं नहीं जानता कि इस वामा-दल से कौन युद्ध कर सकेगा। यह भीमा

‡ ओस से सजाया हुआ,

रूपिणी वीर्यवती रक्तवीज-कुल-अरि चण्डी* के सदृश है।"

राम ने कहाः—"हे रक्षावर! दूती की आकृति देख डर‡ के मारे मैंने उस समय युद्ध की इच्छा को त्याग दिया था। हे सखे! जो इस वाघिनी को छेड़े, सो मूढ़ है। हे मित्र! चलो, तुम्हारे भाई की पुत्र-वधू को देखें।"

जिस प्रकार सुदूर कानन में दावानल के प्रवेश से दशो दिशाएँ अग्निमय हो जाती हैं, इसी प्रकार राघवेन्द्र ने निर्धूम आकाश के सुवर्ण-वारिद-पुञ्ज में विभाराशि को देखा। कोदंड की घोर घर्घर, घोड़ों की हिनहिनाहट, चेरी-वृन्द की हुंकार और मियान के अन्दर झनझन करने वाली तलवारों के शब्द से चारो ओर कोलाहल मचा है। उस रौले के साथ ऐसा वाद्य हो रहा है, मानो आंधी के साथ पक्षियों की सुर-तरङ्गावलि वह रही हो। रत्नसङ्कलित-आभायुक्त पताका उड़ रही है। दुलकी चाल से चलने वाला तुरंग-समूह नाच रहा है। घुंघरुओं की छम छम सुनाई पड़ती है। राम की सेना गिरि-चूड़ा की भांति दोनों ओर अटल है। उसके बीच से वामा-दल ऐसा

---

* शिम्भु-निशिम्भु नामी प्रसिद्ध दैत्यों के सेनापति का नाम रक्तबीज था। वह किसी के मारे नहीं मरता था क्योंकि उसके रक्त की जितनी बूंदें पृथ्वीपर गिरती थीं उतने ही दैत्य पैदा होजाते थे। जब कालीसे युद्ध हुआ तो वह अपनी जीभपर बूंदों को ले लेती थी और इसलिये दैत्य-दल नहीं बढ़ने पाता था। अन्त में उसकी हार हुई।

‡ राम वास्तव में डरे नहीं किन्तु कविने दूती की वीराकृति और वीरभाव की प्रशंसा में ऐसा कहा। शायद हँसी में ऐसा कहा है, ¶ मेघ,

चला जा रहा है, मानो दो पर्वतों के बीच में मातङ्गिनी--यूथ अपनी गर्जन से आकाश को पूर्ण करता हुआ अपने पद-भार से पृथ्वी को कँपाता हुआ जा रहा हो।

सबसे आगे नर--मुंड--मालिनी कृष्ण वर्णा घोड़े पर बैठी हुई हाथ में हैममय ध्वज-दण्ड लिए है। उसके पीछे वाद्य-करी ऐसी शोभित हैं, मानो भूतल पर अतुलित विद्याधरी¶ आ-गई हों। वीणा, बांसुरी, मृदंग, मन्दिरा आदि सब यन्त्र मधुर ध्वनि से बज रहे हैं। इन के पीछे वीराङ्गनाओं के बीच में शूल-पाणि प्रमीला है। पराक्रम में वह बड़ी बल--शालिनी है किन्तु रूप में वह ऐसी है जैसे तारादल में शशिकला। रत्न-सम्भवा§ विभा क्षण-प्रभा* की भांति चारों ओर चमक रही है। रति-पति अन्तरिक्ष में आनन्द से जा रहा है और कुसुम-धनु से रह रह कर बारम्बार अमोघ† कुसुम--शर छोड़ता है। जैसे सिंह की पीठ पर महिष-मर्दिनी दुर्गा, ऐरावत पर शची इन्द्राणी, और खगेन्द्र पर उपेन्द्र-रमणी‡ रमा शोभा पाती है वैसे वीर्यवती सती रत्न-मण्डित अश्व की पीठ पर शोभा पा रही है। वामा-दल वैरिकुल की उपेक्षा करता हुआ धीरे २ निकल गया। किसी ने धनुष टङ्कारा, किसीने हुङ्कार की, किसीने तलवार निकाली, किसीने गर्व से शूल हिलाई, किसी ने तिरस्कार-सूचक अट्टहास किया और किसीने गहन वन में सिंहनी की भांति भयानक गर्जना की। वे सब वीर-मद और काम-मद में उन्मत्त थीं।

¶ गंधर्विणी § रत्नों से उत्पन्न हुई चमक। * क्षणिकप्रभा यानी बिजली। † न चूकने वाला। ‡ लक्ष्मी।

रामने विभीषण से कहा "हे सखे, यह कैसा आश्चर्य है? ऐसा तो त्रिभुवन में न कभी देखा गया और न सुना गया। क्या मैंने रात्रि में जागते हुए स्वप्न देखा है? हे मित्र रत्नोत्तम! मुझ से सत्य कहो। मेरी समझ में कुछ नहीं आता। इस प्रपञ्च को देख कर मेरा चित्त चञ्चल हो गया है। मुझ से यह भेद स्पष्ट रूप से कहो। चित्ररथ-रथी से सुना था कि मुझ दास की सहायता करने के लिए मायादेवी आएंगी। क्या सती ने छल से लंकापुरी में प्रवेश किया है? हे बुध, कहो, यह छल किसका है।"

विभीषण ने उत्तर दिया—"हे वैदेही नाथ, यह रात्रि का स्वप्न नहीं है। सुरारि कालनेमी नाम का जगत-विख्यात एक दैत्य है। प्रमीला सुन्दरी उसकी तनया है। हे देव इस का जन्म महाशक्ति के अंश से हुआ है, और उस में महाशक्ति का तेज है। किस की सामर्थ्य है जो अपने विक्रम से इस दानवी का पराजय करे? जिस सिंह ने सहस्राक्ष इन्द्र को संग्राम में हराया था, उसे इस विमोहिनी ने अपने पदतल में ऐसे रख छोड़ा है जैसे दिगम्बरी ने दिगम्बर को अपने पदतल तले रक्खा था। विधाता ने इस शृङ्खला (प्रमीला) को जगत की रक्षा के लिये निर्माण किया था कि उस से काल रूपी मदमत्त हाथी मेघनाद बंधा रहे। जैसे जलधारा वन-बैरी घोर दावानल को निवारण करती है वैसे प्रमीला अपने प्रेमालापन से इस कालाग्नि को सदा निवारण किया करती है। जैसे यमुना के सुवासित जल में दुर्दमनीय दंशक कालीनाग डूबा रहता है वैसे ही प्रमीला के प्रेमरूपी सुवासित जल में काल-सर्प रूपी मेघनाद सदा

मग्न रहता है। इसी लिए स्वर्ग में देवता, पाताल में नाग, नरलोक में नर और समस्त विश्ववासी सुख से रहते हैं।

रघुपति ने कहा:—"हे मित्रवर, तुम्हारा कथन सत्य है। मेघनाद महारथी है। उसकी सी शिक्षा और दीक्षा त्रिभुवन में कहीं नहीं देखी। मैंने परशुराम को युद्ध में गिरि सदृश अटल देखा किन्तु मेघनाद उन से अटलतर है। उसने शुभ समय में धनुष-बाण धारण किया था। हे राक्षस-कुल-मणि! कहो अब क्या करूं? अब तो सिंहिनी सिंह के साथ आकर मिल गई। अब इस मृगपाल* की रक्षा कौन करेगा? देखो, सिन्धु घोर कोलाहल करता हुआ चारो ओर से उमड़ रहा है। हे सखे! जैसे नीलकण्ठ ने पृथ्वी का निस्तार किया था, वैसे तुम अपनी रक्षित सेना का निस्तार करो। हे शूर, तुम्हारा जेष्ठ भ्राता काल-सर्प है, और महाबली इन्द्रजित उसका विषदन्त है। उसी के तेज से वह तेजवान हो रहा है। यदि किसी प्रकार उस दन्त को तोड़ सकूं तो मेरा मनोरथ सफल हो; नहीं तो सेतु बांध कर इस कनक-लङ्का में आना वृथा है।"

विभीषण ने उत्तर दिया—"हे वीर-कुञ्जर, तुम्हारा कथन सत्य है। यतो धर्मस्ततो जयः। हा! अपने पाप से राक्षस-कुल नष्ट हो रहा है। इन्द्र-शत्रु मेघनाद तुम्हारे से मरेगा अवश्य, किन्तु तुम सावधानी से रहना। यह दानवी प्रमीला महावीर्यवती है। यह नर-मुण्ड-मालिनी राक्षसी नर-मुण्ड मालिनी शक्ति के समान रण-प्रिया है।

---

* मृग का बच्चा,

जिस वन में सिंहनी आया करती हो वहां के वासियों को सदा सावधानी से रहना चाहिए। कौन जानता है कि भीमा कब, कहां और किस पर आक्रमण करेगी। रात्रि में सब को सुरक्षित रहना चाहिए।"

रघुमणि ने मित्र विभीषण से कहाः—"हे सखे! कृपा कर लक्ष्मण के साथ द्वार द्वार जाकर सब सेनाओं को देखो कि आज कौन कहां जग रहा है। वीरबाहु के साथ लड़ कर आज सब थक गए हैं; अतएव चारों ओर फिर कर देखने की आवश्यकता है। देखो, अङ्गद क्या कर रहा है; महाबली नील और मित्र सुग्रीव कहां हैं। पश्चिम द्वार पर धनुष-बाण लिए हुए मैं जागता रहूंगा।

यह आज्ञा पाकर शूर लक्ष्मण विभीषण को साथ लेकर बाहर हुआ।

सती प्रमीला के लंका द्वार पर पहुंचते ही दुन्दुभी बज उठी। भीषण राक्षस प्रलय के मेघों की भांति गर्ज उठे। राक्षस विरूपाक्ष ने क्रोध से हाथ में लोहे का बाण ले लिया। भीममूर्ति, प्रमत्त * और तालजङ्घा ने ताड़ सम दीर्घ गदा उठा लिया। घोड़े हिनहिनाने और हाथी चिंघाड़ने लगे। रथ घर्घर घूमने लगा। दुरन्त कौंतिक † कुन्त घुमाने लगे। निशानाथ को आच्छादित करके बाण उड़ने लगे। आकाश में ऐसा कोलाहल होने लगा जैसे रात्रि में भूकम्प के एकाएक आ जाने से चारों ओर घोर वज्रनाद होने लगता है अथवा जैसे आग्नेय गिरि (ज्वालामुखी पहाड़) के अग्नि

---

* दो राक्षसों के नाम, ‡ ताड़ का पेड़, † कुन्त नाम हथियार को चलाने वाला सिपाही,

राशि उद्गीरण करने से गगन-मंडल हो जाता है। लंका आतंक से कांप उठी।

चंडा नर-मुड-मालिनी ने उच्च स्वर से कहाः—"अरे भीरुओ, इस अन्धकार में अपने अस्त्रों को किस पर तानते हो? आंखें खोल कर अच्छी तरह देखो। हम सब राक्षस-रिपु नहीं हैं किन्तु राक्षस-कुल-वधू हैं!" उसी समय द्वार-पाल ने बड़े भीषण नाद से द्वार खोल दिया। सुन्दरियों ने आनन्द से जय जय रव करते हुए कनक-लंका में प्रवेश किया।

जैसे अग्निशिखा को देख कर पतंग-गण आ जाते हैं वैसे चारों ओर से पुरजन आ गए। कुल वधुएं मंगल ध्वनि करके पुष्पवृष्टि करने लगीं। वन्दीगण बाजे बजा कर आनन्द से वन्दना करने लगे। प्रमीला ऐसे चली जैसे निविड़ कानन में आग्नेय तरङ्ग। वाद्यकरी और विद्याधरी वीणा, बांसुरी, मुरज, और मन्दिरादि बजाने लगीं। अश्ववृन्द हिनहिना कर नाचने लगा। मियान में तलवारें झनझना उठीं। शिशु जननी की गोद में चौंक पड़े। राक्षस कुल नारियां खिड़कियां खोल कर प्रमीला को देखने और आनन्द से उसकी प्रशंसा करने लगीं। कुछ देर बाद वह प्रेमानन्द से पति के मन्दिर में पहुंची और उससे ऐसे मिली जैसे मणिहारा फणी अपने खोये हुए मणि से।

अरिन्दम इन्द्र जितने हंसी से पूछाः—"क्या रक्तबीज का वध कर विधुमुखि कैलाश धाम में आई है? हे चामुण्डे, यदि आज्ञा हो तो तुम्हारा चिरदास तुम्हारे पदतल में गिरे!" ललना ने हँस कर कहाः—"हे नाथ, तुम्हारे पद-प्रसाद से यह दासी भव-विजयिनी है किन्तु वह मन्मथ को

नहीं जीत सकी। उसके शरानल की अवहेलना उससे नहीं हो सकी। मैं दुरुह विरहानल से सदा डरती हूं। जिसे मन सदा चाहा करता है मैं उसके पास आई हूँ। तरङ्गिनी ने सागर में प्रवेश किया है।"

इतना कह कर सती ने मन्दिर में प्रवेश कर वीर भूषणों को त्याग दिया और रत्नमय अञ्चल का रेशमी वस्त्र धारण किया। पीनस्तनी ने चोली कस कर पहन ली। कमर में मेखला शोभा पाने लगी। हीरों का हार गले में हिलने लगा। उर में काम का वासालय मुकुतावलि है। भाल पर तारों की सी उज्ज्वल मणि से गुथी हुई सुन्दर मांग है। कानों में कुण्डल और अलकों में मणि-आभा शोभा पाने लगी। रूपवती नाना प्रकार के आभरणों को पहिन कर सुसज्जित हुई। राक्षस चूड़ामणि मेघनाद आनन्दनीर में मग्न हो गया। दोनों स्वर्णासन पर बैठ गए। गायक जन गाने लगे। नर्त्तकी नृत्य करने लगी। पिञ्जरावद्ध पक्षी अपने दुःखों को भूल कर गान करने लगे। जैसे चन्द्रमा के स्पर्श से सागर उथल पड़ता है वैसे फौवारे कल-कल-रव करते हुए उथल उठे। बसन्तानिल ‡ मधुर स्वर से ऐसी बहने लगी मानों ऋतुराज वसन्त मधुकाल में वनस्थली के साथ खेल कर रहा हो।

उधर विभीषण लक्ष्मण को साथ लेकर उत्तर द्वार को चला। वहां सुमति सुग्रीव वीर-दल सहित विन्ध्य-शृंग-वृन्द के समान संग्राम में अटल उपस्थित है। पूर्वद्वार पर भीममूर्त्ति नील है। वहां निद्रा प्रवेश करने का वृथा यत्न कर रही है। दक्षिण द्वार पर कुमार अंगद ऐसे घूम रहा है, जैसे

‡ बसन्ती वायु,

क्षुधा तुर हरि (शेर) आहार की खोज में इधर उधर फिरता हो, अथवा जैसे शूलपाणि नन्दी कैलास-शिखर पर पहरा दे रहा हो। सैकड़ो धूम-शून्य अग्नि राशियां चारो ओर जल रही हैं। इन सब के बीच में लंका ऐसी शोभा पा रही है जैसे स्वच्छ नभस्थल में नक्षत्र-मण्डल से घिरा हुआ शशांक शोभा पाता है। चारो द्वार पर वीर-व्यूह इस प्रकार जग रहा है, जैसे वर्षा-काल में अन्न की वृद्धि होने पर किसान लोग खेत के पास उच्च मञ्च बना कर मृगों,भीषणभैसों और तृणजीवि जीवों को भगाने के लिए जागा करते हैं। राक्षस-कुल को त्रास देने वाले वीरगण लंका के चारो ओर इस प्रकार जागरण कर रहे हैं।

कैलास में उमा ने हंस कर सखी विजया से कहा—"अरी विधुमुखि, लंका की ओर देख! वराङ्गना प्रमीला वीर वेश में सङ्गिनी-दल को साथ लिए नगर में प्रवेश कर रही है। सोने के कवच की विभा आकाश में उठ रही है। देखो, नरमणि राघव, लक्ष्मण और विभीषण आदि सब वीर विस्मित होकर उसे देख रहे हैं। अरी नर—लोक में ऐसा रूप किसका है? सत्युग में मैंने इस वेश में दानव (शम्भु निशम्भु) का नाश किया था जरा वह भयंकर ध्वनि तो सुन। वामा क्रोध से सिञ्जनी को खींच कर हुंकारपूर्वक धनुष टंकार कर रही है। विकट सेना चारो ओर घूम रही है। अरी देख, केश-बन्धन पर चूड़ा हिल रहा है। तुरङ्ग के हिलने से गौराङ्गी ऐसे नीचे ऊपर होती है जैसे मान सरोवर की तरङ्गों की हिलोरों से कनक-कमल।"

विजया ने उत्तर दिया—"हे हैमवती, तुम्हारा कथन सत्य है। नरलोक में ऐसा रूप किसी का नहीं है। मैं

जानती हूं कि वीर्यवती दानव-नन्दिनी प्रमीला तुम्हारी दासी है, किन्तु हे भवानी, अपने मन में सोचो तो सही कि तुम अपनी बात को किस प्रकार रक्खोगी ? इन्द्रजित् अपने तेज से स्वयम् जगत्-जयी है। प्रमीला का उस के साथ आकर मिलना ऐसा है जैसे अग्नि-शिखा के साथ वायु का मिलना। हे कात्ययनि! राम की रक्षा कैसे करोगी? शूर लक्ष्मण राक्षस का नाश किस प्रकार करेगा ?"

क्षणकाल सोच कर शंकरी ने कहा—"हे विजये, रूपवती प्रमीला ने मेरे अंश से जन्म लिया है। कल मैं उसके तेज को हर लूंगी। जो मणि रविरश्म के स्पर्श से उज्वल है, दिनान्त में वह आभाहीन हो जाता है। इसी प्रकार कल मैं उसे निस्तेज करूंगी। शूर लक्ष्मण संग्राम में मेघनाद को अवश्य मारेगा। प्रमीला पति के साथ यहां आएगी; रावणि इस पुर में आकर शिव की सेवा करेगा; और हम सब प्रमीला को अपनी सखी बना कर सन्तुष्ट करेंगी।"

इतना कह कर शंकरी ने मन्दिर में प्रवेश किया। निद्रा देवी मृदु-पद से कैलाश में आगई। कैलाश—वासियों ने कुसुम—शय्या पर विश्राम किया। शंकर के भालस्थ शशि-कला ने दीप्तिमान होकर अपने रजोमय तेज से सुख-धाम को उज्ज्वल किया।

चौथा सर्ग

(प्रार्थना)

हे कवि-गुरू वाल्मीकि ! तुम्हारे पदाम्बुज में मैं प्रणाम करता हूं। हे भारत के शिर-चूड़ामणि ! जैसे कोई दीन-दरिद्र सुदूर तीर्थ-दर्शन के लिए बड़े धनवान के साथ जाता है, वैसे यह दास भी तुम्हारा अनुगामी बनना चाहता है। तुम्हारे पद-चिन्हों का दिवा-निशि ध्यान धर कितने ही यात्रियों ने यश रूपी मन्दिर में प्रवेश किया और भव-संसार के जन्म-मरण रूपी दुःखों का दमन कर अमर हो गए। श्री भर्तृहरि, सुरी श्रीकण्ठ, भवभूति, भारत-विख्यात भारती-वरपुत्र सुमधुर-भाषी कालिदास, मनोहर—मुरारी की मुरली-ध्वनि सदृश मुरारी और वङ्गभूमि-अलङ्कार कीर्तिवास आदि तुम्हारी ही परम कृपा से महाकवि की उच्चपदवी प्राप्त की। हे पिता, तुम्हारे सिखाए विना राजहंस-कुल के साथ कविता-रस-सरोवर में मैं कैसे केलि कर सकूंगा ? तुम्हारे काव्योद्यान से कुसुमों को यत्नपूर्वक उठा कर मैं एक नूतन माला गूथना चाहता हूं। मातृभाषा को विविध भूषणों से सजाने की मेरी इच्छा है। किन्तु हे रत्नाकर, तुम्हारी दया विना मुझ दीन को रत्नराजी कहां मिलेगी ? हे प्रभु ! मुझ अकिञ्चन पर कृपा करो।

(अशोक बन)

सुवर्ण-दीप-मालिनी कनक-लङ्का रत्नों के हारों से सुशोभित राजेन्द्राणी की भांति आनन्द-नीर में मग्न है।

घर घर बाजे बज रहे हैं । नर्त्तकी नाच रही हैं । गायक सुन्दर तानों से गायन कर रहे हैं । नायक-नायका मधुर हंसी से खिल खिलाकर हंसते हुए परस्पर खेल रहे हैं । द्वार २ पर फल-फूलों से गुथी हुई मालाएं लटक रही हैं । गृहाग्र में ध्वजा उड़ रही है । खिड़कियों में दीपक जल रहे हैं । राजपथ में जनस्रोत कल्लोल करता हुआ जा रहा है । अपनी सौरभ से पुरी को पूर्ण करने वाली पुष्प-वृष्टि हो रही है । आज रात्रि में सकल लङ्का जग रही है । निद्रा-देवी द्वार द्वार फिर रही है । विराम की प्रार्थना करने पर भी उसे अपने घर में कोई नहीं आने देता । "वीरेन्द्रइन्द्रजित कल राम को मारेगा । लक्ष्मण का वध होगा । राक्षस-दल वैरि-दल को अपने सिंहनाद से सिन्धु पार भगा देगा । लङ्का के वीर विभीषण को बांध लाएंगे । राहु चन्द्रमा को छोड़ कर भाग जायगा । जगत की आंखें सुधांशु को पुनः देख कर तृप्त हो जाएंगीं ।" जब कि राक्षस-पुरी में मायाविनी आशा हाट-घाट, घर-द्वार, वन-पर्वत आदि सब जगह यह कहती फिरती है, तो फिर राक्षस-गण आह्लाद-सलिल में क्यों न निमग्न हों ?

शोकाकुला, राघव-वाञ्छा-स्वरूपा सीता अशोक-कानन की अन्धकार-कुटी के अन्दर नीरवता में अकेली रो रही है । दुष्टा चेरी सीता को अकेली छोड़ कर चली गई है । वह उत्सव-कौतुक में मत्त होकर ऐसे फिर रही है, जैसे बाघिनी मृत हरिणी को छोड़ कर निर्भयतापूर्वक दूर वन में फिरती है । देवी ऐसी मलिन-वदना है जैसे खान के तिमिरमय गर्भ में (जहां सूर्य की किरणें नहीं जा सकतीं) सूर्यकान्त-मणि अथवा

जैसे विम्बाधरा * रमा सागर-तल † में । पवन दूर देश में रह रह कर ऐसे शब्द करता है, मानो वह विलाप कर रहा हो। पत्ते विषाद से हिल रहे हैं । शाखों पर पक्षीगण चुप चाप बैठ हैं। कुसुम-राशियां तरु-मूल में गिरी पड़ी हैं, मानो वृक्षों ने मनस्ताप से तापित होकर अपनी रत्नराजी फेंक दी हो। नदियां उच्चस्वर से रोती हुई सागर की ओर ऐसे वह रही हैं. मानो वे इस दुःख-वार्त्ता को वारीश से जाकर कहेंगी। उस ओर विपिन में चन्द्र-किरण प्रवेश नहीं करतीं। तथापि उस अपूर्व रूप से वह वन उज्ज्वल होरहा है । उस तमोमय धाम में आभामयी प्रभा की भाँति सती सीता अकेली बैठी है। इस अवसर पर सुन्दरी सरमा ※ ने प्रवेश किया और सीता के चरण-तल में रोती हुई बैठ गई । सरमा-सुन्दरी ऐसी सुन्दरी है. मानो राक्षस-कुल-राज-लक्ष्मी ने राक्षस-वधू का वेष धारण किया हो।

थोड़ी देर उपरान्त सुलोचना चक्षजल पोंछकर मधुर-स्वर से कहने लगी—"हे देवि, दुष्टा चेरियां तुम्हें छोड़ कर नगर में फिर रही हैं। यह सुनकर कि आज रात को सब महोत्सव में रत हैं, मैं तुम्हारे चरणों को पूजने आई हूँ । इस डिबिया में सिन्दूर है, आज्ञा दो तो तुम्हारे सुन्दर ललाट में लगादूँ । देवि, तुम सौभाग्यवती (सधवा) हो, क्या तुम्हरा ऐसा वेष शोभा पाता है ? दुष्ट लंकापति बड़ा निष्ठुर है। पद्म के पर्ण

---

* कुन्दरु के से लाल लाल ओठोंवाली लक्ष्मी,

† समुद्र-मथन के पूर्व लक्ष्मी विष्णु के वियोग से बड़ी दुखी थी, ※ विभीषण की स्त्री ।

को तो कोई नहीं तोड़ता? हा, उसने इस वराङ्ग-अलङ्कार को कैसे हर लिया, यह समझ में नहीं आता?

राक्षसवधू ने डिब्बी खोल कर बड़े यत्न से मांग में सेंदुर लगा दिया। ललाट में सिंदूर-बिन्दु ऐसा शोभायमान हुआ जैसे सायंकालीन आकाश में शुक्रतारा। सिन्दूर लगाकर सरमा ने पद-धूलि को शिरोधार्य किया और कहा "हे लक्ष्मी, इस देवाकांक्षित देह को स्पर्श करने के लिये मुझे क्षमा करो। यह चेरी इन चरणों की चिरदासी है।"

इतना कहकर युवती पदतल में फिर बैठ गई। मानो कोई सुवर्ण-प्रदीप तुलसी के मूल में जल उठा हो। मैथिली ने मृदुस्वर से कहा—"हे विधुमुखि, तुम दशानन को वृथा ही दोष लगाती हो। मैंने स्वयं ही आभरणों को उतार कर दूर फेंक दिया है। जब पापी मुझे हरकर चला था तब मैंने उन सब को मार्ग में यत्र तत्र फेंक दिया था। वे ही सेतु बँधाकर श्रीरघुनाथ को इस लंकापुरी में लाये हैं।"

सरमा ने कहा—"हे देवि, यह दासी तुम्हारे सुधा-मुख से तुम्हारे स्वयम्वर की कथा सुन चुकी है। दयाकर कहो कि रघुकुल-मणि वन में क्यों आये थे और राक्षस-राज ने तुम्हें कैसे हरा? मेरी यह सविनय प्रार्थना है कि मुझ दासी की इस लालसा को सुधा-भषण से तृप्त कीजिये। दुष्ट चेरी दल अब दूर है। इस अवसर पर इस कहानी को विस्तार पूर्वक कहो। इस चोर ने वीरवर राम और लक्ष्मण को किस छल से छला था? किस मायाबल से वह राघव-गृह में प्रवेश करके ऐसे रत्न को चुरा लाया?"।

जैसे गोमुखी से पवित्र वारि-धारा निकलती है, वैसे मधुरभाषिणी सती जानकी ने सरमा से सम्भाषण किया—"हे नन्दि सरमे, तुम सीता की परम हितैषिणी हो; यदि तुम्हें पूर्वकथा सुनने की इच्छा हुई है तो मैं उसे कहती हूँ। ध्यान से सुनो। जैसे ऊँचे वृक्ष में कबूतर और कबूतरी घोसला बनाकर सुख से रहते हैं, वैसे हम गोदावरी के तीर पर सुर-वन-सदृश पंचवटी नामक घोर वन में वास करते थे। सुमति लक्ष्मण सदा हमारी सेवा करता था। जिसका दण्डक-वन भण्डार है, उसे किस पदार्थ की कमी रह सकती है। वीर सौमित्रि नित्य कन्द, मूल, फल ला देता था। प्रभु कभी कभी मृगया भी करते थे; किन्तु हे सखि, बली राघवेन्द्र जीव-हिंसा से सदा विरत रहते थे। नाथ दया के सागर हैं। यह जगत में विदित है। यद्यपि मैं राज-नन्दिनी और रघु-कुल-वधू हूं तथापि उस कानन में प्रभू की परम प्रीति प्राप्त कर मैं पूर्व सुख को भूल गई थी। कुटी के चारों ओर नित्य-प्रति जो अनेकानेक फूल खिलते थे उनका वर्णन मैं कैसे करूं। पञ्चवटी-वन में सदा वसन्त विराजमान रहता था। कोयल कुहु कुहु करके मधुर स्वर से मुझे प्रभात में जगाती थी। हे शशिमुखि, कहो ऐसी कौन रानी है जो चित्त-विनोदक गीतों से आँखें खोलती हो? मेरे द्वार पर मोरनी मोर के साथ बड़े सुख से नाचती थी। हे रामा, क्या इन दोनों के समान कोई नर्त्तक नर्त्तकी इस जगत में हैं? वहां नित्यप्रति हाथी, हथिनी, मृगशिशु और पक्षीगण आते थे। किसी का अङ्ग सुनहरा, किसी का सफेद और किसी का काला था। किसी २ का रंग ऐसा विचित्र था जैसे मेघों में इन्द्रधनु। यह सब अहिंसक जीव अतिथि की भांति आते थे। मैं सबकी सेवा और पालना-

बड़े आदर और यत्न से ऐसे करती थी जैसे मरुभूमि में स्रोतस्वती वारिद-प्रसाद से सजलवती होकर तृषातुरों को तृप्त करती है। सरोवर मेरा आरसी था। मैं अतुल रत्नसम पद्म को उठ कर अपने बालों में लगाती थी और फूलों से सजती थी। प्रभु हँसकर मुझे वन-देवी कहकर बुलाया करते थे। अरी सखि, क्या प्राणनाथ को पुनः प्राप्त न कर सकूंगी? क्या यह दग्ध चक्षु इस जन्म में उन चरणों को देखेंगे जो मेरी आशारूपी सरोवर के कमल और मेरे नयनों के मणि हैं? हे दारुण विधि, किस पाप से यह दासी तुम्हारी दृष्टि में पापिनी है?"

इतना कहकर देवी चुपचाप रोने लगी। उसका शरीर अश्रु-नीर से भीग गया। राक्षसवधू सरमा ने थोड़ी देर बाद चक्षुजल पोंछ कर सती के चरणों में निवेदन किया-"हे देवि, यदि पूर्व कथा स्मरण करने से तुम्हें दुःख होता हो तो उसे मत कहो। तुम्हारी अश्रु-वारि को देख कर मेरे प्राण निकले जाते हैं।"

प्रियम्वदा ने उत्तर दिया—"अरी सुभगे, यदि यह अभागिनी न रोएगी तो फिर इस जगत में कौन रोएगी? पूर्व कहानी कहती हूँ सो सुनो। हे सखि, जैसे वर्षा काल में *प्लावन-पीड़न से कातर होकर नदी अपने तट का अतिक्रम कर वारि-राशि को दोनों ओर फैलाती है, वैसे दुखी मन दूसरों से अपना दुख कह कर वेदना की बाढ़ को रोकने का यत्न करता है। अरी सरमा, मैं इसीलिए अपनी दुःख-गाथा तुझे सुनाती हूं। इस राक्षस-पुर में मेरा और कौन है?"

---

* जल के बाढ़ की पीड़ा।

"गोदावरी तट पर पञ्चवटी-वन में हम सुख से रहते थे। उस कान्ता की कान्ति का वर्णन मैं क्या करूं ? मैं सदा वन-देवी की वन-वीणा की मधुर ध्वनि सुनती थी; और पद्म-वन में सुर-बालाएं सूर्य की किरणों के भेष में केलि करती थीं। कभी २ साध्वी सुहासिनी ऋषिकुल-वधुएं मुझ दासी की कुटी में ऐसे आती थीं, मानों अन्धकार-धाम में सुधांशु-अंशु ने प्रवेश किया हो। सैकड़ों रंगों से रञ्जित मृगासन विछा कर कभी मैं तरुमूल में बैठ जाती थी, कभी छाया के साथ सखि-भाव से सम्भाषण करती थी और कभी कोयल की ध्वनि सुनकर गीत गाने लगती थी। कभी कभी प्रभु के साथ नदी-तट पर सुख से भ्रमण करती थी और तरल सलिल में नूतन गगन को नव तारावलि और नव निशाकान्त की कान्ति से परिपूर्ण देखती थी। हे सखि, कभी पर्वत पर चढ़ कर नाथ के चरण-तल में ऐसे बैठ जाती थी, जैसे चारु लता विशाल रसाल के मूल में। प्रभु बड़े आदर से वचन-रूपी सुधा वर्षा कर मुझे तृप्त करते थे। जैसे कैलास-पुरी में कैलास-वासी व्योमकेश¶ स्वर्णासन पर बैठ कर आगम-पुराण और पञ्चतन्त्र की कथा पञ्चमुख से उमा को सुनाते हैं, वैसे मैं भी नाना प्रकार की कथाएं प्रभु के मुख से सुनती थी। अब तक इस विजन में भी उस मधुरवाणी का अनुभव मुझे होता है। हे निष्ठुर विधि, क्या मुझ दासी के लिए वह सङ्गीत समाप्त हो गया ?" इतना कह कर सती विषाद से नीरव हो गई। तब सरमा सुन्दरी

¶ आकाश व्यापी केशों से गंगा को धारण करने वाले महादेव।

ने कहा—"हे राघव-रमणि, तुम्हारी बातों को सुन कर राज-भोग से घृणा उत्पन्न होती है। मन में आता है कि राज्य-सुख छोड़ कर वन-वासिनी हो जाऊं। किन्तु सोचने पर चित्त में भय होता है। जब रविकर तमोमय वन में प्रवेश करती है तो वह अपने गुण से सर्वत्र प्रकाश कर देती है, किन्तु जब निशा किसी देश में गमन करती है तो उसके समागम से सब मलिन-वदन हो जाता है। मधुमति, तुम जहां पदार्पण करोगी वहां सब सुख आ विराजेंगे। तुम जगदानन्ददायनी भुवन-मोहिनी हो। हे देवि, राक्षस-पति तुम्हें किस कौशल से हर लाया सो भी कहो। यह दासी वीणा-ध्वनि और सरस मधु-मास में नव पल्लवों के बीच पिकवर-रव सुन चुकी है, किन्तु ऐसी सुमिष्ट कथा इस जगत में कभी नहीं सुनी। हे देवि, नीलाम्बर में शशी की ओर देखो। उसकी आभा तुम्हारे रूपके सन्मुख मलिन है। देव सुधानिधि बड़े हर्ष से तुम्हारी वाक्य-सुधा का पान कर रहा है। कोयल आदि सब पक्षिगण तुम्हारी कहानी सुनने के लिए नीरव हो गए हैं। हे साध्वि, तुम इन सब की इच्छा को पूर्ण करो।"

राघव-प्रिया ने कहा—"हे सखि, इस प्रकार पञ्चवटी-वन में अनेक दिन सुख से बिताए। तुम्हारी ननद दुष्टा शूर्पनखा ने पीछे से विषम विपत्ति को ला उपस्थित किया। उसकी बातों को याद कर मुझे घोर लज्जा आती है। इस नारी-कुल-कलङ्क को धिक्कार है! वह बाघिनी मुझे मार कर रघुवर को अपना पति बनाना चाहती थी। जब सौमित्रि केशरी ने घोर रोष और तिरस्कार से उसे दूर भगा दिया तो वह राक्षसों को बुला लाई और कानन में घोर रण

आरम्भ हो गया । मैं भयभीत होकर कुटी में चली गई और कोदण्ड-टंकार सुनकर बहुत रोई । आँखें बन्द कर और हाथ जोड़ कर राघव की रक्षा के लिए सब देवताओं से मैं प्रार्थना करती रही। आकाश में आर्त्तनाद और सिंहनाद होने लगा । इसे सुनकर मैं अचेतन होगई और भूतल पर गिर पड़ी। हे स्वजनि, मैं नहीं जानती कि कितनी देर तक मैं उस दशा में पड़ी रही । इस दासी को रघुश्रेष्ठ, ने अपने स्पर्श से जगा कर मृदुस्वर से यह कहा—'हे रघुनन्दन-धन, प्राणेश्वरि उठो ! हे रघुराज-गृह-आनन्द ! हे हेमाङ्गि, क्या तुम इस शय्या पर शोभा पाती हो ?" सरमा सखि, क्या मैं इस मधुरध्वनि को फिर सुनूंगी ?" सती सहसा मूर्च्छित होगई और सरमा ने उसे पकड़ लिया ।

जैसे निषाद घोर वन में वृक्ष-शाख पर बैठे हुये पक्षी का ललित गीत सुन उसके स्वर का लक्ष्य कर शर छोड़ता है और पक्षी उस के विषम आघात से भूमि पर गिर कर छटपटाता है वैसे सीता सरमा की गोद में सहसा गिर कर छटपटाने लगी ।

जब वह थोड़ी देर में सचेत हुई तब सरमा रोकर कहने लगी—"हे मैथिली, मेरे दोष को क्षमा करो । मैं ज्ञान-हीना हूं । हाय ! मैंने तुम्हें यह क्लेश अकारण दिया ।" सीता ने मृदुस्वर से उत्तर दिया—"हे सखि, इस में तुम्हारा कोई दोष नहीं । ध्यान से सुनो । मैं पूर्व कथा फिर कहती हूँ । "मरीच ने मुझे किस छल से छला था सो तुम शूर्पनखा के मुख से सुन चुकी हो । उस कुलग्न में लोभ-मद में मत्त होकर मैंने हिरण को चाहा था । रघुपति लक्ष्मण को

मेरी रक्षा के लिए छोड़ कर और धनुष–वाण लेकर उस के पीछे चल दिए। विद्युत–आकृति माया-मृग कानन को उज्ज्वल करता हुआ भागा। नाथ सिंह-गति से उस के पीछे २ बड़ी दूर निकल गए और मुझ अभागिनी का नयन–तारा दृष्टि से छिप गया। कुछ देर बाद सहसा दूर देश में यह आर्त्तनाद सुनाई पड़ा—'हे भाई लक्ष्मण! इस विपत्ति–काल में तुम कहां हो? मैं मर रहा हूं।' सौमित्र–केशरी चौंक उठा। मैंने कातरता से उस का हाथ पकड़ लिया और विनती करने लगी—'हे वीर, वायु–गति से वन में शीघ्र प्रवेश करो। देखो, कौन बुला रहा है? यह निनाद सुन कर मेरा हृदय व्याकुल है। हे रथि जाओ, शीघ्र जाओः रघुनाथ तुम्हें बुला रहे हैं!'

लक्ष्मण ने कहा—'हे देवि, तुम्हारी आज्ञा का पालन कैसे करूं? इस विजन वन में तुम अकेली कैसे रहोगी? यहां कितने ही मायावी राक्षस भ्रमण करते हैं। तुम इतना क्यों डरती हो? रघुवंश–अवतंश राम को निज बल से इस त्रिभुवन में कौन मार सकता है?।' इतने में फिर आर्त्तनाद सुनाई पड़ा। हे स्वजनि, इस पर मैं अधिक धीरज न धर सकी। मैंने उस कुघड़ी में लक्ष्मण से कहा—'मेरी सास सुमित्रा बड़ी दयावती हैं। रे निष्ठुर, कौन कहता है कि उसने तुझे गर्भ में धारण किया था? क्या विधाता ने तेरे हृदय को पाषाण से गढ़ा था? रे दुर्मति, मैं समझ गई कि निर्दय वाघिनी ने घोर वन में जन्म देकर तुझे पाला था। रे भीरु! रे वीर-कुल-ग्लानि! मैं स्वयम् जाकर देखूंगी कि दूर वन में करुण–स्वर से मुझे कौन स्मरण करता है?' वीरमणि ने क्रोध से रक्त–नयन होकर धनुष ले लिया और निमिष मात्र में

तरकस बाँध कर और मेरी ओर देख कर कहने लगा—'हे जनकनन्दिनी, मैं तुम्हें मातृवत् मानता हूं और इस लिए ये वृथा गालियां सहन करता हूं । अच्छा, मैं जा रहा हूं। घर में सावधानी से रहना । कौन जाने आज क्या होगा ? मेरा दोष नहीं है। मैं तुम्हारे आदेश से तुम्हें छोड़ता हूं ।' इतना कहकर शूर ने कानन में प्रवेश किया ।

"हे प्रिय सखि, मैं अकेली बैठी हुई क्या सोच रही थी सो कैसे कहूं ? दिन चढ़ने लगा। कुरङ्ग आह्लाद से निनाद करने लगे। पक्षी,मृग-शिशु और अन्य फलाहारी पशु आपहुंचे। इतने में मैंने चौंक कर वैश्वानर-सम तेजस्वी जटाधारी, अंग में विभूति लगाये, हाथ में कमण्डल लिए हुए एक योगी को खड़े हुए देखा। हाय सखि, यदि मैं यह जानती होती कि फूलराशि में दुष्ट सर्प और विमल सलिल में विष है तो क्या कभी भूमि में शिर रख कर उसे प्रणाम करती ?

मायावी ने कहा-'हे रघुवधू भिक्षा दो । इस वन में तुम अन्नदा हो। मैं क्षुधार्त्त अतिथि हूं ।'

मैंने घूंघट से मुंह ढक कर और हाथ जोड कर कहा-'हे प्रभु, तरु-मूल में चर्मासन पर बैठ कर विश्राम कीजिए । राघवेन्द्र लक्ष्मण भ्राता के साथ अभी लौट आएंगे ।"

दुर्मति ने कहा—'मैं तुम से कह चुका हूं कि मैं क्षुधार्त्त अतिथि हूं । भिक्षा देओ नहीं तो मैं और जगह जाऊं । हे जानकी, क्यातुम आज अतिथि-सेवा से विरत हो ? हे रघुवधू,क्या तुम रघुवंश में कलंक-कालिमा लगाना चाहती हो ? तुम किस के गर्व से ब्रह्म-शाप की अवहेलना करती हो ?

भिक्षा देओ, नहीं तो मैं शाप देकर चला जाऊंगा।' मैं भय से लज्जा त्याग कर और भिक्षा-द्रव्य लेकर ज्योंही बाहर आई त्योंही तुम्हारे जेठ ने मुझे पकड़ लिया।

"हे विधुवदने, एक समय जब मैं प्रभु के साथ कानन में घूम रही थी और दूर देश में छोटे २ वृक्षों के निकट एक हरिणी चर-रही थी तब सहसा घोर नाद सुनाई पड़ा। भयाकुला होकर मैं क्या देखती हूं कि विद्युत-गतिशाली बाघ ने मृगी को पकड़ लिया। 'हे नाथ, रक्षा करो'—यह कहकर मैं राघव के चरणों में गिर पड़ी। प्रभु ने उसी क्षण बाघ से उस के प्राण बचाए। मैंने उस वन-सुन्दरी को यत्न से उठा लिया। रावण ने इसी प्रकार शार्दूल की भांति मुझे पकड़ लिया। किन्तु हे धनि, इस अभागिनी हरिणी को उस विपत्ति-काल में कोई बचाने न आया। मेरे हाहाकार-रव से कानन पूर्ण हो गया। मेरी क्रन्दन-ध्वनि सुन कर और मेरी दुर्दशा देख कर माता वन-देवी कातरा होकर रोई होगी। किन्तु वह सारा क्रन्दन वृथा था। जो लोहा अग्नि-तेज से गलता है, क्या वारि-धारा उसे गला सकती है? क्या अश्रुबिन्दुओं का प्रभाव उस कठोर हृदय पर पड़ सकता था?

"जटाजूट और कमण्डल दूर चलता भया। मूढ़ ने राज-रथी वेष में मुझे स्वर्ण रथ पर उठा लिया। दुष्टमति ने कभी रोष से गर्ज कर और कभी मधुर स्वर में मुझ से जो कुछ कहा, उसे स्मरण कर, हे सरमे, मुझे लज्जा आती है।—रथी ने रथ चला दिया। जैसे काल-सर्प के मुंह में मेढ़की रोती है वैसे मैं वृथा रोई! स्वर्ण-रथ के चक्रों ने अपने घर्घर-शब्द से मुझ अभागिनी के आर्त्तनाद को दबा कर

कानन-राजी को पूर्ण कर दिया। अरी सखि, जब प्रभञ्जन के बल से त्रस्त तरुकुल मड़ मड़ शब्द करता हुआ हिलता है तब कबूतरी की आवाज़ किसे सुनाई पड़ती है? उपाय-हीन होने पर कंकण, कड़ा, हार, कण्ठमाला, कुण्डल, नूपुर और काञ्ची आदि उतार २ कर जल्दी २ और एक २ करके मैं मार्ग में फेंकती आई। हे राक्षस-वधू, इसीलिए मेरी इस दग्ध देह में कोई आभरण नहीं है। तुम दशानन पर वृथा दोष लगाती हो।" इतना कहकर शशिमुखी चुप हो गई।

सरमा ने कहा:—"हे मैथिलि, यह दासी अब भी तृषा-तुरा है। उसे सुधादान दो। आज तुमने मेरे कानों को सफल किया है।" चन्द्रानना ने फिर मुस्वर से कहना आरम्भ किया—"अरी ललने, यदि तुझे सुनने की लालसा हो तो और सुन। वैदेही की दुःख कथा और कौन सुनेगा। जैसे निषाद फंदे में पक्षी को पकड़ कर आनन्द से घर जाता है वैसे लंकापति रथ हांक कर लंका को चला। जैसे चिड़िया पिंजड़ा तोड़ने के लिए छटपटाती है वैसे मैं भी बहुत छटपटाया की। हे आकाश, मैंने सुना है कि तू * शब्द-वह है, अतएव जहाँ रघुचूड़ा-मणि,राम और भुवन-विजयी देवर-लक्ष्मण हों,वहां जाकर तू मुझ दासी की दशा घोररव से कह। हे समीर, तू गन्धवह है। मैं तुझे दूत पद पर नियुक्त करती हूं;जहां प्रभु हों, वहां तू शीघ्र जा। हे वारिद, तू भीमनादी है गम्भीर निनाद से नाथ को बुला ला। हे भ्रमर, तू फूल-कुल का मधुलोभ छोड़ कर उस निकुञ्ज में जाकर सीता

* शब्द ले जाने वाला।

की वार्त्ता का गुञ्जार कर, जहां वली राघवेन्द्र हैं। हे मधु-सखा कोयल, तू सीता का दुःख-गीत पंच स्वर से गा! शायद प्रभु तेरे गान को सुन लें। हे सखि, मैं इस प्रकार विलाप करती थी किन्तु हाय उसे किसी ने नहीं सुना।

कनक-रथ अभ्रभेदी गिर-शृङ्ग, वन, नद, नदी और नाना देश पार करके शीघ्र चलने लगा। हे सरमा, तुमने तो अपनी आंखों से पुष्पक की गति को देखा है। उसके वर्णन करने का क्या प्रयोजन?

'थोडी देर बाद भयङ्कर शब्द सामने सुनाई पड़ा। घोड़े आंतक से थर थर काँप उठे। स्वर्ण-रथ अस्थिर होकर चलने लगा। मैंने आँखें खोल कर देखा कि पर्वत पर प्रलय-काल के काल-मेघ सदृश भैरव मूर्ति कोई वीर है। इस वीरवर ने गम्भीर स्वर से कहा—'मैं तुझे पहचानता हूं: तू लंका का घोर रावण है। रे दुर्मति, तू आज किस कुलवधू को चुरा लाया है? प्रेम-प्रदीप को बुझाकर तूने किसके घर में अन्धकार किया है? मैं जानता हूं कि यह तेरा नित्य-कर्म है। तुझे तीक्ष्ण शर से वध कर आज वीर कुल के कलंक को दूर करूँगा। अरे मूढ़मति, तुझे धिक्कार है। अरे निर्लज्ज पामर, ब्रह्ममण्डल में तेरा जैसा कौन है?'

'हे सखी, इतना कह कर शूरेन्द्र गर्ज उठा! मैं अचेतन होकर रथ में गिर गई। चेतनता आने पर मैंने देखा कि मैं भूतल में पड़ी हूं। रावण रथ पर चढ़ा हुआ गगन-मार्ग में हुं-कारनाद से उस वीर के साथ युद्ध कर रहा है। हे धनि, अव-लारसना उस रण का क्या वर्णन कर सकती है! मैंने भय से अपने नेत्रों को वन्द कर लिया। इस विषम संकट से बचने

के लिए मैं रो रो कर उस वीर की विजय और राक्षस के नाश के लिये देवताओं से प्रार्थना करती थी। मैंने एक बार उठ कर वन में भाग जाने का यत्न किया; किन्तु ऐसी गिरी मानो भूकम्प आ गया हो। हे सखि, मैंने वसुधा की आराधना करते हुए कहा—'हे साध्वि मां, इस विजन देश में तुम विभक्त होकर अपने वक्षस्थल में इस अभागिनी को ले लो! इस दुःखिनी कन्या की ज्वाला को तुम कैसे सह रही हो? आओ मां, शीघ्र आओ, दुष्ट लौट आएगा और जैसे चोर गुप्त स्थान में चुराकर रक्खी हुई रत्न-राशि को निशाकाल में आकर उठा ले जाता है वैसे ही चोर रावण मुझे पुनः उठा ले जाएगा। हे जननि, आकर मेरी रक्षा करो!'

"हे सुन्दरि, अब घोर युद्ध होने लगा। पृथ्वी काँप उठी। घोर रव से आकाश पूर्ण हो गया। मैं फिर अचेतन हो गई। अरी ललने, उस अपूर्व कहानी को ज़रा ध्यान से सुन। मैंने स्वप्न में माता वसुन्धरा को देखा। उसने मेरे पास आकर और मुझे गोद में लेकर मधुर वाणी से इस प्रकार कहा—'हे वत्स, विधि की इच्छा से राक्षस-राज रावण तेरा हरण कर रहा है। तेरे कारण वह अधम वंश सहित नष्ट होगा। अब मैं उसका भार सहन नहीं कर सकती। लंका का नाश कराने के लिए ही मैंने तुझे गर्भ में धारण किया था। जिस कुसमय में उस दुर्मति ने तेरा स्पर्श किया था, उस समय मैं जान गई थी कि विधि अब मुझ पर प्रसन्न हुआ है। मैंने तुझे सहर्ष आशीर्वाद दिया था। हे मैथिलि, आज तूने जननी की ज्वाला को शान्त किया है।'

"हे सखी! मैंने अपने सामने एक अभ्रभेदी गिरि को देखा। उस पर कुछ वीर दुःख और शोक में मग्न थे। उस

अवसर पर रघुपति लक्ष्मण के साथ वहाँ आ गये । नाथ को विरस वदन देख कर मैं कितनी चिन्तित हुई और कितनी रोई सो नहीं कह सकती । उन वीरों ने राघव और अनुज लक्ष्मण की पूजा की । फिर सब ने सुन्दर कानन में प्रवेश किया ।

"रघुवीर ने उस देश के राजा को मार कर उन वीरों में से सर्वश्रेष्ठ पुरुष को राजसिंहासन पर बैठाया । लाखों वीर दूत घोर कल्लोल करते हुए चारों ओर जाने लगे । वीरों के पद–भार से पृथ्वी कांपती थी । मैंने भय से आंखें बन्द कर लीं तो मां हँस कर कहने लगी—'जानकी, तू किस से डरती है ? वह देख, मित्रवर सुग्रीव आदि तेरे उद्धारार्थ सज रहे हैं । तेरे स्वामी ने जिसे वध किया है वह वालि नाम से जगत में विख्यात था । वह किष्किन्धा नगर है, जहां बलीवृन्द इन्द्र की भांति सज रहे हैं । आंखें खोल कर देख कि वीरों के दल के दल जलस्रोत की भांति घोर गर्जना करते हुए जा रहे हैं ' उन के घोर रव से निविड़ बन गूंज उठा । नदियाँ सूखने लगीं । वन के पशु–पक्षी भयाकुल होकर दूर भाग गये । सैन्य–दल सागर के तीर पहुंचा । हे सरमा सखि ! वहां देखती हूं कि सलिल में शिला तैर रही हैं । सैकड़ों वीरों ने भीम पराक्रम से शृङ्गधर को उखाड़ लिया । शिल्पियों ने मिल कर अपूर्व सेतु बांध लिया । वारीश–वरुण ने प्रभु के आदेश से स्वयम् अपने पैरों में बेड़ी डाल ली । शूर सेना वीर–मद से अलङ्घ सागर लांघ कर पार हुई । यह स्वर्णपुरी वैरि–पद–भार से हिल गई । सब कोई 'जय रघुपति', 'जयराम' बोल उठे ! यह देख कर मैं हर्ष से रो पड़ी ।

"एक दिन की बात है कि लंकापति कनक-मन्दिर में स्वर्ण-सिंहासन पर बैठा था। उस सभा में एक धीर और धर्मात्मा वीर ने कहा—'राम का सम्मान करो और वैदेही को लौटा दो, नहीं तो तुम्हारा सर्वनाश होगा।' रावण संसार-मद से मत्त था। उस ने उस पर पदाघात करके उसे कुवचन कहे। वह वीर-कुञ्जर आत्माभिमानवश मेरे प्राणनाथ के पास चला गया।" सरमा ने कहा—"हे देवि! बली रावणानुज तुम्हारे लिए इतना रोए थे कि उस का वर्णन मैं नहीं कर सकती।" रूपवती मैथिली ने उत्तर दिया:—"मैं जानती हूं कि विभीषण मेरे परमहितैषी हैं। 'हे दयावती, यह केवल तुम्हारी दया का फल है कि अभागिनी सीता अब तक जीवित है।' अब मैं अपना अपूर्व स्वप्न कहती हूं सो सुनो—

"राक्षसवृन्द युद्धार्थ सजे, और राक्षस-वाद्य बज उठे। गगन में निनाद हुआ। उस वीर-दल को देख कर मैं कांप उठी जो तेज में अग्निसम और विक्रम में केशरीसम था। कितना रण हुआ सो मैं कैसे कहूं? रक्त की नदी बहने लगी। पर्वताकार महा भयंकर शव-राशि दिखाई पड़ने लगी। कबन्ध, भूत, पिशाच, दानव, शकुनि, गृद्धिनी, शृगाल और श्वान आदि मांसाहारियों के झुण्ड के झुण्ड आने लगे। भैरव-नाद से लंका पूर्ण हो गई।

"सभास्थल में मैंने राक्षस-नाथ रावण को देखा तो उस का मुख मलिन, नेत्र अश्रुपूर्ण और हृदय शोकाकुल था। उस का गर्व राघव के विक्रम के सामने लाघव हो गया। उसने विषाद से कहा—' हा विधि, क्या तेरे मन में यही था? अरे जाओ अब त्रिशूली शम्भु-सम मेरे भाई कुम्भकर्ण को जगाओ।

यदि वह भी कुछ न कर सका तो राक्षस-कुल को अरक्षित जानो !' राक्षस जाने लगे । नारि-दल मंगल गान करनेलगा। विशाल देहधारी कुम्भकर्ण ने सैन्य में प्रवेश किया । मेरे प्रभु ने तीक्ष्ण शर से उसका शिर काट डाला । वह दुरन्त शूर असमय में जग कर मारा गया । हर्ष से 'जयराम'-ध्वनि हुई ! रावण रोने लगा और कनक-लंका हाहाकार-रव से विलाप करने लगी !

" हे सखि, चारों ओर का क्रन्दन सुनकर मैं चञ्चल होगई। मैंने मां के दोनों पैर पकड़ कर कहा—' हे मां, राक्षस-कुल के दुःख से मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है । यह दासी पर-दुःख से सदा कातरा हो जाती है ।'

"वसुधा हँसकर कहने लगी—'अरी रघुवधू, तूने जो देखा सो सत्य है । राघव लंका का विध्वंस कर रावण को दण्ड देंगे।'

"हे सरमा, मैंने देखा कि सुर-बालाएं नाना प्रकार के आभरण, मन्दार की मालाएं और रेशमी वस्त्र हाथ में लिए हैं। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से मुझे घेर लिया । एक ने कहा—'हे सति, उठो । इतने दिनोपरान्त दुरन्त रावण रण में मारा गया ।' किसी ने कहा—'हे रघुनन्दन-धन, शीघ्र उठ कर सुवासित जल में स्नान करो और नाना भूषणों से भूषित हो । देवेन्द्राणी शची आज सीता को सीतानाथ के समर्पण करेगी ।'

"मैंने हाथ जोड़ कर उस से पूछा—'हे देवि, तुम इस दासी का शृङ्गार इस प्रकार क्यों करना चाहती हो ? मुझे आज्ञा दो तो मैं इसी दशा में अपने स्वामी के पास चली

जाऊँ। मैं चाहती हूं कि नरमणि प्रभु कङ्कालिनी सीता को कङ्कालिनी के वेष में ही देखें।'

"सुरबाला ने उत्तर दिया:—'मैथिली, सुनो; मणि खान से समल निकलती है किन्तु दाता उसे साफ़ कर के राजा के हाथ में देता है।'

"अरी सखि, मैं रोती-हँसती हुई शीघ्र सज ली। मैंने कनक-उदयाचल में देव अंशुमाली के सदृश नाथ को दूर देश में देखा। मैं एक पगली की भांति पद-युग स्पर्श करने को व्यग्र होकर जाने लगी कि इतने में मेरी आंख खुल गई।' जैसे प्रदीप बुझ जाने से घर घोर अन्धकारमय हो जाता है वैसे विश्व के चारों ओर मैंने अन्धकार ही अन्धकार देखा। हे विधि, तब मैं क्यों न मर गई? किस लिए यह दग्ध प्राण देह में रह गए?"

विधुमुखि ऐसी नीरव हो गई जैसे वीणा का तार टूटने से वीणा नीरव हो जाती है। सरमा रोकर कहने लगी— "हे जनकनन्दिनी, तुम अपने नाथ को अवश्य पाओगी। तुम्हारा यह स्वप्न सत्य है। मैं तुम से सच कहती हूं। सलिल में शिला तैर रही हैं। देव-दैत्य-नर-त्रास बली कुम्भकर्ण संग्राम में मारा जा चुका है। विभीषण विजयी रघुनाथ की सेवा कर रहे हैं। दुर्मति रावण लाखों वीरों के साथ दण्डित होकर वंश सहित नष्ट होगा।"

"अच्छा कहो फिर क्या हुआ? मुझे तुम्हारी कहानी सुनने की लालसा हो रही है।" सती सीता ने सुमधुर स्वर से फिर कहना आरम्भ किया—

"हे शशिमुखि, आंखे खोलते ही सामने रावण दिखाई दिया। वीर जटायु भूतल में ऐसे पड़ा था जैसे तुङ्ग शैल-शृङ्ग वज्राघात से चूर्ण होकर गिर जाता है।

"राघव-रिपु ने कहा—'हे इन्दुआनने! इन्दीवर आँखों को खोल कर रावण के पराक्रम को देख! जगद्विख्यात जटायु आज मेरे भुजवल से हीनायु है। मूढ़ गरुड़नन्दन अपने दोष से मर रहा है। इस मूर्ख से मेरे साथ लड़ने को किसने कहा था?"

जटायु ने अति मृदुस्वर से कहा—"रे रावण, धार्मिक मर्यादा के रक्षार्थ आज मैं संग्राम में मरता हूं। सन्मुख समर में मर कर मैं देवालय में जाऊंगा। तू विचार कर देख कि तेरी क्या दशा होगी। रे लोभी, शृगाल होकर तूने सिंहनी पर आक्रमण किया है। देख, तुझे कोई न बचा सकेगा। रे पामर, इस नारी-रत्न को चुरा कर तू सङ्कट में पड़ा है।'

'इतना कहकर वीरवर मौन हो गया। लङ्कापति ने मुझे फिर रथ पर विठा लिया। मैंने हाथ जोड़ कर रोते हुए उस वीर-से कहा—'हे देव, इस दासी का नाम सीता है। मैं जनक-दुहिता और रघुवधू हूं। हे सुमति, यदि राघव के साथ तुम्हारा साक्षात् हो तो उनसे कहिएगा कि पापी रावण मुझे घर में अकेला पाकर हर ले गया।'

"रथ गम्भीर निर्घोष से गगन में उठा। सामने नीला सागर दृष्टिगत हुआ। अतल अकूल-जल अविराम गति से कल्लोल करता हुआ वह रहा था। मैं पानी में डूबना चाहती थी, किन्तु दुष्ट ने गिरने भी न दिया। मन ही मन मैंने वारीश और जलचर का आह्वान किया, किन्तु उन्होंने इस अभा-

गिनी की अवहेलना की। आकाश-पथ में कनक-रथ मनोरम गति से गमन करने लगा।

"लंकापुरी शीघ्र ही सामने दिखाई देने लगी। यह कनक-पुरी सागर के भाल पर रक्त-चन्दन-रेखा-स्वरूप है। किन्तु यदि कारागार सुवर्ण-गठित हो तो क्या वन्दी के नयन में उसकी कमनीय आभा कभी शोभा पाती है? क्या सुवर्ण-पिञ्जर में पक्षी बन्द होना चाहता है? कुञ्ज-विहारिणी को तुम चाहे जिस पिंजड़े में रक्खो वह तो सदा दुखी ही रहेगी। हे सरमा सुन्दरी, मेरा जन्म कुक्षण में हुआ था। मैं राज-नन्दिनी और राज-कुल-वधू होकर कारागार में बद्ध हूं!"

रूपवती सीता सरमा के गले में लिपट कर रोने लगी। सरमा के नेत्रों से भी अश्रुधारा वह निकली।

थोड़ी देर में सरमा ने चक्षु-जल पोंछ कर कहा—"हे देवि, विधि-विधान को कौन तोड़ सकता है? किन्तु वसुधा ने जो कहा था सो सत्य है। विधि की इच्छा से लंकापति तुम्हें हर लाया। दुष्टमति वंश सहित मरेगा। वीरयोनि लंका में अब कौन वीर रह गया है? त्रिभुवन-जयी सब योधा अब नहीं रहे। सागर-कूल पर शवाहारी पशु-पक्षी शव-राशियों को उल्लास से खा रहे हैं। घर घर में विधवा वधुएं रोती हैं। तुम्हारी इस दुखरूपी निशा का शीघ्र प्रभात होगा। मैं सच कहती हूं कि यह स्वप्न सफल होगा। विद्याधरी मन्दार-मालाओं से तुम्हारे वराङ्ग को आनन्दपूर्वक शीघ्र सजाएंगी। जैसे वसुधा-कामिनी सरस वसन्त से मिलती है वैसे तुम राघव से मिलोगी। हे साध्वि, मुझ दासी को मत भूलना। मैं तुम्हारी प्रतिमा को मनोमन्दिर में जीवनपर्यन्त रख कर

आनन्द से ऐसे पूजूँगी जैसे सरोवर चन्द्रमा को रात्रि में अपने हृदय में धारण करके सहर्ष पूजता है। हे सुकेशिनी, इस देश में तुम्हें बहुत क्लेश मिले; किन्तु यह दासी दोषी नहीं है।"

मैथिलि सुस्वर से कहने लगी—"हे सरमा, तम मेरी परम हितैषिणी हो। तुम्हारे सदृश इस जगत में मेरे लिए कौन है? हे रक्षोवधु, तुम मेरे लिए मरुभूमि में प्रवाहिणी हो। तुमने मुझ तपन-तापिता को सुशीतल छाया का रूप धारण करके शीतल किया। इस निर्दय देश में तम मूर्तिमयी दया हो। इस पंकिल-जल में तुम पद्म-स्वरूपा हो। इस काल-कनक लंका रूपी भुजङ्गिनी के शिर की तुम शिरोमणि हो। हे सखि, और क्या कहूं? सीता कङ्गालिनी है और तुम बहुमूल्य रत्न हो। हे धनि, क्या दरिद्री रत्न पाकर कभी उसकी अवहेलना कर सकता है?"

सीता के पद-पद्म में प्रणाम करके सरमा ने कहा—"हे दयामयि, अब दासी को विदा देओ। हे रघु-कुल-कमलिनी, तुम्हें छोड़कर मैं जाना नहीं चाहती। लंकानाथ यह सुनकर कि मैं तुम्हारे चरणों में आकर तुम से वार्त्तालाप करती हूं रूठ जाएगा और फिर मुझे घोर संकट में पड़ना पड़ेगा।"

मैथिली ने कहा—"हे सखि, तुम शीघ्र जाओ। दूर पर पद-ध्वनि सुनाई पड़ती है कदाचित् चेरीदल इस वन में लौटा आ रहा हो।"

सरमा ऐसे द्रुत वेग से गई जैसे आतंक से हिरनी भागती है। सीता उस विजन वन में ऐसी अकेली रह गई जैसे अरण्य में एक मात्र कुसुम।

पाँचवाँ सर्ग।

उद्योग।

इन्द्रपुरी में तारामयी रात्रि हँस रही है; किन्तु इन्द्र चिन्ता से व्याकुल है। कुसुम-शय्या से विरक्त हो वह रत्न-सिंहासन पर मौन बैठा है। देवता अपने २ सुवर्ण-मन्दिर में शयन कर रहे हैं।

सुरेश्वरी ने अभिमान से सुन्दर स्वर में कहा:—"हे सुरेश, तुम्हारे चरणों की दासी से क्या अपराध हो गया है जो आप शयनागार में पदार्पण नहीं करते। देखो, मेनका क्षण भर आँखें बन्द कर के भय से चौंक पड़ी है। उर्वशी जड़वत हो गई है। चारु चित्रलेखा चित्रवत् हो रही है। चिरानन्ददायिनी निद्रा डर के मारे तुम्हारे समीप नहीं आती भला इस घोर रात्रि में तुम्हारे सिवा और कौन जागता होगा?"

इन्द्र ने उत्तर दिया—"हे देवि, मैं यह सोच रहा हूं कि लक्ष्मण मेघनाद का नाश कैसे करेगा। हे सति! वीरेन्द्र रावण-पुत्र जगत में अजेय है।"

अनन्तयौवना शची ने कहा—"हे कान्त! लक्ष्मण को वे अस्त्र तो मिल गये जिन से तारक को तारकारि ने वध किया था। तुम्हारे भाग्य-बल से शंकर और पार्वती अपने पक्ष में हैं। दासी की आराधना से साध्वि दुर्गा ने कहा था कि कल तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा। माया देवी स्वयम् मेघनाद को वध करने की विधि बता देंगी। हे नाथ! तुम किस लिए यह भावना करते हो?"

दैत्य-रिपु ने उत्तर दिया—"हे देवि! तुम जो कहती हो सो सत्य है। लंकापुरी में मैं अस्त्र भेज चुका हूं किन्तु

मेरी समझ में नहीं आता कि माया लक्ष्मण की रक्षा कैसे करेगी ? मैं जानता हूं कि सुमित्रा-नन्दन महाबली है किन्तु हाथी मृगराज को कैसे जीत सकता है ? हे सुवदने ! वज्र की निर्घोष, मेघों की घोर घर्घर, बिजली की कड़क और सौदामिनी की दमक मुझे भयभीत नहीं कर सकती, किन्तु जब मेघनाद घोर नाद करता है और हुंकारपूर्वक अग्निमय शर-जाल को अपने चाप पर चढ़ाता है तब मेरा हृदय थरथर काँपता है और उस के भीम प्रहार से ऐरावत अस्थिर हो जाता है।"

सुरनाथ निराश हाकर ठण्ढी सांस लेने लगा और नीरव हो गया। पति के दुःख से दुखी होकर सती देवेन्द्र के पास बैठ गई। उर्वशी, मेनका, रम्भा और चारु चित्रलेखा सब उस के चारों ओर ऐसे खड़ी हो गई मानो रात्रि-समय सरोवर में सुधाकर-राशि ने मुदित पद्म को चारों ओर से घेर लिया हो, अथवा जैसे दुर्गोत्सव में अम्बिका के चारों ओर दीपावली सजी हो। उसी समय माया देवी वहां आ पहुंची। उस के आगमन से देवालय की रत्न-सम्भवा * विभा ऐसे बढ़ गई जैसे नन्दन-कानन में रवि-कर-जाल से स्वर्गीय कुसुमों की काञ्चन-कान्ति बढ़ जाती है।

देव-देवी दोनों ने श्रद्धा से माया के पाद-पद्म में प्रणाम किया। माया आशीष देकर स्वर्णासन पर बैठ गई। इन्द्र ने हाथ जोड़ कर पूछा—"हे माता! अपनी इच्छा मुझ दास से कहो।"

---

* रत्नों की चमक।

माया ने कहा—"हे देव ! मैं लंकापुरी को जाती हूँ। तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करूँगी। आज मैं रावणि को अपने कौशल से चूर्ण करूँगी। देखो, अब प्रभात हो रहा है। आनन्दमयी ऊषा शीघ्र ही उदय-शिखर पर हँसती हुई निकलेगी। लंका का पंकज-रवि अस्ताचल में डूबेगा। हे असुरारि, यज्ञागार में मैं लक्ष्मण को ले जाऊँगी और राक्षस को मायाजाल से घेर लूंगी। दुर्बल बली निरस्त्र और असहाय होकर देवास्त्र के आघात से मरेगा। विधि की विधि का उल्लङ्घन कौन कर सकता है। रावणि रण में अवश्य नष्ट होगा। किन्तु, जब राक्षसपति रावण यह समाचार सुनेगा और पुत्र-शोक से विकल होकर यम की भाँति समर में प्रवेश करेगा तब किस की सामर्थ्य है जो अपने पराक्रम से राम, रामानुज और रघुमित्र धीर विभीषण की रक्षा कर सके ? हे सुरनाथ, इस बात को ज़रा सोचो तो सही।"

इन्द्र ने उत्तर दिया—"हे महामाया ! यदि लक्ष्मण के शर से मेघनाद के मारने की आशा हो तो कल मैं सुर-सैन्य लेकर संग्राम में लक्ष्मण की रक्षा के लिए जाऊँ। हे देवि ! तुम्हारे प्रसाद से मैं रावण से नहीं डरता। तुम माया-जाल फैला कर केवल राक्षस-कुल-गर्व मेघनाद को संग्राम में नष्ट करो। हे जननि ! राम देवताओं को प्रिय हैं। देवगण प्राणपण से उन के लिए युद्ध करेंगे। कल मैं स्वयम् भूतल पर जाकर द्रुतगामी वज्र से उसे दग्ध करूँगा।"

माया ने कहा—"हे अदितिनन्दन ! तुम्हें ऐसा ही करना चाहिए। तुम्हारी बातों को सुन कर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। हे सुरश्रेष्ठ ! अनुमति देओ तो अब मैं लंका को जाऊँ।"

इतना कह कर शक्तिश्वरी ने दोनों को आशीष दी और चली गईं। निद्रा ने देवेन्द्र-पद में प्रणाम किया।

इन्द्र ने प्रेमानन्द से इन्द्राणी के कर-पद्म पकड़ कर सुखालय शयन-मन्दिर में प्रवेश किया। चित्रलेखा, उर्वशी, मेनका और रम्भा शीघ्र अपने २ घर को चली गईं। सौर-कर-राशि रूपिणी सुर-सुन्दरी नूपुर, काञ्ची, किंकिणी इत्यादि सब भूषणों को उतार कर कुसुम-शय्या पर लेट गईं। परिमल वायु कभी अलकों पर, कभी उच्च कुचों पर और कभी चन्द्रानन पर धीरे धीरे ऐसी केलि करता रहा जैसे मधुकर वनस्थल को फूला से प्रफुल्लित पाकर मत्त हो जाता है।

ज्योंही माया महादेवी स्वर्ग के कनक-द्वार पर पहुंची त्योंही हैम-द्वार निनाद से आप ही आप खुल गया। विमोहिनी ने बाहर आकर स्वप्नदेवी से मधुर स्वर में कहा:—

"हे देवि! तुम सौमित्रि शूर लक्ष्मण के पास सुमित्रा के वेश में जाओ और उसके शिराने बैठ कर इस प्रकार कहो—'हे वत्स! उठो: अब प्रभात हो रहा है। लंका के उत्तर में वनराजी के बीच एक सरोवर है; उस के कूल पर चण्डी का स्वर्णमय मन्दिर है। तुम वहां जाओ और उस सरोवर में स्नान कर तथा विविध पुष्पों को लेकर दानव-दमनी माँ की भक्तिभाव से पूजा करो। हे यशस्वि! तुम उन के प्रसाद से दुर्मद मेघनाद का विनाश अनायास ही कर सकोगे,।"

माया की आज्ञा पाते ही स्वप्नदेवी ऐसे चली जैसे कोई उल्का नील नभ को उज्ज्वल करता हुआ भूतल पर गिरता है। वह रामानुज के निकट उसी क्षण पहुंची और सुमित्रा के वेष में उस के शिराने बैठ कर मधुर स्वर में माया के सन्देश को कह सुनाया।

लक्ष्मण चौंक कर उठ पड़ा और चारों ओर देखने लगा। उस का वक्षस्थल नयन-जल से तत्काल भीग गया। उस ने विषादपूर्वक कहा—"हे जननि! तुम मुझ दास पर इतनी प्रतिकूल क्यों हो? दया कर पुनः दर्शन दीजये। मां, मैं तुम्हारे युगल-पद की पूजा करना चाहता हूं। तुम्हारी पद-धूलि लेकर मैं अपनी मनोकामना पूर्ण करूँगा। मेरे जन्म-समय में जो वेदना तुम को हुई थी उस का स्मरण कर मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है। हे देवि! क्या इस जन्म में तुम्हारे चरण-युग का दर्शन मुझे फिर प्राप्त न होगा?"

अश्रुजल पोंछ कर वीर कुञ्जर कुञ्जर-गमन से प्रभु रघु-कुल शिरोमणि राघव के पास गया और बड़े भाई के पद में प्रणाम कर कहा—"हे नाथ! मैंने एक अद्भुत स्वप्न देखा है। मेरे शिराने बैठ कर माता सुमित्रा ने मुझे आदेश दिया है—'हे वत्स! उठो; प्रभात हो रहा है। लंका के उत्तर में वन-राजी के बीच एक सरोवर है। उस के कूल पर चण्डी का स्वर्णमय मन्दिर है। तुम वहां जाओ और उस सरोवर में स्नान कर तथा विविध पुष्पों को लेकर दानव-दमनी माँ की पूजा भक्तिभाव से करो। उन के प्रसाद से दुर्मद राक्षस का अनायास ही विनाश कर यशस्वि होगे।' इतना कह कर माता अदृश्य हो गई। मैंने रोते रोते उसे बुलाया किन्तु उत्तर नहीं मिला। हे रघुमणि! कहो तुम्हारी क्या आज्ञा है?

वैदेही-विलासी ने विभीषण से पूछा—"हे मित्रवर, तुम क्या कहते हो? जगत को विदित है कि राक्षसपुरी में तुम राघव-रक्षक हो?" विभीषण ने उत्तर दिया—"हे देव,

उस कानन में सरोवर-कूल पर चण्डी का मन्दिर है। राक्षस-नाथ स्वयम् उस उद्यान में सती की पूजा किया करता है। वह एक भयंकर स्थल है इसलिए वहां कोई कभी नहीं जाता। मैंने सुना है कि भीमशूल-पाणि-शम्भु स्वयम् उसके द्वार पर फिरते हैं। वहां जो कोई मां की पूजा करता है वह जगत् में जयी होता है। मैं और क्या कहूं? यदि सौमित्रि उस वन में साहसपूर्वक प्रवेश कर सके तो मनोरथ सफल हो सकता है।"

बली लक्ष्मण ने कहा—"हे राक्षस-कुलोत्तम, यह दास राघव का आज्ञावर्ती है। यदि आज्ञा मिले तो कानन में प्रवेश करूं। मेरी गति को कौन रोक सकेगा ?"

राघवेश्वर ने मधुर स्वर से कहा—"हे वत्स, तुमने मेरे लिए बहुत कुछ सहन किया है जिसे स्मरण कर मेरा मन तुम्हें अधिक कष्ट देना नहीं चाहता। किन्तु क्या करूं ? दैव की व्यवस्था का उल्लङ्घन कैसे हो सकता है। हे महाबली, तुम वहां सावधानी से जाओ। देवताओं की अनुग्रह कवच की भांति तुम्हारी रक्षा करेगी।"

लक्ष्मण ने राम के पादपद्म में प्रणाम कर, विभीषण को सिर झुका और करमें कृपाण लेकर निर्भयता से उत्तर-द्वार की ओर यात्रा की। उत्तर-द्वार पर मित्र सुग्रीव तेजोमय वीर दल सहित जग रहे हैं। पद-ध्वनि सुनते ही शूर ने गम्भीर स्वर से पूछा, "तुम कौन हो ? और इस घोर निशा काल में यहां क्यों आये हो? बचना चाहो तो शीघ्र उत्तर दो, नहीं तो शिलाघात से तुम्हारा शिर चूर्ण कर दूंगा।"

रामानुज ने हँस कर उत्तर दिया—"हे वीरमणि, मैं राक्षस-वंश के ध्वंस करने वाले राघव का दास हूँ।" सुग्रीव

ने शीघ्र ही आगे बढ़ कर सखा लक्ष्मण की वन्दना की। किष्किन्ध्या-पति को अपने मधुर भाषण से सन्तुष्ट कर वीरेन्द्र उत्तर की ओर चला।

थोड़ी देर में लक्ष्मण ने उद्यान के द्वार पर पहुंच कर दूर से एक भीषण मूर्ति को विस्मित होकर देखा। उसकी ललाट में शशिकला दीप्तिमान है। शिर में जटाजूट हैं। जटाजूट के बीच में जाह्नवी की शुभ्र रेखा ऐसी शोभायमान है जैसे शरद्-निशा में मेघाग्र भाग में कौमुदी की रजोरेखा। अङ्ग विभूति-भूषित है। दक्षिण करमें शाल-वृक्ष-सम-त्रिशूल है। सौमित्रि ने भूतनाथ को पहचान लिया और तेजस्कर तलवार निकाल कर कहा—"हे चन्द्रचूड़! त्रिभुवन-विख्यात रघुवंशावतंस दशरथ रथी का तनय यह दास तुम्हारे पदों में प्रणाम करता है। कृपया पथ छोड़ दीजिये। मैं कानन में प्रवेश कर चण्डी की पूजा करना चाहता हूं; नहींतो, मुझ दास से युद्ध कीजिये। लंकापति सदा कुकर्मों में रत रहता है। यदि आप उस के पक्ष में हैं तो शीघ्र युद्ध कीजिये। मैं विलम्ब सहन नहीं कर सकता। धर्म को साक्षी मान कर मैं तुम्हारा आह्वान करता हूं। यदि धर्म सत्य है तो मैं अवश्य जीतूंगा।"

वृषध्वज गिरिराज ने वज्रनाद की सी हुंकार कर गम्भीरता से उत्तर दिया—"हे शूर-चूड़ा-मणि लक्ष्मण, मैं तुम्हारे साहस की प्रशंसा करता हूं। भला मैं तुम्हारे साथ कैसे लड़ सकता हूं। हे सौभाग्यशाली! प्रसन्नमयी, आज तुम पर प्रसन्न हैं।" इतना कह कर जटाधारी द्वारी* ने द्वार को छोड़ दिया। सौमित्रि ने कानन में प्रवेश किया।

---

* द्वारपाल।

वीर लक्ष्मण घोर सिंहनाद सुनकर चौंक पड़ा। चारों ओर से निविड़ वन हिलने लगा। लाल लाल नेत्रों वाला सिंह पूंछ हिलाता और दांत कटकटाता हुआ आ पहुंचा। रथी ने जयराम-नाद करके तलवार को निकाल लिया। माया-रूपी-सिंह ऐसे भागा जैसे अग्नि-तेज से तम भागता है। धीमान् धीरे धीरे निर्भयता से चला। गरजते हुए मेघों ने चन्द्रमा को सहसा ढँक लिया। वायु बड़े वेग से चलने लगी। विद्युत चमचमाती हुई आकाश में शोभा पाने लगी और अपनी अति अल्प क्षण-स्थायी प्रभा दिखा २ कर कानन को घोर अन्धकारमय करने लगी। कड़कड़ाती हुई बिजली बार बार भूतल पर गिरने लगी। वायु अपने बाहुबल से वृक्षों को उखाड़ २ कर फेंकने लगा। दावानल ने कानन में प्रवेश किया। कनक-लंका कांप उठी। जलधि ऐसा गरजा मानों दूर देश में लाखों शंख और रण-क्षेत्र में लाखों कोदण्ड-टंकार घोर नाद कर रहे हों।

बली अटल और अचल होकर उस जगह खड़ा रहा। अकस्मात् दावाग्नि बुझ गई। आँधी बन्द हो गई। तारा-कान्त तारादल सहित गगन में शोभा पाने लगा। कुसुम वन-राजी मही पर कौतुक से हँसने लगी। फूलों से सौरभ निकलने लगा। सुमति लक्ष्मण विस्मित होकर मन्द समीर की भांति धीरे धीरे चलने लगा। सहसा मधुर स्वरावलि से वन पूर्ण हो गया। बांसुरी, वीणा, मृदङ्ग मंदिरा और सप्त-स्वरा बज उठा। स्त्री-कण्ठ-जात गीत-ध्वनि चित्त को मोहित और चञ्चल करने लगी।

बली को अपने सन्मुख कुसुम-कानन में एक ऐसा वामा-दल देख पड़ा मानो तारादल भू-पतित हुआ हो। उनमें से

कोई ऐसे नहा रही है जैसे रात्रि में ज्योत्स्ना स्वच्छ सरोवर में स्नान करती है। उनके कुचयुग ऐसी शोभा पाने लगे जैसे मानस-सरोवर में स्वर्ण-पद्म। कोई पुष्पों को उठा उठा कर काम-शृङ्खल में बांधने वाली अलकों को अलंकृत कर रही है, कोई गजदन्त-निर्मित और मुकुता-खचित वीणा हाथ में लिए है। सङ्गीत-रस-धाम (वीणा) में हैमतार चमक रहा है। कोई आनन्द से नाचती है। उसके उच्च कुचयुग के बीच रत्नमाला हिल रही है। चरणों में नूपुर और नितम्ब-विम्ब पर चन्द्रहार बज रहा है। इन सबकी पीठ पर जो मणिमय वेणी लटक रही है, उसे देख कर मन काम-विष से प्रज्वलित हो जाता है। यम-दूत रूपी फणी को देख कर सब भय से भागते हैं, किन्तु इस फणी को अपने २ गले में कौन बाँधना नहीं चाहता? कोयल जग कर तरु-शाख पर गा रही है। द्वार पर जल-यन्त्र से फुहार निकल रही है। समीर कुसुमागार से परिमल-धन लाकर आनन्दपूर्वक बह रही है।

वामादल शत्रुदल-दमनकारी लक्ष्मण को घेर कर गाने लगा—"अय चूड़ा-मणि! तुम्हें स्वागत है। हम सब निशाचरी नहीं हैं, किन्तु स्वर्ग-वासिनी हैं। हम सब नन्दन-कानन के सुवर्ण-मन्दिर में वास करतीं और उल्लास से अमृत-पान किया करती हैं। हमारे यौवन-रूपी उद्यान में सदा वसन्त रहता है। हमारे उरज-कमलयुग प्रफुल्ल रहते हैं। हे देव, हमारे अधर-सरस † का सुधारस कभी नहीं सूखता। हम अमर हैं। हम सब तुम्हें पति-रूप में ग्रहण किया चाहती है। हे नाथ, हमारे साथ चलो। हे गुणमणि, जिस सुख-भोग के लिए नर युग युग में कठोर तपस्या करते

† सरोवर

आये हैं, उस सुख को आज हम तुम्हें देना चाहती हैं। इस भव-मण्डल में रोग-शोकरूपी कीट जीवन-रूपी पुष्प को काट डालते हैं किन्तु उस देश में ये प्रवेश नहीं करते। हम सदैव आनन्द से निवास करती हैं"

सौमित्रि ने हाथ जोड़ कर कहा—"हे सुर-सुन्दरी-वृन्द, मुझ दास को क्षमा करो। मेरे बड़े भाई प्रभु रामचन्द्र की भार्य्या देवी मैथिली को कानन में अकेली पाकर राक्षस-नाथ रावण हरण कर लाया है। मुझे घोर युद्ध में उसका नाश कर के सती जानकी का उद्धार करना है। हे सुराङ्गने, ऐसा वर दो कि मेरी यह प्रतिज्ञा सफल हो। मेरा जन्म नर-कुल में हुआ है अतएव मैं तुम सब को मातृसम मानता हूं।" महा-बाहु ने इतना कह कर अपने सन्मुख देखा तो जान पड़ा कि वह वन विजन है। वामादल क्षणस्थायी स्वप्न अथवा जल-बिम्ब की भांति अदृश्य हो गया। इस मायामय संसार में माया की माया को कौन समझ सकता है! बली विस्मित होकर धीरे धीरे फिर आगे बढ़ने लगा।

कुछ देर बाद शूरवर ने दूर देश में सरोवर के कूल पर चण्डी का मन्दिर और रत्न-मण्डित सहस्रों सुवर्ण-सोपान देखे। प्रदीप जल रहा है। पीठतल* में पुष्प-राशि है। झांझ, शङ्ख और घण्टे बज रहे हैं। घट में जल भरा है। धूपदान में धूप ने जल कर पुष्प-गन्ध की सी सुगन्धि से देश को आमोदित कर दिया है। शूरेन्द्र ने जल में प्रवेश करके स्नान किया और यत्नपूर्वक नीलोत्पल उठाये। दशों दिशा सौरभ से पूर्ण हो गईं।

*जिस पर प्रतिमा रक्खी जाती है।

रामानुज ने मन्दिर में प्रवेश करके सिंह-वाहिनी की यथाविधि पूजा की और साष्टांग प्रणाम कर के कहा—"हे वरदे ! मुझ दास को ऐसा वर दीजिए कि मैं रावण का नाश कर सकूं। माता, मैं आप से यही भिक्षा मांगता हूं। हे अन्तर्यामिनी, मानव-मन की कथा को जितना तुम जानती हो, क्या मानव-रसना उसका वर्णन कर सकती है ? हे साध्वि, मेरे मनकी समस्त इच्छाओं को पूर्ण कर इस दास को यशस्वी कीजिये।"

दूर देश में मेघ गरजने लगे। वज्रनाद से लङ्का सहसा ऐसे कांपने लगी जैसे घोर भूकम्प से वन, मन्दिर और वृक्ष थर थर कांपते हैं। लक्ष्मण ने स्वर्ण-सिंहासन पर महामाया को देखा। क्षणकाल के लिए विद्युत की चमक ने उसके नयनों में चकाचौंध उत्पन्न करदी। वली मन्दिर को अन्धकारमय देख कर भय से घवड़ा गया। सती हँस पड़ी। अन्धकार उसी क्षण लुप्त हो गया। लक्ष्मण ने दिव्य चक्षु प्राप्त किए। आकाश में मधुर स्वर-तरङ्ग होने लगा।

महामाया ने कहा—"रे सुमित्रा-सुत, आज तुझ पर सब देव-देवी प्रसन्न हैं। इन्द्र ने तुझे देवास्त्र भेज दिया है। मैं स्वयम् शिव के आदेश से तेरा कार्य करने यहां आई हूं। देवास्त्र धारण कर विभीषण सहित वहां जा जहां मेघनाद यज्ञागार में वैश्वानर की पूजा कर रहा है। शार्दूल की भांति राक्षस पर सहसा आक्रमण कर के उसका नाश कर। मेरे वरदान से तुम दोनों अदृश्य होकर प्रवेश करोगे। जैसे मियान में तलवार ढकी रहती है वैसे मैं तुम दोनों को मायाजाल से

ढँक दूँगी । रे यशस्वि, निर्भय हृदय से चला जा ।" शूरमणि माया के चरणों में प्रणाम करके राम के पास चला ।

पक्षिगण जग कर फूल-वन में ऐसे बोलने लगे जैसे बाजे वाले किसी महोत्सव में मंगल-सूचक वाद्य-ध्वनि से देश पूर्ण कर देते हैं । शूरवर के शिर पर तरुराजी ने कुसुम-राशि की वृष्टि की । समीर मृदु शब्द करती हुई बहने लगी ।

कुञ्ज वन के पक्षियों की मधुर ध्वनि सुवर्ण-मन्दिर के उस सुख-सदन में पहुंची जहां बली इन्द्रजित् कुसुम-शय्या पर शयन कर रहा था । वीर-कुञ्जर कुञ्ज-वन के इन सुहावने गीतों से जाग उठा । जैसे भँवर नलिनी के कान में गुञ्जार और अपने प्रेम की रहस्य-कथा कहता है वैसे मेघनाद ने निद्रित प्रमीला का सादर चुम्बन किया और अपने कर-कमल से उसके कर-पद्म को पकड़ कर मधुर स्वर से कहा—"हे रूपवती, तुम हैमवती ऊषा सदृश हो, अतएव पक्षी-कुल तुम्हारा आह्वान कर रहा है । हे कमल-लोचना प्रिये, आँखें खोलो ! हे आनन्द दायनि, उठो । हे कान्ते, मेरा प्राणसूर्य-कान्त-मणि सदृश है और तुम उसके लिये रविच्छवि हो । तुम्हारे नेत्रों के मुँद जाने से मैं तेजोहीन हो जाता हूं । इस जगत में तुम मेरे भाग्य-वृक्ष की उत्तम फल हो । हे नयन-तारा, हे महामूल्य रत्न, हे शशिमुखि, उठ कर देखो कि तुम्हारी कान्ति को हरण कर कुसुम-मञ्जु कुञ्ज वन में खिल रहे हैं ।" रामा चौंक कर ऐसे उठी जैसे वंशी का सुर सुन कर गोप-बालाएं ।

सुचारु-हासिनी ने लज्जा से अवयव ढँक लिए । कुमार ने आदर से हँस कर कहा—"आज इतनी देर में प्रभात

हुई। कमलिनी खिल कर मेरे नेत्रों को तृप्त कर रही है। हे प्रिये! अब चलो, जननी के पद में नमस्कार करके विदा होऊँ। आज देव वैश्वानर की यथाविधि पूजा के उपरान्त भीषण वज्र-सम शरों की वर्षा से राम की संग्राम-इच्छा को मिटाऊँगा।"

रावण-नन्दन और रावण-पुत्रवधू सजने लगे। दोनों जगत में अतुलनीय हैं। प्रमीला वामा कुलोत्तमा है और वली मेघनाद पुरुषोत्तम है। शयन-मन्दिर से गमन करते समय दोनों ऐसे शोभायमान थे जैसे प्रभाततारा अरुणिमा के साथ। खद्योत लज्जा से मलिन मुख होकर दूर भाग गये। कुमुद-दल के शिशिररूपी अमृत को छोड़ कर अलिदल परिमल की आशा में जाने लगा। कोयल डाल पर मधुर स्वर से गाने लगी। राक्षस-वाद्य वज उठा। रक्षक * समूह ने शिर नवा कर सम्मान किया। 'मेघनाद की जय' का नाद आकाश में गूँज उठा। दम्पति-रत्न हर्ष से पालकी पर बैठ गया। पालकी उठाने वाले पालकी को मन्दोदरी के सुवर्ण-मन्दिर में ले गये। यह दीप्तिमय गृह जगत में अतुलनीय है। वह मरकत, हीरा, और हाथी दांत से बना है। उस गृह में वह सब शोभा पा रहा है जिसे विधाता ने नयनों के मनोरञ्जनार्थ सृजन किया है। राक्षसी हाथ में काल-दण्ड-सम अस्त्र लिए हुए फिर रही हैं। कोई अश्व पर आरूढ़ हैं और कोई भूतल पर खड़ी हैं। ताराकारा ‡ दीपावली चारो ओर जल रही हैं। असंख्य कुसुम-कानन की सुगन्धित वसन्तानिल बह रही है। वीणा की मृदु मनोहर ध्वनि उठ रही है।

* पहरे वाले सिपाही, ‡ तारे का सा आकार रखने वाले दीप

मेघनाद ने इन्दु-आनना प्रमीला सुन्दरी के साथ उस स्वर्ण-मन्दिर में प्रवेश किया। त्रिजटा नाम की राक्षसी शीघ्र आ गई। वीर केशरी ने उस से कहा—"अरी त्रिजटे, आज मैं निकुम्भिला यज्ञ पूर्ण करूंगा और पिता के आदेशानुसार राम से युद्ध करके राक्षस-रिपु-दल का नाश करूंगा। इस लिए जननी के पदों को पूजना चाहता हूं। उन से जाकर कहो कि तुम्हारे पुत्र और पुत्रवधू द्वार पर खड़े हैं।" त्रिजटा ने साष्टाङ्ग प्रणाम कर शूर से कहा—"हे युव-राज! रानी मन्दोदरी अभी शिव-मन्दिर में है। वह तुम्हारे मङ्गलार्थ उपवास और जागरण कर उमेश की पूजा कर रही हैं। हे शूर! इस जगत में तुम सा पुत्र और किसका है, और तुम्हारी सी माता और किस की है? इतना कह कर दूती ने सौदामिनी-गति से शीघ्र जाकर मन्दोदरी से निवे-दन किया—

"हे लङ्केश्वरि! देखो, तुम्हारा शक्तिधर पुत्र सुलोचन। सहित द्वार पर खड़ा है। तुम्हारी वधू रोहिणी का मान-भंजन करने वाली है। तुम्हारे पुत्र के रूप को देख कर शशांक अपने को कलंकी मानता है। तुम भाग्यवती हो। वली शूर इन्द्रजित् भुवन-विजयी है और सती प्रमीला भुवन-मोहिनी है!"

लङ्केश्वरी शिवालय से बाहर आई। दम्पति ने उसे प्रणाम किया। महिषी ने हर्ष से दोनों का शिर चूमा। अहा पृथ्वी पर माँ का हृदय प्रेमालय है; फूल-कुल का सौरभा-गार है; शक्ति और मुक्ति का धाम है; मणियों की खान है।

पुत्र शरद्-इन्दु के सदृश, वधू शरद्-कौमुदी के सदृश और राक्षस-कुल ईश्वरी मन्दोदरी तारा-किरीटिनी निशा

के सदृश शोभा पा रहे हैं । अश्रु-वारि-धारा रूपी शिशिर कपोलरूपी पर्ण पर गिर कर बहने लगा । वीरेन्द्र ने कहा—"हे देवि ! मुझ दास को आशीर्वाद दो । मैं आज यथाविधि निकुम्भिला-यज्ञ समाप्त कर और समर में प्रवेश कर राम का नाश करूँगा । पामर ने शिशु भाई वीरबाहु का वध किया है । मैं देखूँगा कि आज अपने बल से मुझे कौन पराजय करता है ? हे मातु ! पद-धूलि देओ । आज तुम्हारे प्रसाद से तीक्ष्ण शर-जाल द्वारा लंका को निर्विघ्न कर राजद्रोही विभीषण को बाँध लाऊँगा और सुग्रीव और अङ्गद को सागर के अतल जल में डुबा दूँगा ।" रानी ने रत्नाञ्चल से नयन-जल पोंछ कर उत्तर दिया—

"रे वत्स, तुझे कैसे विदा करूँ ? तू मेरे हृदय रूपी आकाश का पूर्ण शशि है । इस में किस प्रकार अन्धकार कर दूँ । तुझे बली सीता-कान्त और शूर दुरन्त लक्ष्मण से युद्ध करना है । विपक्ष में काल-सर्प-सम दयाशून्य विभीषण है । यह मूढ़ लोभ-मद से मत्त होकर अपने बन्धु-बान्धवों का ऐसे नाश कर रहा है जैसे क्षुधा से व्याकुल व्याघ्र अपने शिशु का नाश करता है । मैं तुझ से यह निश्चयपूर्वक कहती हूं कि निकषा सास ने उसे कुक्षण में गर्भ में धारण किया था । इस दुर्मति ने मेरी कनक-लंका को डुबो दिया ।"

मेघनाद ने हँस कर उत्तर दिया—"मां, तुम राक्षस-वैरी राम और लक्ष्मण से क्यों डरती हो ? अपने पिता के आदेशानुसार मैं अग्निमय शर-जाल से घोर संग्राम में दोनों को दो बार पराजित कर चुका हूं । तुम्हारे पद-प्रसाद से यह दास देव, दैत्य और नर सब को समर में सदा जीतता रहा है । हे देवि ! विभीषण तुम्हारे पुत्र के पराक्रम को जानता

हैं। सहस्राक्ष इन्द्र और देवता-गण मेरे बल-वैभव से अन-भिज्ञ नहीं है। पाताल में नागेन्द्र और पृथ्वी पर नरेन्द्र मेरे नाम से थर्राते हैं। मां, आज तुम किस लिए इतनी चिन्तित हो सो मुझ से कहो? मैं उस राम को कुछ नहीं समझता जिस से तुम इतनी डरती हो।"

महिषी ने बड़े आदर से शिर चूम कर कहा—"वत्स! वैदेही-पति मायावी मानव है। देव-गण उस के सहायक हैं। तुम ने जब उन दोनों को नाग-पाश से बांधा था तब उस बन्धन को किस ने खोला था? जब तुम ने निशा-रण में राम का ससैन्य वध किया था तब उन्हें किस ने बचाया था? मैंने सुना है कि राम के आदेश से जल में शिला तैरती है, अग्नि बुझ जाती है और वरसा होने लगती है। राम मायावी मानव है। उस के साथ युद्ध करने के लिए तुझे कैसे विदा करूं? हे विधि! कुलक्षण शूर्पनखा मां के उदर में ही क्यों न मर गई।" इतना कह कर रानी रोने लगी।

वीर कुञ्जर ने कहा—"हे माता, पूर्व कथा का स्मरण कर तुम वृथा ही विलाप करती हो। नगर के द्वार पर शत्रुदल उपस्थित है। क्या संग्राम में उसका संहार किए बिना मुझे सुख मिल सकता है? अग्नि लगने पर घर में कौन सोता रहता है? हे देवि, हमारा विख्यात राक्षस-कुल देव, दैत्य और नर सब को त्रास देनेवाला है। हे माता, मुझ रावणि इन्द्रजित के रहते हुए क्या हमारा कुल कलङ्कित होने पाएगा? यह कथा सुनकर मातामह दनुजेन्द्र मय और रथी मातुल क्या कहेंगे। सारा विश्व हँसेगा। बस मां, मुझ दास को आदेश देओ कि मैं समर में जाकर राम का नाश करूँ।

पक्षी वन में बोल रहे हैं। प्रभात होने लगा। इष्टदेव की पूजा करके दुर्दमनीय राक्षस-दल सहित मैं समर में जाऊंगा। हे देवि, अपने मन्दिर को अब लौट जाओ। मैं समर में विजयी होकर शीघ्र आऊंगा और तुम्हारे कमल-पदों की पूजा करूंगा। पिता की आज्ञा मिल चुकी है। अब तुम भी आज्ञा प्रदान करो।"

रत्न-अञ्चल से नयन-जल पोंछ कर लंकेश्वरी ने उत्तर दिया—"हे राक्षस-कुल-रक्षण, यदि तुम जाते हो तो इस काल-रण में विरूपाक्ष तुम्हारी रक्षा करें। मैं उनके पदों में यह प्रार्थना करती हूं। और क्या कहूं।" महिषी रोकर और प्रमीला की ओर देख कर कहने लगी—"वधु, तुम मेरे साथ रहो। तुम्हारे विधुवदन को देखकर इन दग्ध प्राणों को शीतल करूंगी।"

मेघनाद जननी के पद में प्रणाम कर विदा हुआ। रानी ने रोकर और पुत्रवधू को साथ लेकर गृह में प्रवेश किया।

युवराज पालकी त्याग कर पैदल चला और धीरे धीरे कुसुम-आवृत पथ से होकर यज्ञशाला की ओर आया। सहसा पीछे से नूपुर-ध्वनि सुनाई पड़ी। प्रणयी ने प्रणयिनी के चिर-परिचित पद-शब्दों को जान लिया। वीरेन्द्र ने हँस कर प्रमीला को बाहु-पाश में बांध लिया। सुन्दरी ने कहा—"नाथ, मैंने सोचा था कि यज्ञ-गृह में तुम्हारे साथ जाकर तुम्हें वीर-साज से सजा दूंगी किन्तु क्या करूं? सास ने अपने मन्दिर में रख लिया परन्तु तुम्हारे पद-युग को देखे बिना न रहा गया अतएव तुम्हारे पीछे २ आई हूं। सुना है कि शशिकला रवि के तेज से उज्ज्वल होती है। हे राक्षस-कुल-रवि, उसी प्रकार इस दासी को भी जानिये।

हे नाथ, मैं निश्चय से कहती हूं कि तुम्हारे बिना यह जगत मेरे लिए अन्धकार मात्र है ।"

उज्ज्वल मुक्ताहार से शोभित उर में उज्ज्वलतर मुक्ता-सदृश नयन-जल बरसने लगा । इसके सामने कमल-दल पर पड़े हुए शिशिर-विन्दु तुच्छ हैं ।

वीरोत्तम ने उत्तर दिया—"हे लङ्का-सुशोभिनी, रण में राघव का नाश कर मैं अभी लौट आऊंगा । प्रिये, तुम लंकेश्वरी के पास जाओ । हे साध्वि, क्या विधि ने तुम्हारे कमल नयन को रोने के लिए सृजन किया था ? अरी चन्द्रानने, तेरे नेत्र रूपी आलोकागार में अश्रुदाम रूपी मेघों का उदय क्यों हो रहा रहा है ? हे रूपवती, भ्रान्ति-मद से मत्त निशा तुझे ऊषा समझ कर शीघ्रता से भाग रही है । हे सती, अनुमति देओ कि मैं यज्ञागार में जाऊं ।"

जैसे मदन इन्द्र के आदेश से रति को छोड़ कर कुसमय में शंकर का ध्यान भङ्ग करने गया था, वैसे बली इन्द्रजित् रति-प्रतिमा प्रमीला को छोड़ कर चला । जैसे मदन ने कुलग्न में यात्रा की थी; वैसे जगत में अजेय राक्षस कुल-आशा मेघनाद ने यात्रा आरम्भ की । हा ! किसकी सामर्थ्य है जो विधना की गति को रोक सके ?

सती हाथ जोड़ कर और आकाश की ओर देख कर रोते हुए देवी की आराधना करने लगी "हे नगेन्द्र नन्दिनी, तुम्हारी दासी प्रमीला तुम्हारी साधना कर रही है । हे कृपामयि, लङ्का की ओर कृपा-दृष्टि करो । इस विग्रह में राक्षस-श्रेष्ठ की रक्षा करो । अपने अभेद्य कवच से शूर को आवरण करो । हे सति, तुम्हारी आश्रिता लता का जीवन उस तरु-

राज से सदा सुरक्षित रहता है। मा, देखना कुठार उसे स्पर्श न करे। हे जगदम्बे! तुम्हारे बिना और कौन रक्षा करेगा। हे अन्तर्यामिनी, यह दासी तुम से और क्या कहे।" जैसे समीर परिमल को राजालय में ले जाती है वैसे शब्दवह आकाश प्रमीला की आराधना को कैलाश-सदन में ले गया। इन्द्र भय से कांप उठा। वायुपति यह देख कर उस आराधना को दूर उड़ा ले गया। आंखों को पोंछती हुई सती प्रमीला ऐसे चली, जैसे यमुना-तट पर माधव को बिदा करके विरह-विधुरा* गोपियां शून्य मन से अपने शून्य गृहों में जाती थीं। बामा ने रोते हुए मन्दिर में प्रवेश किया।

छठा सर्ग

मेघनाद--वध।

देवी की पूजा करके वीर लक्ष्मण प्रभु राम के पद-कमल में आ उपस्थित हुआ। उसने मार्ग की समस्त घटनाओं और विघ्नों को विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए कहा—"भगवन, देवी ने मुझे वर देकर कहा है कि तुम मेघनाद पर सहसा आक्रमण करके राक्षसकुल का शीघ्र नाश करोगे। तुम पर सब देवी-देवता प्रसन्न हैं। वे तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे नर-मणि, आप अपनी अनुमति प्रगट कीजिए। प्रभात हो रहा है। विलम्ब करना ठीक नहीं। हे देव, मुझ दास को रावणि को रण में जाकर मारने की शीघ्र आज्ञा दो।"

रघुनाथ ने उत्तर दिया—"जिस यमदूत को देख कर जीव भयाकुल हो जाते हैं और अपने प्राण लेकर वायु वेग से

---

* कातरा।

भागते हैं, उसके सन्मुख मैं तुझे कैसे जाने दूं ? हे प्राणाधिक, जिस विषधर के विष से देव और नर सब ही भस्म होजाते हैं, उसके बिल में मैं तुझे कैसे भेज दूँ ?" इतने में राम विह्वल होकर इस प्रकार कहने लगे—"अरे सीता के उद्धार का कोई प्रयोजन नहीं। हे जलधि, मैंने तुझे वृथा ही बांधा। असंख्य राक्षस संग्राम में यों ही मारे गए। इस कनकपुर में राजेन्द्र सुग्रीव और उनके योद्धाओं का मेरे साथ आना निष्फल ही हुआ। हा ! मैंने शोणित-श्रोत को वर्षा के पानी की भाँति बहा कर पृथ्वी को अकारण रक्तपूर्ण किया। भाग्य-दोष से राजपाट, माता-पिता और बन्धु-बान्धव सब कोखो दिया। अन्धकारमय घर में केवल मैथिली दीप-स्वरूप थी किन्तु दुरादृष्ट* ने उसे भी बुझा दिया। भाई, अब इस संसार में मेरा और कौन है जिसका मुँह देखकर मैं जी सकूंगा? लक्ष्मण, आओ हम वन को लौट चलें। आशा की प्रवञ्चना† से मुग्ध होकर हम कुसमय में यहां आए थे।"

सौमित्रि-केशरी ने वीरदर्प से उत्तर दिया—"हे रघुनाथ, तुम इतना क्यों डरते हो ? जो देव-बल से बली है, उसे त्रिभुवन में कौन जीत सकता है? देवकुल-पति सहस्राक्ष तुम्हारे पक्ष में हैं। ज़रा लङ्का की ओर देखो। देव¶-क्रोध प्रलय-काल के मेघों की भाँति उसकी स्वर्ण-आभा को चारों ओर से आवृत्त किए हैं, किन्तु हे प्रभु, तुम्हारा वास-स्थान देव-हास्य से उज्ज्वल हो रहा है। दास को आज्ञा दो तो वह देवास्त्र धारण करके राक्षस-गृह में प्रवेश करे। हे नाथ, तुम विज्ञतम हो। तुम्हारे पद-प्रसाद से मैं मेघनाद का नाश अवश्य करूंगा। आप देवाज्ञा की अवलेहना क्यों करते हैं ? हे आर्य,

* बद क़िस्मती † छल ¶ देवताओं का क्रोध

तुम्हारी मति सदा धर्म-पथ में रहती है । आज यह अधर्म-वृत्ति कैसे उत्पन्न होगई ? क्या कोई मंगल-घट को पदाघात† से तोड़ता है ? "

विभीषण ने राम से विनयपूर्वक कहा—" हे राघवेन्द्र, मित्र लक्ष्मण का कथन सर्वथा सत्य है । इन्द्रजित मेघनाद निःसन्देह पराक्रम में दुर्दमनीय यमदूत के समान है, किन्तु आज आप उस से वृथा ही डरते हैं । हे रघुकुल-मणि, आज रात को मैंने राक्षस-कुल-लक्ष्मी को स्वप्न में देखा था । साध्वी ने मुझ अधीन से इस प्रकार कहा—' हे विभीषण, तेरा भाई मद में मत्त है । अब मैं इस पापमय लङ्का में नहीं रह सकती । क्या कभी पङ्किल* सलिल में कमलिनी खिलती है ? क्या किसीने मेघावृत गगन में तारा देखा है ? देवता तुझ पर तेरे पूर्व कर्मफल से प्रसन्न हैं । तुझे राज-सिंहासन, छत्र और दण्ड मिलेगा । रे यशस्वि, आज मैं विधि के विधान से राक्षस-राज रावण के पद पर तेरा अभिषेक करती हूं । सौमित्रि-केशरी तेरे भ्रातृपुत्र मेघनाद को कल मारेगा और तू उसकी सहायता करेगा । रे भावी राक्षसराज, आदर से देवाज्ञा का पालन कर । ' मैंने जग कर देखा कि शिविर स्वर्गीय सौरभ से पूर्ण है और वहां स्वर्गीय मृदु वाद्य सुनाई पड़ रहा है । द्वार पर मदनमोहन को मोहने वाली उस रूप माधुरी को देखकर मैं विस्मित होगया । देवी के केशों में विविध रत्न शोभा पा रहे थे । जगदम्बा तत्काल ही अदृश्य हो गई । मैं बहुत देर तक सतृष्ण नयन से देखा किया किन्तु मनोरथ सफल न हुआ । माता ने पुनः दर्शन नहीं दिया । हे दशरथि-

---

† ठोकर * मैले जल

रथि, इस सकल कथा पर ध्यान दो । आज्ञा दो कि मैं लक्ष्मण के साथ यज्ञागार में जाऊँ । हे नरपाल! श्रद्धा से देवादेश का पालन करो । हे राघव-श्रेष्ठ, मैं सच कहता हूं कि तुम्हारा इष्ट अवश्य सिद्ध होगा ।"

सीतानाथ ने सजल नयन से उत्तर दिया—"हे राक्षस-कुलोत्तम, पूर्व कथा का स्मरण कर मुझे दारुण दुःख होता है । मैं इस भ्रातृ-रत्न को घोर संकट में कैसे डाल दूं ? सखे, जब मन्थरा के नीच परामर्श से और मेरे भाग्य-दोष से माता कैकेई निर्दया हो गई थीं, और मैंने पिता की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिये राज्य का त्याग किया था, तब प्रियतम भाई लक्ष्मण ने भ्रातृ-प्रेम के वश होकर स्वेच्छा से मेरा साथ किया था । उस समय माता सुमित्रा रोती थीं और देवी उर्मिला अन्तःपुर में उच्च स्वर से विलाप करती थी । सब नगर-निवासियों ने बन-गमन से विरत करने के लिए बड़ा अनुरोध किया, किन्तु भाई ने तरुण यौवन में सब सुखों को तिलाञ्जलि देकर मेरे पीछे बन में सहर्ष प्रवेश किया । उस समय माता सुमित्रा ने जो कहा था सो सुनो—'राम, तुमने मेरे नयन-मणि को हरा है । न मालूम तुमने किस माया-बल से मेरे वत्स को वश में कर लिया है । तुम को यह धन सौंपती हूं, और तुम से यह भिक्षा मांगती हूं कि मेरे इस रत्न को बड़े यत्न से रखना'। हे मित्रवर, ऐसी अवस्था में सीता का उद्धार करना मुझे प्रयोजनीय नहीं । अब मैं बन को लौट जाऊंगा । देव, दैत्यों और मानवों को त्रास देनेवाला वीर मेघनाद समर में दुर्वार है । जिसका नाश बाहु बलेन्द्र सुग्रीव, रण-विशारद युवराज अङ्गद, पवनसम महा पराक्रमी वीर हनुमान, समर-क्षेत्र में अग्नि के समान धूम्राक्ष, विपक्ष पक्ष के लिए केशरी-

सदृश नल-नील आदि योद्धा और तुम जैसे महारथियों की सहायता से मैं स्वयम् न कर सका, उसके साथ अकेला लक्ष्मण कैसे युद्ध कर सकेगा? सखे, आशा मायाविनी है, इस लिए इस अरि-पुर में हम अलङ्घ सागर को लांघ कर आ गये थे।"

सहसा आकाशवाणी हुई,—"हे वैदेही-नाथ, तुम देव-कुल-प्रिय हो। क्या तुम्हें देव-वाक्य में संशय करना उचित है? तुम देवादेश की अवज्ञा क्यों करते हो?"

तब राघव ने शिविर में प्रवेश करके अनुज को देवास्त्र से सजाया। सुन्दर वीर तारकारि की भांति शोभा पाने लगा। उसने छाती पर तारामय कवच पहन लिया। कमर में रत्न-मण्डित असि भास्कर के सदृश चमकने लगी। हाथी-दांत की जड़ाऊ ढाल रवि की परिधि की भांति पीठ पर चमचमाने लगी। उसके साथ शरों से भरा हुआ तरकस हिलने लगा। धनुर्धर ने बांए हाथ में देव-धनु को ज़ोर से पकड़ लिया। मस्तक का मुकुट चारों दिशाओं को उज्ज्वल करता हुआ शोभा पाने लगा। मुकुट का सुन्दर चूड़ा ऐसे हिलता था जैसे केशरी की पीठ पर केशर *। रामानुज का मुख ऐसा तेजोमय और दीप्तिमान था जैसे मध्याह्न का तेजस्वी देव अंशुमाली। वीरवर बाहर हुआ। उसके साथ विभीषण वीरवेश में रण के लिये निकला। देवताओं ने पुष्प-वर्षा की। आकाश में मंगल बाजे बज उठे और अप्सराएं नृत्य करने लगीं। त्रिभुवन जय-रव से पूर्ण हो गया। रघुवर ने आकाश की ओर देख कर विनीत भाव से आराधना की—"हे अम्बिके, आज यह भिखारी तुम्हारे

---

* बाल

पदाम्बुज में आश्रय माँगता है। हे देवि, अपने इस किङ्कर को भूलना नहीं। हे माता, मैंने धर्म के लिए कितना कष्ट उठाया है सो आप को विदित है। हे सति, इस घोर समर में प्राणाधिक भाई लक्ष्मण की रक्षा करो। हे निस्तारिणि, तुमने दुर्दान्त दानव का दलन कर देव-दल का निस्तार किया था। महिषमर्दिनी देवि, इस दुर्मद राक्षस को मार कर इस अधीन की सहायता करो।"

इस प्रकार राक्षस-रिपु राम ने सती की स्तुति की। जैसे समीर परिमल को राजालय में ले जाती है, वैसे शब्द-वह आकाश राम की आराधना को कैलाश में ले गया। माता नगेन्द्र नन्दिनी ने उस आराधना को सुनकर आनन्द से 'तथास्तु' कह दिया।

ऊषा हँसती हुई उदयाचल में ऐसे उदय हुई, जैसे अन्धकारमय हृदय में दुःख-तम विनाशिनी आशा। निकुञ्ज में पक्षी बोलने लगे। मधुजीवी भँवर चारो ओर गुञ्जार करते हुए इधर उधर जाने लगे। रात्रि तारादल सहित मृदुगति से जाने लगी। ऊषा की ललाट में एक तारा शत तारों के तेज से शोभा पाने लगा। वन में नव ÷ तारावली खिल उठी।

राम ने विभीषण से कहा—"हे मित्र, मैं अपने अमूल्य रत्न को तुम्हें समर्पण करता हूं। इस समय कुछ अधिक कहना निष्प्रयोजन है। आज मेरा जीवन और मृत्यु तुम्हारे हाथ में है।'

÷ फूल

विभीषण ने राम को आश्वासन दिया—"हे रघुकुल मणि, तुम देव-कुल के प्रिय हो। तुम्हें किसका डर है? शूर सौमित्री समर में मेघनाद का नाश अवश्य करेगा।"

लक्ष्मण राम के पद में प्रणाम करके मित्र विभीषण के साथ चले। दोनों को घनावली ने ऐसे घेर लिया, जैसे शीतकाल में प्रभात समय कोहरा गिरिशृङ्ग को घेर लेता है।

दोनों ने मायादेवी के बल से प्रबल होकर अदृश्य रूप में नगर में प्रवेश किया। लक्ष्मण के स्पर्श से द्वार वज्रनिनाद करता हुआ खुल गया किन्तु उसकी आवाज़ किसी ने नहीं सुनी। लङ्का के रक्षक माया के छल से अन्धे हो रहे हैं। किसी ने उन दुरन्त यमदूत सम दोनों रिपुओं को नहीं देखा। जैसे सर्प कुसुम-राशि में प्रवेश करता है वैसे लक्ष्मण ने लंका में बड़े कौशल से प्रवेश किया।

रामानुज ने विस्मय से देखा कि द्वार पर चतुरङ्गनी सेना, मातङ्ग पर निषादी, तुरङ्ग पर सादी वृन्द, रथ पर महारथी और भूतल पर दुर्जय, भीममूर्ति, भीमवीर्य यमदूत सदृश पैदल सिपाही सुसज्जित हैं। आकाश में शस्त्रास्त्र की विभा प्रलय-काल की अनल के समान उठ रही है। लक्ष्मण ने सुवर्ण के रथ पर आरूढ़ प्रक्ष्वेडनधारी महाराक्षस सर्व-भक्षक विरूपाक्ष तथा ताल वृक्ष सम दीर्घ और रिपुकुल का काल तालजङ्घा‡ को भय से देखा। बली काल भी गज की पीठ पर है। रण-विशारद, रण-प्रिय और वीर मद से सदा प्रमत्त रहने वाला प्रमत्त फिर रहा है। विडुर पक्षपति के

---

‡ राक्षसों के नाम।

समान है। समस्त महाबली राक्षस, देव, दैत्य और नरलोक को त्रास देने वाले हैं। धीरे धीरे दोनों चले। सहस्रों हेम-गृह, मन्दिर, दुकान, उद्यान, सरोवर, और फव्वारे लक्ष्मण के दृष्टिगोचर हुए। अश्वालय अश्वों से और गजालय गजों से पूर्ण है। अग्निवर्ण रथों की गणना नहीं हो सकती। अस्त्रशाला और नाट्यशाला सुरपुर के रत्नों से मण्डित है। लंका का सब विभव कौन वर्णन कर सकता है? वह देवताओं के प्रलोभन और दैत्यों के मात्सर्य की वस्तु है। जैसे सागर के रत्नों और आकाश के नक्षत्रों को कोई नहीं गिन सकता वैसे लंका के धन और वभत्र की गणना नहीं हो सकती।

शूर लक्ष्मण नगर के बीच में रावण के राजगृह को कौतुक से देखने लगा। सोने और हीरे के श्रेणीबद्ध स्तम्भ शोभा पा रहे हैं। गृह-चूड़ा विभामयी हेमकूट की शृङ्गावली की भाँति आकाश को स्पर्श कर रहा है। गृहों की खिड़कियां हाथी-दांत के चक्षु-विनोदक चौखटों और स्वर्ण द्वारों की कान्ति से शोभायमान हैं। महा यशस्वी सौमित्रि ने विस्मय से मित्र विभीषण की ओर देख कर कहा—"हे, रक्षोवर, राजकुल में तुम्हारा अग्रज धन्य है। जगत में वह महिमा का अर्णव है। अहा! ऐसा विभव भवतल में किसका है?"

विषाद से श्वास लेकर विभीषण ने उत्तर दिया—"हे शूरमणि, तुमने जो कहा सो सत्य है। निःसंदेह ऐसा विभव भवतल में किसी का नहीं है। किन्तु इस संसार में कोई पदवी चिरस्थायी नहीं है। सागर-तरङ्ग की भाँति एक वस्तु जाती है और दूसरी आती है। जगत की यही रीति है।"

"हे रथिवर, चलो, शीघ्र चलो। मेघनाद को मार कर कार्य पूर्ण करो। हे देव, यश रूपी सुधा-पान कर के अमरत्व को प्राप्त करो।"

दोनों माया के प्रसाद से अदृश्य होकर शीघ्रगामी हुए। लक्ष्मण ने सरोवर के कूल पर मृगाक्षी * गञ्जिनी राक्षस-वधुओं को अधर में मधुर हँसते हुए और कमर में सुवर्ण-कलश लिए हुए देखा। जलाशय में कमल फूल खिले हैं। कहीं भीमकाय रथी वेग से बाहर आते हैं। कहीं पैदल सैनिक फूल-शय्या त्याग कर और कवच पहन कर आ रहा है। कोई भैरव ‡ रव से शृंग † का नाद कर निद्रा को भगाता है। अश्वपाल अश्वों को सजा रहे हैं। हाथी चिग्घार कर प्रमाद से मुगदर पकड़ रहे हैं। उनकी पीठ पर रेशमी झूल की झालर में मोतियों की पंक्तियां शोभा पा रही हैं। सारथी स्वर्णध्वज रथ पर विविध अस्त्रों को बड़े यत्न से उठा उठा कर रख रहे हैं। मन्दिरों में प्रभाती बाजे बजने लगे। मालिनी फूल तोड़ कर चलीं। उसने मार्ग को सौरभ से भर दिया। फूल-कुल ने ऊषा की भाँति अपने रूप से चारों दिशाओं को उज्ज्वल कर दिया। कहीं भारी × दही और दूध लेकर जा रहा है। क्रमशः कल्लोल बढ़ रहा है। सब पुरवासी जाग रहे हैं।

कोई कह रहा है—"चलो, अब चल कर प्राचीर पर चढ़ें नहीं तो फिर स्थान न मिलेगा और उस अद्भुत युद्ध को न देख सकेंगे। आज युवराज और सब श्रेष्ठ वीरों को समर-साज में देख कर अपनी आंखों को तृप्त करेंगे।" कोई अभिमान से

---

* मृग-नयनियों का तिरस्कार करने वाली ‡ भयंकर आवाज़ † सींग × बँहगी उठाने वाला

कह रहा है— "प्राचीर पर चढ़ कर क्या होगा ? युवराज पल भर में राम और लक्ष्मण का नाश करेगा । जगत में ऐसा कौन है जो उसके शर से बच सके । जैसे अग्नि शुष्क तृण को दहन करता है वैसे राक्षस-दल विपक्ष दल को दहन करेगा । वह अधम विभीषण को प्रचण्ड-आघात से दण्ड देकर बांध लेगा और फिर रणजयी राज-प्रसाद के लिए सभास्थल में अवश्य आवेगा, अतएव सभास्थल में ही चलना ठीक होगा ।"

लंका के विभव और ऐश्वर्य का इस प्रकार निरीक्षण करते हुए लक्ष्मण और विभीषण निकुम्भिला यज्ञागार के निकट आ पहुंचे ।

इन्द्रजित अकेला कुशासन पर बैठा हुआ इष्टदेव की पूजा कर रहा है । वह रेशमी वस्त्र धारण किए है । भाल पर चन्दन की बिन्दी और गले में फूलों की माला है । धूपदान में धूप जल रही है । चारों ओर पवित्र घृत के दीप जल रहे हैं । पुष्पों की ढेरियाँ रक्खी हैं । पात्रों में गंगाजल भरा है । हे जाह्नवि, तुम कलुष नाशिनी हो । बगल में सोने का घण्टा है । हेमपात्र में पूजा की विविध सामग्री रक्खी है । द्वार बन्द है । रथीन्द्र अकेला बैठा हुआ तप में निमग्न है ।

जैसे क्षुधाऽतुर व्याघ्र गो-गृह में प्रवेश करता है वैसे भीम-बाहु लक्ष्मण ने मायाबल से देवालय में प्रवेश किया । मियान में तलवार झम झम करने लगी । तरकस बाणों के रगड़ से ध्वनित होने लगा । वीर लक्ष्मण के पदभार से मन्दिर काँपने लगा ।

मेघनाद ने चौंक कर बन्द आंखें खोलीं तो उसे एक देवाकृति तेजस्वी मूर्ति मध्याह्न के सूर्य के समान सन्मुख देख

पड़ी। शूर (मेघनाद) ने साष्टाङ्ग प्रणाम कर के और हाथ जोड़ कर कहा—"हे अग्निदेव, यह दास आज तुम्हारी पूजा कर रहा है. क्या इसी लिए तुमने अपने पदार्पण से लंकापुरी को पवित्र किया है? किन्तु हे तेजस्वि, इस अधीन को प्रसाद देने के लिए तुम राक्षस-कुल-रिपु लक्ष्मण के रूप में क्यों आए हो? हे प्रभामय, तुम्हारी यह क्या लीला है?" बली ने भूतल में फिर प्रणाम किया।

रौद्र दाशरथी ने वीरदर्प से उत्तर दिया—"हे रावणि, निरीक्षण कर के देखो, मैं अग्निदेव नहीं हूं। मेरा नाम लक्ष्मण है। मेरा जन्म रघुकुल में हुआ है। रे वीरसिंह! संग्राम में तेरा संहार करने के लिए मैं यहां आया हूं; शीघ्र मुझ से युद्ध कर।" जैसे पथिक पथ में फणीश्वर को देख कर भय से हीन गति हो जाता है, वैसे मेघनाद लक्ष्मण की ओर देखने लगा। आज भयशून्य हृदय सभय हो गया। हाय रे, आज प्रचण्ड उत्ताप से लोह-पिण्ड जल गया। तेज-पुञ्ज सूर्य को राहु ने सहसा ग्रास कर के भुवन में अन्धकार कर दिया।

मेघनाद ने विस्मित होकर कहा—"हे रथि, यदि तुम रामानुज हो तो बताओ इस अरिपुर में किस छल से तुमने प्रवेश किया? यक्षपति को त्रास देने वाले भीम अस्त्रधारी सैकड़ों राक्षस नगर-द्वार की रक्षा कर रहे हैं। इस पुरी की प्राचीर पर्वतसम उच्च हैं। असंख्य योद्धा चक्रावली के रूप में प्राचीर पर भ्रमण कर रहे हैं। हे बलि, किस माया-बल से तुमने इन सब को छला? इस भव* में मानव कुल सम्भव† और देवकुलोद्भव‡ ऐसा कौन वीर है जो अकेला इस राक्षसवृन्द को रण में विमुख कर सके? हे सर्वभुक्

*संसार † मानवकुल और देवकुल में जन्मा हुआ ‡ सब को खाने वाला

इस प्रपञ्च से इस दास की वञ्चना क्यों करते हो? हे कौतुकि, यह तुम्हारा कैसा कौतुक है? हे देव, सौमित्रि निराकार नहीं है। वह इस मन्दिर में कैसे प्रवेश कर सकता है? देखो अभी तक द्वार बन्द है। हे प्रभु, इस किंकर को आज ऐसा वर देओ कि वह राम का बध कर लंका को निःशंका करे, किष्किन्ध्या-पति सुग्रीव को दूर भगा दे और राजद्रोही विभीषण को बाँध कर राजपद में ले आवे। सुनो, शृङ्गनिनादकदल चारों ओर शृङ्ग नाद कर रहा है। मेरे विलम्ब करने से राक्षस-सैन्य भग्नोद्यम* होजायगी, बस अब मुझे जाने की आज्ञा दो।"

देवाकृति सौमित्री केशरी ने उत्तर दिया—"रे दुरन्त-रावणि मैं तेरा काल हूं। क्या आयुहीन जन को काटने के लिए सांप ज़मीन में छेद करके नहीं निकल आता? तू सदा मद में मत्त रहता है। रे मूढ, देव-बल से बली होकर तू सदा देवकुल की अवहेलना करता रहा है। रे दुर्मति, तू आज इतने दिन बाद रण में मारा जायगा। मैं देवादेश से युद्ध के लिए तेरा आवाहन करता हूं।"

इतना कहकर बली लक्ष्मण ने बलपूर्वक मियान से तलवार निकाल ली। जैसे इन्द्र के हाथ में वज्र शोभा पाता है वैसे लक्ष्मण के हाथ की तलवार आंखों को चकाचौंध कर प्रलय-काल के अनल तेज के समान शोभा पाने लगी। रावणि ने कहा—"यदि तुम वास्तव में भीमबाहु रामानुज लक्ष्मण हो तो घोर युद्ध करके मैं तुम्हारी संग्राम-इच्छा को अवश्य मिटाऊंगा। क्या रणरंग में इन्द्रजित कभी पीछे हटा है? हे शूर श्रेष्ठ, इस धाम में तुम प्रथम बार आए हो; अतएव राक्षस

* उद्यम रहित।

रिपु होने पर भी तुम हमारे अतिथि हो । मेरी अतिथि-सेवा इतनी देर के लिए ग्रहण करो । मैं वीर-साज से सज लूँ । निरस्त्र अरि पर आघात करना रथिकुल की प्रथा नहीं है । हे वीरवर, तुम्हें यह विधि अविदित नहीं है । तुम क्षत्रिय हो; तुम से और क्या कहूं ?"

सौमित्रि ने मेघ-गर्जन से कहा—"क्या जाल में बाघ के आ जाने पर किरात उसे कभी छोड़ देता है ? रे अबोध, तुझे अभी ऐसे ही वध करूंगा । तेरा जन्म राक्षस-कुल में हुआ है। रे पापी, तेरे साथ क्षात्र-धर्म का पालन करना वृथा है । जिस कौशल से हो सके शत्रु को आज मारूँगा" ।

इन्द्रजित् ने कहा-(जैसे शूर अभिमन्यु ने सप्त * शूर को देख कर तप्त लौहाकृति होकर क्रोध से कहा था) "रे क्षत्र-कुलग्लानि लक्ष्मण, तुझे शतबार धिक्कार है । तू बड़ा निर्लज्ज है । क्षत्री-समाज के रथीवृन्द तेरा नाम सुन कर घृणा से अपने कानों में उँगली डालेंगे । तू ने चोर की भांति इस गृह में प्रवेश किया है, इसलिए चोरोचित दण्ड देकर तुझे परास्त करूंगा । रे पामर ! गरुड़ के वास-स्थान में घुसने वाला साँप क्या कभी अपने बिल में जा सकता है ? रे दुर्मति, तुझे यहां कौन लाया ?"

पलक मारते ही भीमबाहु मेघनाद ने शृङ्ग-पात्र उठा कर लक्ष्मण के सिर पर बड़ी ज़ोर से फेंक कर मारा । लक्ष्मण इस भीम प्रहार से भूतल पर ऐसा गिरा जैसे प्रभञ्जन के बल से तरुराज गिरता है । देवास्त्र झनझना उठा । मन्दिर घोर भूकम्प से कांप गया । रुधिर की धारा बहने लगी । इन्द्रजित

* द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, दुःशासन, शकुनि, और दुर्योधन ।

ने तत्क्षण लक्ष्मण की देव-असि पकड़ ली, किन्तु उसे उठा न सका। वह लक्ष्मण का धनुष पकड़ कर खींचना चाहता था किन्तु वह उसे छीन न सका। उसने कोप से ढाल पकड़ ली किन्तु इस कार्य में भी उसका वल विफल हुआ। जैसे शुण्डधर शृङ्गधर के शृङ्ग को शुण्ड में लपेट कर खांचता है वैसे शूरेन्द्र ने तरकस को वृथा ही खींचा। माया की माया को जगत में कौन समझ सकता है ? वीरवर ने चकित होकर द्वार की ओर देखा तो भीषण रण में धूम-केतुसम चचा विभीषण हाथ में भीमतम शूल लिए हुए दृष्टि-गोचर हुआ। मेघनाद ने विषाद से कहा—"अहा ! इतनी देर में मुझे मालूम हुआ कि लक्ष्मण ने कैसे राक्षसपुर में प्रवेश किया होगा।

"तात, क्या यह तुम्हारा उचित काम है ? सती निकषा तुम्हारी जननी है। तुम्हारा सहोदर राक्षस-श्रेष्ठ दशानन और शम्भुसम शूलधारी कुम्भकर्ण है। तुम्हारा भ्रातृपुत्र इन्द्रविजयी है। अरे तात, अपने गृह का पथ चोर को दिख-लाते हो और रत्नालय में चण्डाल को लाकर बैठाते हो। किन्तु मैं तुम्हारी निन्दा नहीं करता, क्योंकि तुम पितृतुल्य गुरुजन हो। कृपा कर द्वार को छोड़ दो। मैं अस्त्रागार में जाऊंगा और रामानुज को यमपुरी में भेज कर आज लंका के कलंक को दूर करूंगा।"

विभीषण ने उत्तर दिया—"हे श्रीमान, तुम्हारा यह अनुरोध वृथा है। मैं राम का दास हूं। तुम्हारे अनुरोध को मानकर उनके विरुद्ध नहीं कर सकता"। मेघनाद ने कातरता से उत्तर दिया-"हे पितृव्य, तुम्हारी बात सुनकर मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। हा ! तुम राम के दास ! हे तात, यह

बात तुम अपने मुँह में कैसे लाये? विधि ने शिव, के ललाट में चन्द्रमा को स्थान दिया किन्तु क्या वह भूतल पर गिर धूल में लुढ़कता है? हे रथिवर, तुम अपने आपको कैसे भूले हो? कहां तुम महा कुलजन्मा और कहां अधम राम! राजहंस तो सदा स्वच्छ सरोवर के पंकज-कानन में केलि करता है। हे प्रभु, क्या वह कभी पंकिल सलिल में जाता है? हे वीर केशरि, क्या मृगेन्द्र-शृगाल के साथ कभी मित्र-भाव से सम्भाषण करता है? मैं अज्ञ हूं। तुम विज्ञतम हो। तुम्हें सब कुछ विदित है। हे शूर, लक्ष्मण एक क्षुद्र नर है; नहीं तो क्या वह अस्त्रहीन योद्धा को संग्राम के लिए सम्बोधन करता? हे महारथि, क्या यह महारथियों की प्रथा है? लंकापुरी का प्रत्येक शिशु यह कथा सुनकर हँसेगा। मुझे शस्त्र ले आने दो। लौट कर देखूंगा कि आज किस देवबल से कुमति सौमित्रि समर में मुझे विमुख करेगा? हे राक्षस श्रेष्ठ! देव, दैत्य और नर सब ने ही आंखों से मेरे पराक्रम को रण में देखा है। ऐसे दुर्बल मानव को देख कर क्या यह दास डरेगा? इस दम्भी ने यज्ञागार में अति साहस से प्रवेश किया है। मुझे आज्ञा देओ कि इस नराधम को दण्ड दूं। हे तात, हाय! तुम्हारी जन्मभूमि पर वनवासी पदार्पण करें! हे विधाता, क्या नन्दन-कानन में दुराचारी पशु भ्रमण करने पाते हैं? हे तात, मैं तुम्हारा भ्रातृ-पुत्र ऐसे अपमान को कैसे सह सकता हूं? हे रक्षोमणि, क्या तुम इस घोर अपयश को सहन कर सकते हो?" जैसे महा-मन्त्र के बल से सर्प अपना सिर नीचा कर लेता है वैसे रथी रावणानुज ने लज्जा से मलिन वदन होकर रावणात्मज को उत्तर दिया—"हे वत्स, मैं दोषी नहीं हूं। तुम वृथा ही मुझ पर

दोषारोपित करते हो। राजा अपने कर्म-दोष से कनक-लंका को डुबा कर आप भी डूब रहा है। लंकापुरी पाप से परिपूर्ण है। जैसे वसुधा प्रलय में डूबती है, वैसे लंका काल-सलिल में डूब रही है। मैं आत्मरक्षार्थ राघव-पद-आश्रय में आश्रयी हूं।"

रात्रि में जैसे मेघ आकाश में गर्जता है वैसे बली वीरेन्द्र ने कोप से गर्ज कर कहा—"हे राक्षसानुज, जगत में विख्यात है कि तुम धर्म-पथ-गामी हो। तुमने किस धर्म-मत से भ्रातृत्व और जातित्व को तिलाञ्जलि दी है? शास्त्र में लिखा है कि गुणवान परजन से गुणहीन स्वजन श्रेयस्कर है। अपना अपना ही है और पराया पराया ही। हे राक्षसेश्वर, यह कु-नीति तुमने कहां सीखी? किन्तु मैं वृथा ही तुम्हारा तिरस्कार करता हूं। ऐसे सहवास में ऐसी बर्बरता क्यों न सीखोगे? जिसकी संगति नीच के साथ है वह दुर्मति नीच क्यों न हो?"

उस ओर माया के यत्न से लक्ष्मण को चेतना हुई। बली ने हुंकार भर कर धनुष को टङ्कारा और खरतर* शर सन्धान कर अरिन्दम इन्द्रजित को ऐसे वेध दिया जैसे महाधनुर्धर तारकारि ने अपने शरजाल से तारक को बेधा था। जैसे विशाल भूधर पर वर्षाकाल में जलस्रोत बहता है वैसे मेघनाद के शरीर से रुधिर-धारा बहने लगी।

रथी व्यथा से अस्थिर हो गया और यज्ञागार के पात्र, शङ्ख, घण्टा आदि सब को शीघ्र उठा उठा कर कोप से लक्ष्मण की ओर ऐसे फेंकने लगा जैसे वीर अभिमन्यु समर में अरि-दल के अस्त्रबल से निरस्त्र होकर कभी रथचूड़, कभी रथ-

* पैना बाण

चक्र कभी भग्न* असि, कभी छिन्न† चर्म, कभी भिन्न वर्म आदि जो कुछ हाथ में आता था वही शत्रु पर फेंकता था। किन्तु माया-मयी माया ने उन सब से लक्ष्मण को ऐसे बचाया जैसे जननी कर-पद्म सञ्चालन द्वारा सुप्त‡ सुत को मच्छरों से बचाती है। रावणि ने क्रोधित होकर और भीमनाद से गर्ज कर लक्ष्मण पर ऐसे धावा किया जैसे सिंह अपने प्रहारक पर। किन्तु उसने माया की माया से अपने चारों ओर देखा कि भीम दण्डधर यमराज भीषण महिष पर आरूढ़ हैं; शूलपाणि शंकर हाथ में शूल लिए हैं; चतुर्भुज चतुर्भुज में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हैं और देववृन्द सुदिव्य विमान में विराजमान हैं। वली ने निराश होकर कहा—"हाय रे! अब मैं ऐसे मरता हूं जैसे कलाधर राहु के ग्रास से, अथवा सिंह जाल में"। लक्ष्मण ने धनुष को छोड़ कर म्यान से तेज़ तलवार निकाली। उसकी दीप्ति और झलक के आलोक को देखकर नयन झुलस गए। खड्गाघात के लगते ही वली इन्द्रजित शोणिताद्र होकर भूतल पर गिर पड़ा। वसुधा थर थर कांपने लगी। सिन्धु गरज उठा। सहसा भैरव-आरव से विश्व पूर्ण हो गया। स्वर्ग, पाताल और पृथ्वी में दानव और मानव आदि सब आतङ्क से शङ्कित होगए। हैम-सिंहासनारूढ़ रावण का कनक-मुकुट सहसा ऐसे गिरा जैसे कोई वीर रथी अपने रिपु के रथ के चूड़े को काट कर गिराता है। शूर लङ्केश ने सशङ्क होकर शंकर को स्मरण किया। प्रमीला की दाहिनी आंख फड़कने लगी। सती ने आत्मविस्मृत होकर अकस्मात् सुन्दर ललाट के सिन्दूर-विन्दु को पोंछ डाला। राक्षसेन्द्राणी मन्दोदरी आचम्भित होकर मूर्च्छित होगई। मां की गोद में

* टूटी तलवार † फटी ढाल ‡ सोया हुआ बालक।

सोए हुए बालक सहसा आर्त्तनाद से ऐसे रो उठे जैसे वृज के शिशु उस समय रोए थे जब श्याममणि वृजमोहन वृज में अन्धकार करके मधुपुर को गए थे। राक्षसकुल-आशा असु-रारि-रिपु मेघनाद ने अन्याय-समर में इस प्रकार पड़ कर लक्ष्मण से कठोर वचन कहा—" रे सुमित्रानन्दन, तू वीर कुल-ग्लानि है। तुझे शत धिक्कार है। मैं रावण-नन्दन यम-राज से नहीं डरता। किन्तु रे पामर, तेरे अस्त्राघात से मेरी मृत्यु हुई, इसका मुझे बड़ा दुःख है। क्या तेरे ही हाथ से मरने के लिए मैंने दैत्य-कुल-दमनकारी इन्द्र का दमन संग्राम में किया था? न जाने विधाता ने मुझे किस पाप के बदले में यह ताप दिया है। रे नराधम, जब राक्षसनाथ यह बात सुने-गा तब तेरी रक्षा कौन करेगा? यदि तू जलधि के अतल जल में जा छिपेगा तो वहां भी राजरोष* वड़वानल|| सम तेज से प्रवेश करेगा। रे कुमति, यदि तू कानन में प्रवेश करेगा तो वहां वह रोप तुझे दावाग्नि* सदृश दग्ध करेगा। रे मूढ़, रजनी तुझे नहीं ढक सकेगी। रे सौमित्रि! दानव, मानव, और देवों में ऐसा कौन है जो रावण के रोप से तेरी रक्षा करेगा? रे कलंकि, जगत में ऐसा कौन है जो तेरे इस कलंक का भञ्जन करेगा?" इतना कहकर उसने विषाद से अन्त में माता-पिता के पाद-पद्म को स्मरण किया और अधीर होकर चिरानन्द स्वरूपणी सती प्रमीला की चिन्ता करने लगा। अश्रुधारा ने रुधिर-धारा के साथ मिलकर मही को आर्द्र‡ कर दिया। लंका का पंकज-रवि अस्ताचल में डूब गया। पावक निर्वान हो गया।‖लंका का किरणपति शान्तरश्मि होकर भूतल पर गिर पड़ा। रावणानुज बली भ्रातृपुत्र की मृत्यु के शोक

* रावण का क्रोध || समुद्रकी अग्नि * बनकी अग्नि ‡ तर

से सजल नयन होकर मोहवश विलाप करने लगा—"हे भीम-बाहु, तुम सदा सुपट्ट§ शयनशायी हो। राक्षसराज रावण, राक्षसकुलेन्द्राणी मन्दोदरी और शरद-इन्दु-आनना प्रमीला सुन्दरी तुम्हें इस शय्या पर देख कर क्या कहेंगे? सुरबाला-गर्व-गञ्जनी दितिसुता तुम्हारी वृद्धा दादी सती निकषा, उसकी सब किंकरी और समस्त राक्षस-कुल क्या कहेगा? तुम तो उस कुल के चूड़ामणि हो। हे वत्स, उठो। मैं तुम्हारा पितृव्य विभीषण तुम्हें बुलाता हूं। हे प्राणाधिक, तुम क्यों नहीं सुनते? हे वत्स, तुम्हारे अनुरोध से अभी द्वार खोल दूंगा। अस्त्रालय में जाओ और युद्ध में लंका के कलंक को दूर करो। हे राक्षस-कुलगर्व, क्या जगत नयनानन्द देव अंशुमाली कभी मध्याह्न-काल में अस्ताचल में जाता है? हे यशस्वि, तुम भूतल में क्यों पड़े हो? वह देखो, शृङ्ग-नादी नाद कर तुम्हें आवाहन कर रहे हैं। गजराज गर्ज रहे हैं। अश्व भैरव रव से हिनहिना रहे हैं। उग्र‖ चण्डा राक्षस-सैन्य रण के लिये सज रही है। हे अरिन्दमि, उठो और समर में इस विपुल कुल का मान रक्खो। शत्रु नगर-द्वार पर है।"

लक्ष्मण ने मित्र-शोक से आतुर होकर कहा—"हे राक्षस चूड़ामणि, दुःख का दमन करो। इस वृथा शोक से क्या होगा? विधि के विधान से मैंने इस योधा को मारा है। इस में तुम्हारा कोई अपराध नहीं है। चलो, चिन्तामणि प्रभु राम के पास चलें। वह चिन्ता से व्याकुल होंगे। हे शूर, ध्यान से सुनो; देवलोक में मङ्गलवाद्य हो रहा है।"

---

§ सुन्दर रेशमी वस्त्र की शय्या पर लेटने वाले। ‖ चण्डी के समान उग्र।

दोनों शीघ्र बाहर आए। जैसे सिंहनी की अनुपस्थिति में निषाद शावक का नाश कर पवन-वेग से इस भय से भागता है कि कहीं भीषण सिंह मृत शिशु को देख और विषाद से विवश हो सहसा उस पर आक्रमण न करे अथवा जैसे द्रोणपुत्र अश्वत्थामा रात्रि-समय पाण्डव-शिविर में सोते हुए पांच शिशुओं को मार कर और बाहर आकर मनोरथ-गति से भागकर कुरुक्षेत्र-रण में कुरुराज दुर्योधन के पास गया था वैसे ये दोनों माया के प्रसाद से अदृश्य होकर राम के निकट चले।

लक्ष्मण ने चरणाम्बुज में प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर निवेदन किया-"हे रघुवंश-अवतंस, आपके पद-प्रसाद से यह किंकर रण में जयी हुआ। वली मेघनाद का आज प्राणान्त हो गया।" राम ने भाई का आलिंगन किया और शिर चूम कर सजल नयन होकर कहा-"हे वाहु-वलेन्द्र, अब मैं तुम्हारे वाहुवल से सीता को प्राप्त करूंगा। तुम वीरकुल में धन्य हो। सुमित्रा जननी धन्य है। हे रघुकुलनिधि, तुम्हारे जन्मदाता पिता दशरथ धन्य हैं। तुम्हारा ज्येष्ठ भ्राता धन्य है। जन्मभूमि अयोध्या धन्य है। तुम्हारा यह यश जगत में चिरकाल तक स्थिर रहेगा। किन्तु हे प्रियतम, वलदाता देव की पूजा करो। मानव निज वल में सदा दुर्वल है। यह सफलता देव-प्रसाद की कृपा का फल है।"

वैदेही-नाथ ने महामित्र विभीषण से मधुर स्वर में कहा-"हे सखे, इस अरिपुर में मैंने तुम्हें शुभ क्षण में पाया था। तुम राक्षस-वेष में राघव-कुल-मंगल हो। हे गुणमणि, आज तुम ने अपने गुण से राघव-कुल को मोल ले लिया है। जैसे ग्रहों में दिननाथ श्रेष्ठ है, वैसे तुम भी मित्रकुल में

श्रेष्ठ हो। यह मैं तुम से निश्चयपूर्वक कहता हूं। अब चलो। आओ शुभंकरी शंकरी को पूजें।" देववृन्द ने महानन्द से पुष्पवृष्टि की। उल्लास से राम-सैन्य नाद करने लगी। 'सीतापति की जय' ध्वनि आकाश में गूंजने लगी। आतंक से सारी लंका कांप उठी।

सातवां सर्ग।

उदयाचल में आदित्य उदय हुआ। कुसुम-कन्तला × मही गले में मुक्ता-‡ माला डाल कर उल्लास से हँसने लगी। कुञ्जों से मधुर स्वर-तरंगावलि§ बहने लगी। विमल जल में प्रेमाकांक्षी नलिनी और थल में सुनहरी सूर्यमुखी शोभा पाने लगीं।

जैसे निशा के शिशिर में कुसुम अवगाहन* करता है वैसे पीन पयोधरा सती प्रमीला ने सुवासित जल से स्नान करके वेणी की रचना की। मुक्तावली चिकने बालों में ऐसी शोभा पाने लगी जैसे शरत-काल के मेघ में चन्द्र-रेखा। सुन्दरी ने मृणाल भुजा को भूषित करने के लिए रत्नमय कंकण पहना। किन्तु बाहु में वेदना होने लगी। कोमल कण्ठ में कनक कण्ठमाला व्यथा देने लगी। प्रमीला वसन्त सौरभा+ सखी वासन्ती से विस्मित होकर कहने लगी—"अरी सखी, मुझ से अलंकार किस लिए नहीं पहने जाते?

× फूलों वाली लताओं को धारण करने वाली पृथ्वी। ‡ ओस की बूंदों की माला। § पक्षियों का प्रभात कालीन गान * स्नान। + जिस के शरीर से वसन्त की सुगन्धि आती हो।

लंका में रोदन-निनाद और हाहाकार-ध्वनि क्यों सुनाई पड़ती है? मेरी दाहिनी आंख फड़क रही है और मेरा मन रोए देता है। मैं नहीं जानती कि आज किस विपद् में पड़ूंगी? वासन्ति, प्राणनाथ यज्ञागार में हैं। ज़रा तू उन के पास जाकर कह कि आज इस अशुभ दिन में वह समर में न जाएं। अरी, जीवेश से कहना कि तुम्हारी दासी ने बड़े विनीत भाव से यह अनुरोध किया है।"

वीणा-वाणी प्रमीला के नीरव हो जाने पर वासन्ती ने उत्तर दिया—"हे सुवदने, ध्यान से सुनो। क्रमशः आर्त्तनाद बढ़ता जाता है न जाने पुरवासी क्यों रो रहे हैं? चलो, देव-मन्दिर में शीघ्र चलें।"

गिरीश कैलास—सदन में विरस वदन हैं। धूर्जटि * ने विषाद से हेमवती की ओर देखकर कहा—"हे देवि, आज तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ। रथीपति इन्द्रजित् काल-रण में मार डाला गया। सौमित्रि ने माया के कौशल से यज्ञागार में उसका नाश किया। हे विधुमुखि, राक्षस-कुल-निधि रावण मेरा परम भक्त है। उसके दुःख से मैं सदा दुखी रहता हूं। हे सति, पुत्र-शोक का आघात मेरे इस त्रिशूल के आघात से भी गुरुतर होता है।

यह व्यथा चिरस्थायी है। सर्वहर काल भी उसे नहीं हर सकता। हे सति, रावण पुत्रवर की मृत्यु का सम्वाद सुनकर क्या कहेगा? यदि मैं उस की रक्षा रुद्रतेज से नहीं करूंगा तो वह अकस्मात् मर जायगा। हे साध्वि, तुम्हारे

* जटाधारी शंकर।

अनुरोध से मैंने इन्द्र को सन्तुष्ट किया। यदि अनुमति दो तो अब दशानन को सन्तुष्ट करूं।"

शंकरी ने उत्तर दिया—"हे त्रिपुरारि, जो इच्छा हो सो करो। तुम्हारे चरणों में यह भिक्षा माँगी थी कि वासव (इन्द्र) की वासना पूर्ण हो सो वह सफल हो गई। हे विश्वनाथ, यह बात याद रहे कि दाशरथि रथी इस दासी का भक्त है। आप के पदकमल में यह दासी और क्या कहे?"

शूली ने हँसकर वीरभद्र का स्मरण किया। भीषण मूर्ति वीरभद्र ने उपस्थित होकर महादेव के पद में साष्टाङ्ग प्रणाम किया। हर ने उस से कहा—"हे वत्स, आज रण में इन्द्रजित मारा गया है। उमा के प्रसाद से लक्ष्मण ने यज्ञागार में प्रवेश करके उसका नाश किया है। दूत यह वार्ता राक्षसनाथ को सुनाते हुए डरते हैं। उन्हें यह मालूम नहीं कि बली सौमित्रि ने किस कौशल से दुर्मद मेघनाद का नाश किया। इस जगत में देवताओं के अतिरिक्त और किसकी सामर्थ्य है जो इस देव-माया को समझे? हे भीमवाहु, तुम राक्षस-दूत के वेष में कनक-लंका को शीघ्र जाओ और मेरे आदेशानुसार निकषानन्दन को रुद्रतेज से भर दो।"

भीमाकृति बली वीरभद्र आकाश-पथ से चला। व्योम-चर भय से नीचे उतरने लगे। उसके सौन्दर्य-तेज से रवि ऐसा तेजहीन हो गया मानो रवि के तेज से सुधांशु (चन्द्र) निरांशु ¶ हो गया हो। उसके शूल की भयंकर छाया भूतल पर पड़ी। अम्बुराशि-पति ने गम्भीर निनाद से भैरव ‡ दूत की पूजा की। वीरभद्र के राक्षसपुरी में पहुंचते ही उसके

¶ किरणहीन, प्रभाहीन। ‡ भयानक।

पदभार से कनक-लंका ऐसे कांपने लगी जैसे वृक्ष पर पक्षीन्द्र गरुड़ के आ बैठने से वृक्ष थरथर कांपने लगता है।

शूर ने यज्ञागार में प्रवेश करके वीरेन्द्र को भूतल पर पड़े देखा। जैसे वन में प्रभञ्जन के बल से पलाश-पुष्प भूपतित होकर प्रफुल्ल रहता है, वैसे वीरभद्र ने मेघनाद को प्रफुल्ल-वदन पाया। इस अकाल मृत्यु को देखकर उस का हृदय व्यथित हुआ।

वहां से चल कर वीरभद्र दूतवेश में राक्षस-चूड़ा-मणि दशानन के कनक-आसन के निकट पहुंचा। भस्मराशि में गुप्त अग्नि के समान अब वह तेजोहीन है। आशिष देकर और हाथ जोड़ कर अश्रुमय नेत्रों के साथ वीरभद्र रावण के सामने खड़ा हो गया। राजा ने विस्मय से पूछा—"हे दूत, तुम्हारा मुख किस लिए मलिन हो रहा है? आज तो देव-दैत्य-जयी लंका का पंकज-रवि समर के लिए सज रहा है। क्या तुम मुझ से कोई अमंगल-वार्त्ता कहोगे? भीषण वज्र के प्रहार से यदि राघव-रिपु आज मारा गया हो तो यह शुभ सम्वाद मुझसे कहो। मैं तुम्हें राज-प्रसाद दूंगा।" छद्मवेशी ने उत्तर दिया—"हे देव, मैं क्षुद्र प्राणी आपके चरणों में वह अमंगल वार्ता कैसे निवेदन करूं। हे राक्षस-पति, पहले इस दास को अभय दान दीजिए।" रावण ने व्यग्रचित्त होकर कहा—"हे दूत, तुम निर्भयता से अपनी वार्त्ता शीघ्र कहो। शुभाशुभ तो विधि के विधान से होता है। मैं तुम्हें अभय दान देता हूं। अब तुम शीघ्रता करो।" वीरभद्र ने कहा—"राक्षस-श्रेष्ठ, राक्षस कुल-गर्व-रथी मेघनाद आज रण में मार डाला गया।"

जैसे निषाद् के नश्वर शर से मृगेन्द्र के मारे जाने पर सिंह भीमनाद् से घोर वन में गर्जन कर महीतल में गिरता है वैसे भूपति रावण सभा में भूपतित हुआ । सचिव-वृन्द ने हाहाकार करते हुए शूर को चारो ओर से घेर लिया । कोई शीतल जल लाया और कोई हवा करने लगा ।

वीरभद्र ने रुद्र-तेज से रावण को शीघ्र सचेत किया । उस ने दूत की ओर देख कर पूछा—"हे दूत, चिर-रणजयी इन्द्रजित को रण में किसने मारा ?" वीरभद्र ने उत्तर दिया—"हे राजेन्द्र, कुमति लक्ष्मण ने छद्मवेष से यज्ञागार में प्रवेश करके अन्याय पूर्वक वीरेन्द्र केशरी मेघनाद का वध किया । हे राक्षस-नाथ, तुम शूर-वीरों की भाँति शोक को भुला दो नहीं तो राक्षस-कुलाङ्गनाएं चक्षुजल धारा से मही को भर देंगी । हे महाधनुर्धारी, पुत्रघाती दुर्मति शत्रु को संग्राम में भीम अस्त्र से संहार कर नगर-वासियों को सन्तुष्ट करो ।" देवदूत अकस्मात् अदृश्य हो गया और सभा के चारो ओर स्वर्गीय सौरभ भर गई । राक्षसनाथ ने उसकी दीर्घ जटावलि और भीषण त्रिशूल की छाया देखी । शैव ने प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर कहने लगा—"हे प्रभु, क्या तुम को तुम्हारा यह भाग्यहीन भृत्य इतने दिन बाद याद आया ? हे मायामय, मैं मूढ़ इस माया को कैसे समझूं ? किन्तु हे सर्वज्ञ, पहले तुम्हारी आज्ञा पालन करूंगा और पीछे अपनी कुल कथा को कमल-पद में निवेदन करूंगा ।

रावण ने महा-रुद्र से तेजस्वी होकर क्रोध में कहा—"हे कनकपुर के धनुर्धरो, तुम सब युद्ध के लिए सुसज्जित हो ।

यदि इस शोक रूपी विषम ज्वाला को भूलना सम्भव है तो मैं इसे रणरङ्ग में भूलूंगा।

सभा में दुन्दुभी की ध्वनि ध्वनित हुई। शृङ्ग-निनादक प्रलय-काल के गम्भीर निनाद से शृङ्ग को बजाने लगा। वीर-पद भार से लंका हिल गई। स्वर्ण-ध्वजा वाले अग्निवर्ण के रथ वेग से बाहर आने लगे। धूम्रवर्ण हाथी शूण्डों में भीषण मुग्दर लेकर हिलाने लगे। तुरङ्ग हिनहिनाते हुए बाहर आए। चामर ‡ देवताओं को त्रास देने वाली चतुरङ्गनी * सेना लेकर गर्जता हुआ आया। समर में उग्र उदग्र ‡ रथीवन्द को साथ लेकर चला। वास्कल ‡ गजवृन्द के साथ ऐसे आया जैसे मेघवृन्द में भीम वज्रधारी मेघवाहन इन्द्र। अश्वपति बली अतिलोमा ‡ हुंकार करता हुआ दिखाई दिया। विड़ालाक्ष ‡ भी आ पहुंचा। समर में दुर्मद और महाभयंकर पताकीदल आगया। पताकाएं ऐसे उड़ने लगीं मानों आकाश में धूमकेतु सहसा उदय हो गये। चारोंओर राक्षस-वाद्य बजने लगा। जैसे दानवनाशिनी चण्डी देव-तेज से जन्म लेकर अट्टहास और उल्लास करती हुई देवास्त्रों से सजी थी वैसे उग्रचण्डा भैरवी राक्षस-सेना लंका में युद्धार्थ सजी। उसकी भुजा में गजराज का तेज है। पद में अश्वगति है। स्वर्णरथ मुकुट-स्वरूप और रत्नमय पताका अञ्चल-स्वरूप है। भेरी, तूरी, दुन्दुभी, आदि बाजे सब सिंहनाद-स्वरूप हैं। शैल, शक्ति, जाटि, तोमर, भोमर, शूल, मूसल, मुद्गर, पट्टिश, नाराच, कोन्त प्रकृति दुर्गा के दन्त-स्वरूप हैं। चमकीले

‡ प्रसिद्ध राक्षसों के नाम।

* जिस में हाथी, रथ, घोड़े और पैदल चारों हों।

वर्मों की आभा राक्षस-सेनारूपिणी चण्डी के नयनों की दीप्ति है। पृथ्वी थर थर कांपने लगी। समुद्र भय से कल्लोल करने लगा। भीमा के गर्जन से भूधर अधीर हो गए।

शूर रविकुल-रवि ने चौंक कर मित्र विभीषण से कहा—"हे सखे, देखो लङ्का घोर भूकम्प से बार बार कांप रही है। घनी धूल के बादल उड़ उड़ कर दिननाथ को ढक रहे हैं। जाज्वल्य अस्त्रों से प्रलयाग्नि उत्पन्न हुई है। भयङ्करी विभा नभ को उज्ज्वल कर रही है। जलधि प्रलयकारी कल्लोल से विश्व को लय करने के लिए चारो ओर से उमड़ रहा है।" विभीषण ने भय से पाण्डुमुख होकर कहा—"हे देव, क्या कहूं कुछ कहते नहीं बनता। यह पुरी राक्षस-वीरों के पदभार से कांप रही है, भूकम्प से नहीं। हे वैदेही नाथ, गगन में जो विभा देख रहे हो, वह कालाग्नि*सम्भवा नहीं है। राक्षसों के स्वर्ण-वर्ण आभामय अस्त्रों के तेज से दशो दिशा उज्ज्वल हो रही हैं। हे बली, वह कोलाहल जो कर्ण-कुहरों† को बन्द कराये देता है, सिन्धुध्वनि नहीं है। राक्षसगण वीर-मद में मत्त होकर गर्ज रहे हैं। सुरथी लंकेश पुत्र-शोक से आकुल होकर सज रहा है। हे वीर, इस संकट से लक्ष्मण और अन्य सब वीरों की रक्षा कैसे करोगे?"

प्रभु राम ने कहा—"हे मित्रवर, शीघ्र जाकर सब सेनाध्यक्षों को यहां बुला लाओ। यह दास सदा देवाश्रित है। उस की रक्षा देवगण करेंगे।"

विभीषण ने ज़ोर से श्रृङ्गनाद किया। किष्किन्धानाथ और शूर रण-विशारद अङ्गद गजपति-गति से आ गये। देवाकृति

* प्रलयकाल की अग्नि से उत्पन्न हुई † कानों के छेद।

नल-नील, प्रभञ्जन सदृश पराक्रमी हनुमान, बली जाम्बुवान, वीरकुल-श्रेष्ठ शरभ और राक्षस-त्रास रक्ताक्ष, गवाक्ष और अन्य सब नेता आ पहुंचे।

राम ने वीरेन्द्र-रत्न से यथाविधि सम्भाषण करके कहा—"आज राक्षस-पति पुत्र-शोक से विकल होकर राक्षस-सेना सहित शीघ्र सज रहा है। वीर पद-भार से लंका हिल रही है। हे शूरो, तुम सब रण में त्रिभुवन-जयी हो। शीघ्र सज कर आज इस घोर विपद में राम की रक्षा करो। मैं भाग्य दोष से बन्धु-बान्धवहीन होकर वनवासी हुआ हूं। तुम सब का विक्रम और बल राम का आश्रय है। अब लंका के रथियों में एक मात्र रावण ही जीवित है। हे वीरवृन्द, आज उसका बध करो। तुम्हारे ही प्रसाद से मैंने सिन्धु को बांधा, घोर युद्ध में शूली शम्भुसम शूर कुम्भकर्ण का वध किया। और लक्ष्मण ने देव-दैत्य-नर-त्रास भीम मेघनाद का नाश किया। हे रघुबन्धुओ, रघुवधू रावण के छल से कारागार में बन्दी है। उसका उद्धार करके मेरे कुल, मान और प्राण की रक्षा करो। तुम सबने राम को स्नेह से मोल ले लिया है। हे दक्षिण-निवासी वीरेन्द्रगण, अपना दाक्षिण्य* प्रकाश करके आज रघुवंश को कृतज्ञता के पाश में बांध लो।"

रघुनाथ की आँखों में आँसू भर आए और चुप हो गए। जलद-गम्भीर स्वर से सुग्रीव ने उत्तर दिया—"हे शूर-श्रेष्ठ, तुम्हारे पद में यह प्रतिज्ञा करता हूं कि रावण को मारूंगा या मैं ही मरूंगा। हे नाथ, तुम्हारे प्रसाद से राज्यसुख भोग रहा हूं। तुम धन और मान-दाता हो। तुम्हारे पद-पङ्कज में यह अधीन कृतज्ञता के

* सहायता।

पाश से चिरकाल बँधा रहेगा । हे शूर, और क्या कहूं ? मेरे सङ्गियों में ऐसा कोई नहीं है जो तुम्हारा कार्य करने में यम से भी डरता हो । राक्षसों को सजने दो । हम निर्भय होकर जूझेंगे ।" सब सेनाध्यक्ष रोष से गरज उठे । विकट सेना ने 'जयराम' का नाद किया । उस भैरव रव को सुन कर राक्षस-सैन्य ने वीर-मद से ऐसे निनाद किया जैसे दानव-दलनी दुर्गा ने दानव-निनाद सुनकर निनाद किया था । गम्भीर निर्घोष से कनक-लंका पूर्ण हो गई ।

रावण रण-मद में मत्त होकर सजा है । उसके चारों ओर उज्ज्वल हेम-शृङ्ग रूपी रथीन्द्र खड़े हैं । रणवाद्य बज रहा है । रक्षोध्वजा आकाश में उड़ रही है । असंख्य राक्षस हुङ्कार कर रहे हैं । इस अवसर पर रानी मन्दोदरी सभास्थल में आ पहुँची । वह ऐसी आकुला थी जैसे शिशु शून्य नीड़ * को देख कर कबूतरी । उसके पीछे सखियां आने लगीं । रानी राज-पद में गिर पड़ी ।

रावण ने सती को उठा कर विषाद से कहा—"हे राक्षस कुलेन्द्राणि, विधि हमारे प्रतिकूल है । तथापि मैं जो कुछ कर रहा हूं, वह केवल पुत्र-श्रेष्ठ की मृत्यु का बदला लेने के लिए । तुम शून्य घर को लौट जाओ । मैं इस समय रण-क्षेत्र का यात्री हूँ । मुझे क्यों रोकती हो ? हे देवि, विलाप करने के लिए तुम्हें बहुत समय मिलेगा । राज्य के वृथा सुख को तिलाञ्जलि देकर और एकान्त में बैठ कर हम दोनों रातदिन उसका स्मरण करेंगे । हे रानी, यह रोषाग्नि अश्रुनीर से नहीं बुझेगी । वन का विशाल शाल

* घोसला

आज भूपतित है। गिरिवर के शिर का तुङ्गतम-शृङ्ग चूर्ण हो गया। गगन-शशि सदैव के लिए राहुग्रस्त हुआ है।"

सखियां मन्दोदरी को पकड़ कर अन्तःपुर में ले गईं। राक्षस-नाथ ने क्रोध में बाहर आकर और राक्षसों को सम्बोधन करके भैरव रव से कहा—"जिसके पराक्रम से राक्षस-सैन्य देव, दैत्य और नर सब को रण में पराजित करती रही, जिसके शरजाल से देव-कुल रथी देवेन्द्र सदा कातर रहा, जिसके भय से पाताल में नाग, और नरलोक में नर भयभीत रहे, हे वीरवृन्द, आज वह वीरेश अन्याय से समर में मारा गया है। रामानुज लक्ष्मण ने चोर के वेष में देवालय में प्रवेश करके मेरे पुत्रवर का वध किया। हाय! वह उस समय उस निर्जन स्थान में निरस्त्र था। जैसे प्रवास में प्रवासी अपने सब स्नेह-पात्रों—पिता, माता भ्राता और पत्नी को अन्तकाल में न देखकर मनोदुःख से मरता है, वैसे आज स्वर्ण-लङ्कापुरी में स्वर्ण-लङ्का-अलंकार की दशा हुई है। मैंने तुम सब को चिरकाल से पुत्र-सम पाला है। सारे भूमण्डल में पूंछ देखो कि क्या राक्षस-वंश की ख्याति के समान कोई और वंश-ख्याति है? किन्तु मैंने देव-नर को परास्त कर जगत में कीर्त्ति-वृक्ष वृथा ही लगाया। निष्ठुर विधि अब मेरे नितान्त प्रतिकूल है इस लिए अकाल ¶ निदाघ से जलपूर्ण आलवाल‡ सूख गया। किन्तु मैं विलाप नहीं करता। विलाप करने से क्या होगा? क्या वह फिर लौट आवेगा? क्या कभी मृत्यु का कठोर हृदय अश्रुवारि-धारा से द्रवित हो सकता है? अब समर में जाकर अधर्मी मूढ़ कपट-*समरी सौमित्रि का विनाश करूंगा। यदि युद्ध में आज का यत्न वृथा हुआ तो लंका को न लौटूंगा।

¶ बेमौक़ा गरमी ‡ पेड़ के आस पास का घेरा * कपट से समर करने वाला।

इस पुर में जन्म भर पुनः पदार्पण न करूंगा। हे रथिगण, यह मेरी प्रतिज्ञा है। तुम सब देव, दैत्य और मनुष्यों को त्रास देने वाले और समर में विश्वजयी हो। यह स्मरण करके तुम रण-स्थल में चलो। मेघनाद मारा गया है, यह ख़बर सुन कर अब राक्षस-कुल में कौन जीना चाहता है? बली मेघनाद राक्षस-कुल का गर्व था।"

रावण दुःख से श्वास लेकर नीरव हो गया। राक्षस सैन्य क्षोभ और रोष से नाद करने लगी। उसके नयन-वारि ने मही को भिगो दिया।

राक्षस-सैन्य का भीषण नाद सुनकर रघु-सैन्य ने भी गम्भीर नाद किया। वैदेहीनाथ और सौमित्रि केशरी को रोष आगया। राक्षसों के लिए यम सदृश सुग्रीव, अङ्गद, हनुमान, नल, नील, और सुमति शरभ आदि नेता विकट सेना सहित जयराम ध्वनि करके गर्ज उठे। मेघवृन्द ने आकाश को आच्छादित कर घोर गर्जन किया। बिजली विश्व को चमका कर कड़क उठी। सौदामिनी चामुण्डा की भांति ऐसे अट्टहास करने लगी जैसे देवी ने रण-मद में मत्त दुर्मद दानव-दल का विनाश हंस कर किया था। तिमिर-विनाशी दिनमणि तिमिर-पुञ्ज में डूब गया। वायु उत्तप्त होकर बहने लगा। कानन में दावाग्नि जल उठी। भूकम्प से अट्टालिकाएं और तरुराजी भूतल पर गिरने लगीं। जीव-जन्तु व्याकुल होकर ऐसे मरने लगे मानो प्रलय-काल आगया हो।

मही महाभय से भीता होकर रोती हुई वैकुण्ठ को चली। कनकासन पर माधव विराजमान हैं। साध्वी ने देव को प्रणाम करके आराधना की। "हे रमेश, तुम दयासिन्धु

हो। तमने बार बार बहु रूप धारण करके इस अधीना को बचाया है। प्रलय-समय कूर्मरूप धारण कर इस दासी को कूर्म-पृष्ठ पर प्रतिष्ठित किया था। हे दीनबन्धु, जब तुमने वराह रूप धारण किया था तब मैं तुम्हारे दशन ||शिखर पर शशाङ्क में कलंक-रेखा सी दीखती थी। पुनः तुमने नरसिंह रूप रखकर और दैत्य हिरण्यकशिपु का विनाश कर दासी को स्थिर किया था। वामनावतार में *खर्वाकार धारण कर बलि के गर्व को खर्व किया था। हे प्रभु, तुम्हारे प्रसाद से मैं सदा बचती आई हूं। हे नाथ, और क्या कहूं? दासी पदाश्रिता है इस लिए इस विपत्ति-काल में तुम्हारे पाद-पद्मतल में आई हूं।"

मुरारी ने हंसकर मधुर स्वर से पूछा-"जगन्माता वसुधे, आज तुम किस लिए कातरा हो? तुम्हें कौन क्लेश दे रहा है।" मही ने रोकर उत्तर दिया-'हे सर्वज्ञ, तुम क्या नहीं जानते हो? ज़रा लंका की ओर देखो। राक्षसराज रावण रण-मत्त है। बली राघवेन्द्र युद्ध के लिये तत्पर हैं। देवेन्द्र देव-गण सहित रण की प्रतीक्षा कर रहे हैं। रामानुज सौमित्रि ने आज भीम मेघनाद का वध संग्राम में किया है। राक्षस-कुलनिधि ने विषम शोक से व्याकुल होकर प्रतिज्ञा की है कि आज रण में मैं लक्ष्मण को अवश्य मारूंगा। इन्द्र ने वीरदर्प से उसकी रक्षा करने के लिए प्रतिज्ञा की है। हे पीताम्बर, अब बहुत शीघ्र स्वर्ण-लंका में देव, राक्षस और नर प्रबल कोप से काल-रण आरम्भ करेंगे। हे नाथ, मुझे बताओ कि इस घोर यातना को कैसे सहन करूं?"

|| दांत। * बवना।

रमेश ने हँसकर लंका की ओर देखा। असंख्य राक्षसों की चतुरङ्गनी सेना क्रोधान्ध होकर और दल बांधकर रण-क्षेत्र में एकत्र हो रही है। उसके अग्र भाग में + प्रताप है, मध्य में कोलाहल है और सब से पीछे परागराशि ‡ है। सेना की चलती हुई पंक्तियां इस प्रकार हिलती है कि मानो जलपति वरुण के चिरअरि प्रभञ्जन और सागर के घोर समर में भीषण तरंगे उठ रही हैं। देव-दल लंका की ओर ऐसे वेग से जा रहे हैं जैसे पक्षिराज गरुण भक्ष्य फणी को देख कर शीघ्रता से लपकता है।

निर्घोष से विश्व पूर्ण हो रहा है। योगियों का योग भंग हो गया है। जननी भयाकुल शिशु को गोदी में उठाकर रोती हैं। जीव-जन्तु भयभीत होकर चारों ओर भाग रहे हैं। चिन्तामणि ने क्षणकाल चिन्ता करके मही से कहा-"हे सति, तुम्हारे लिये विषम विपद उपस्थित हुई है। आज विरूपाक्ष ने राक्षस-कुल-राज को रुद्रतेज से तेजस्वी किया है। हे मेदिनि, अब मैं कोई उपाय नहीं देखता। तुम उनके पास जाओ।" वसुन्धरा ने पदारविन्दु में रोकर उत्तर दिया-"हे प्रभु, दुरन्त संहारी त्रिशूली तो सदा विनाश ही किया करते हैं। त्रिपुरारि निरन्तर तमोगुण से पूर्ण रहते हैं। उनके सर्प सदा विष उगल कर जीवों को दग्ध करते हैं। हे विश्वम्भर, तुम दया-सिन्धु हो। यदि विश्वभार को तुम न उतारोगे तो फिर कहो क्या होगा? हे श्रीपति, चरण-कमल में मेरी यह विनती है कि इस घोर संकट में दासी की रक्षा करो।"

+ सेना के अग्र भाग देखने से उसका प्रताप प्रगट होता है। ‡ उड़ती हुई धूल।

विभु* ने हँस कर उत्तर दिया—"हे वसुधे, तुम अपने स्थान को जाओ। मैं तुम्हारा कार्य्य पूरा करूंगा।"

जैसे घर के अन्दर भयङ्कर अग्नि लग जाने से खिड़कियों और द्वारों से लपटें जल्दी जल्दी बाहर आती हैं, वैसे राक्षस-गण क्रोध से निनाद करते हुए लङ्का के चारों द्वार से बाहर आने लगे। रघुसैन्य चारों दिशाओं में गर्ज उठी। देववृन्द ने समर में प्रवेश किया। मातङ्गवर ऐरावत रण-रङ्ग में मत्त होकर आया। उसकी पीठ पर वज्रधारी सहस्राक्ष ऐसे शोभायमान हैं जैसे रविकर से दीप्यमान मेरु-शृङ्ग*। शिखि-ध्वजा वाले रथ में सेनापति तारकारि हैं। विचित्र रथ में चित्ररथ रथी हैं। लङ्का ने आतङ्क से स्वर्गीय बाजा सुना। अमर-निनाद से सारा देश चौंक पड़ा।

राम ने इन्द्र को साष्टाङ्ग प्रणाम करके कहा—"हे देवकुल पति, यह दास देवताओं का दास है। पूर्व जन्म के पुण्य-प्रताप ही से इस विपत्तिकाल में तुम्हारा पदाश्रय प्राप्त हुआ है और इसी लिए आज त्रिदिव* निवासियों ने अपने चरण-स्पर्श से भूमण्डल को पवित्र किया है।"

सुरेश्वर ने उत्तर दिया—"हे रघुकुलमणि, तुम देव-कुल प्रिय हो। हे रथि, देवरथ में चढ़कर अपने बाहुबल से अधर्माचारी राक्षस का नाश करो। राक्षसकुल-निधि रावण अपने दोष से विनष्ट होगा। उसकी रक्षा कौन करेगा? हे शूर, जैसे सागर को मथकर अमृत प्राप्त किया था, वैसे लङ्का का विध्वंस कर और निशाचरों को दण्ड देकर देवकुल साध्वी मैथिली को तुम्हें अर्पण करेगा।

---

* व्यापक विष्णु * सुमेरु पहाड़ की चोटी * स्वर्ग।

देवों, राक्षसों और नरों में घोर युद्ध आरम्भ हुआ। असंख्य कम्बु † अम्बुराशि ¶ की भांति चारों ओर से ध्वनित होने लगे। बली धनुर्द्धरों ने धनु टंकार करके श्रवण-पथ को बन्द कर दिया। बाण-राशि ने गगन को भर दिया। वे विपुल तेज से उड़ कर चर्म-वर्म और देह को वेधने लगे। रक्त की नदी बहने लगी। रथीगण भूपतित होने लगे। कुञ्जर ऐसे गिरने लगे जैसे कुञ्ज में प्रभञ्जन-बल से पत्ते गिरते हैं। घोड़े थामे नहीं थमते। रणभूमि भैरव रव से पूर्ण हो गई।

अमरत्रास चामर ने चतुरङ्ग-बल से सुरवृन्द पर आक्रमण किया। शूर चित्र रथरथी ने सौर-तेजसम रथ पर संग्राम में ऐसे प्रवेश किया जैसे सिंह हाथी को देख कर लपकता है। उदग्र ने सुग्रीव को भीमरव से आवाहन किया। उसका रथ-चक्र शत जल-स्रोत-नाद से घर्घर करता हुआ घूमा। दुर्वार वास्कल ने अङ्गद को देखकर मातङ्ग-यूथ* को वेग से उसकी ओर भगाया। युवराज ने उसे ऐसा देखा जैसे सिंह-शिशु मृगदल को देखता है। असिलामा § ने कर में तीक्ष्ण असि लेकर वाजीराजी से शरभ को घेर लिया। बिड़ालाक्ष ने कोप से हनुमान के साथ संग्राम करना आरम्भ किया। दिव्य रथ में रथी राघव ने रण में प्रवेश किया। तारकारि ने सुन्दर शूर लक्ष्मण को विस्मय से अपनी प्रति‡ मूर्ति में देखा। रेणुराशि के घने बादल चारों ओर उड़ने लगे। कनक-लंका वीर-पद-भार से हिलने लगी। जलधि गर्जन करने लगा। बली शचीकान्त ने अपूर्व व्यूह सृजन किया। पुष्पक-आरोही लंकेश्वर बाहर आया। रथ-चक्र ने विस्फुलिङ्ग ¶ उद्गीर्ण

---

†शङ्ख ¶ समुद्र *हाथियों का झुण्ड § एक राक्षस जिसके रोयें तलवार जैसे थे ‡ दूसरा तारिकारि ¶ चिनगारियां निकाल कर

कर घर्घर निर्घोष किया। तुरङ्ग उल्लास से हिनहिनाने लगे। रत्न-सम्भवा-विभा नेत्रों में चकाचौंध करती हुई ऐसे दिखाई पड़ने लगी जैसे जब आदित्य उदयाचल में निकलता है तब उसके आगे उषा चलती हुई दृष्टिगोचर होती है। राक्षसगण ने राक्षसनाथ को देखकर गम्भीर स्वर से नाद किया।

सुरथी ने सारथिवर से कहा—"हे सूत, देखो यह असहाय नर कुछ नहीं समझता है। रघु-सैन्य में देव-दल धूमपुञ्ज में अग्निराशि की भांति शोभा पा रहा है। इन्द्रजित् के रण में हत हो जाने से आज इन्द्र लङ्का में आया है। हे सूत, जहां वज्र-पाणि इन्द्र है वहां रथ ले चलो।" रथ मनोरथ-गति से चला। उसके सामने रघुसैन्य ऐसे भागी जैसे मदमत्त गजराज को देखकर वनवासी भागते हैं, अथवा जैसे वज्राग्निपूर्ण भीमाकृति मेघों के घोरनाद को सुनकर वायुमण्डल के पक्षी आतङ्क से चारों ओर भागते हैं। वीरेन्द्र केशरी रावण ने धनु टङ्कार कर मुहूर्त भर में तीक्ष्ण शरों से इन्द्र-रचित व्यूह को ऐसे भेद दिया जैसे प्लावन* अपने भीमाघात से बालू के बांध को सहज में तोड़ देता है; अथवा जैसे व्याघ्र निशाकाल में गोष्ठ-वृति† को तोड़ता है। बली तारकारि ने क्रोध से शिञ्जिनी¶ को खींचा और शिखिध्वजा वाले रथ में अग्रसर होकर रावण के रथ की गति को रोक दिया। लङ्केश्वर ने हाथ जोड़ कर शूर को नमस्कार किया और गम्भीर स्वर से इस प्रकार कहा—"हे देव, शङ्कर और शङ्करी को यह किङ्कर दिवानिशि पूजता है। आज लङ्का में तुम्हें वैरी-दल के साथ क्यों देखता हूं? हे कुमार, नराधम राम पर तुम ऐसी अनुग्रह क्यों करते हो? तुम रथीन्द्र हो! लक्ष्मण

* जल की बाढ़ † गोशाला ¶ धनुष की डोरी।

ने अन्याय से मेरे नन्दन को मारा है। मैं आज इसे कपट-समरी मूढ़ को मारूंगा। कृपा कर रास्ता छोड़ दो।"

पार्वती-पुत्र ने कहा—"हे रक्षोराज, आज देवराज के आदेश से मैं लक्ष्मण की रक्षा करूंगा। मेरे बाहुबल को अपने बाहुबल से परास्त करो। तुम्हारा यह मनोरथ पूर्ण न हो सकेगा।" रावण ने हुङ्कार कर आग्नेयास्त्र छोड़ा और अपने शरजाल से शक्तिधर तारकारि को रण में कातर कर दिया। अभया दुर्गा ने विजया को सम्बोधन कर कहा"—अरी सखि, लङ्का की ओर देख। निर्दय रावण कुमार को तीक्ष्ण शर से विद्ध कर रहा है। तू सौदामिनी-गति से जाकर कुमार को युद्ध करने से रोक। अरी सहचरि, वत्स की कोमल देह में रक्त-धारा देख कर मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है। अरी स्वजनि, सदानन्द शंकर भक्त-वत्सल हैं। वह पुत्र से अधिक भक्त से स्नेह करते हैं। इस लिए रावण अब समर में दुर्वार है।" दूती सौरकर* रूप में नीलाम्बर-पथ से शीघ्र गई। विधुमुखी ने कुमार को सम्बोधन करके उसके कान में कहा—"हे शक्तिधर, शक्ति के आदेश से अपना अस्त्र सम्भाल लो। आज लंकापति महारुद्र-तेज से पूर्ण है।" महावीर तारकारि ने हँस कर रथ लौटा लिया। अब राक्षस-नाथ असंख्य कटक‡ काट कर सिंहनाद करता हुआ वहां चला जहां ऐरावत की पीठ पर वज्रपाणि इन्द्र था।

गन्धर्वों ने शत शस्त्रों से रक्षेन्द्र को घेर लिया। शूर रावण ने हुङ्कार करके निमिष मात्र में सब का परास्त किया। वीरदल लज्जा को जलाञ्जलि देकर भाग गया। दैत्यकुलअरि इन्द्र क्रोध से सन्मुख ऐसे आ गया जैसे कुरुक्षेत्र-रण में

* सूर्य की किरण। ‡ फौज।

पार्थ को देख कर कर्ण आया था। रावण ने ऐरावत के शिर पर भीषण तोमर ÷ छोड़ा। सुरेश्वर ने उसे अर्द्धपथ में शर-वृष्टि से तुरन्त काट डाला। राक्षसपति ने गर्व से सुरनाथ से कहा—"रे शचीकान्त, जिसके भय से तू सदा काँपता रहता था वह रावणि तेरी चाल से छल-युद्ध में मारा गया है।

रे निर्लज्ज, क्या इसी लिए आज तू लङ्कापुरी में आया है। रे पामर, तू अमर है; नहीं तो, आज मैं तेरा दमन शमन* की भांति क्षणमात्र में कर देता। हे इन्द्र, मेरी यह प्रतिज्ञा है कि तू लक्ष्मण की रक्षा नहीं कर सकेगा।" रावण भीम गदा ले कर रथ से नीचे कूद पड़ा। मही उस के पद-भार से कांप उठी।

वज्रपाणि ने हुंकार कर क्रोध से वज्र को पकड़ लिया। रक्षोराज ने भीम गदा के भीम प्रहार से इन्द्र के ऐरावत को ऐसा गिराया जैसे प्रभञ्जन से अभ्रभेदी‡ वृक्ष गिरि-शिर पर गिरता है। रावण हँस कर अपने रथ में चढ़ गया। उसी समय सारथि मातलि इन्द्र के लिए रथ ले आया। देवेन्द्र ने मार्ग छोड़ दिया। राम हाथ में धनुष लेकर और सिंहनाद करके संग्राम के लिए दिव्य रथ पर बैठ कर आगे बढ़े।

राक्षसपति ने कहा—"हे वैदेहीनाथ, मैं आज तुम से लड़ना नहीं चाहता। इस भवमण्डल में एक दिन और निर्विघ्नता से जीवित रहो। तुम्हारा कपट-समरी पामर अनुज कहां है? उसे आज मारूंगा। हे राघव-श्रेष्ठ, तुम घर को लौट जाओ।" रावण ने दूर पर शूर रामानुज को देख कर भैरव रव से नाद किया। शूरेन्द्र लक्ष्मण कभी रथ पर चढ़ता

÷ बरछी * यम ‡ आकाश को भेदने वाला अर्थात् ऊंचा।

है और कभी उतरता है। वह राक्षसों का नाश ऐसे कर रहा है जैसे वृषपाल* को सिंह।

पुष्पक घर्घर निर्घोष करता हुआ वेग से चला। उस के अग्निचक्र से चारों ओर अग्निराशि वरसने लगी। राजकेतु‡ रथ के चूड़ा में धूमकेतु × सदृश शोभा पाने लगा। जैसे कबूतर को देखकर बाज पंख फैलाकर आकाश में उड़ता है वैसे रावण रणभूमि में पुत्रघाती लक्ष्मण को देख कर चला। देव और नर हुंकार करके सुरेश की रक्षा के लिये चारों ओर से चले। राक्षसनाथ को देख कर राक्षसवृन्द आगे बढ़ा। पराक्रमी अञ्जनीपुत्र विड़ालाक्ष को संग्राम में परास्त करके प्रभञ्जन की भांति भीम नाद से गर्ज कर रावण के सन्मुख आया। जैसे आंधी से रुई चारों ओर उड़ जाती है वैसे राक्षस यमाकृति वीर को देख कर इधर उधर भागे। लंकापति ने क्रोध में आकर तीक्ष्ण शर से हनुमान को अस्थिर किया। हनुमान ऐसे अधीर हो गये जैसे भूकम्प से भूधर। वीरेन्द्र ने विपद में पितृपद स्मरण किया। वायुने आनन्द से अपने नन्दन को बल प्रदान किया। किन्तु नैकषेय ने महारुद्र तेज से तेजस्वी होकर पवन-तनय को पीछे हटा दिया। किष्किन्ध्या-पति सुग्रीव संग्राम में विग्रह*प्रिय उदग्र का विनाश करने के लिये सामने आया। लंकानाथ ने हँस कर कहा—"रे वर्वर‡, तू राज्यभोग त्याग करके किस कुक्षण में लंकापुरी में आया था? रे किष्किन्ध्या-नाथ, अपनी भ्रातृवधु ताराकारा+ तारा को छोड़ कर यहां रथीकुल में क्यों आ मिला है? मैं

* वैलों का समूह ‡ पताका। × (अमंगल होने वाला है इस लिए कवि ने पुच्छल तारे की कल्पना की है) *युद्ध को पसन्द करने वाला। ‡ मूर्ख! + तारे की आकार वाली

तुझे छोड़े देता हूं। जा अपने देश को लौट जा। रे मूढ़, तारा को विधवादशा पुनः क्यों प्राप्त कराएगा? बली सुग्रीव ने भीम रव से उत्तर दिया—"रे राक्षस, तेरा सा अधर्मी जगत में कौन है? रे दुष्ट, परदारा लोभ से तू वंश सहित नष्ट हो रहा है। तू राक्षसकुल-कलंक है। आज मेरे हाथ में तेरी मृत्यु है। अभी तुझे मार कर मित्रवधु का उद्धार करूंगा।"

बली ने इतना कहकर और गर्जन कर रावण पर एक गिरिशृङ्ग फेंका। आकाश में अन्धकार करता हुआ शिखर चला। रावण ने तीक्ष्ण शर से उस शिखर के टुकड़े टुकड़े कर डाले और कोदण्ड टंकार कर तीक्ष्णतम शर से शूर सुग्रीव को बेध दिया। वह विषम आघात से व्यथित होकर भाग गया। रघुसैन्य सत्रास होकर चारों ओर ऐसे भागी, जैसे बांध टूट जाने से कोलाहलकारी जल। देवता तेजहीन होकर ऐसे भागे जैसे प्रबल पवन के चलने से धुएँ के साथ चिनगारियां। राक्षस ने देवाकृति लक्ष्मण को सामने देख कर वीरमद से हुङ्कार की। शूर लक्ष्मण ने भी निर्भय हृदय से मतवाले हाथी की भांति नाद किया। धन्वी ने रोष से देवधनु को टङ्कारा। रावण क्रोध से कहने लगा—"रे नराधम लक्ष्मण, इतनी देर में इस रणक्षेत्र में तू मुझे मिला है। अब देव वज्रपाणि कहां है? शिखिध्वज शक्तिधर कार्त्तिक किधर गया? तेरा भाई रघुकुलपति, और किष्किन्धापति सुग्रीव कहां भाग गये? रे पामर, तेरी रक्षा अब कौन करेगा? इस अन्तकाल में जननी सुमित्रा और अपनी कलत्र उर्म्मिला इन दोनों का स्मरण कर ले। अब मांसहारी जीवों को तेरा मांस दूँगा। धरणी तेरा रक्त-स्रोत सोख लेगी। रे दुर्मति, तू ने कुसमय में सागर पार किया था।

अरे नीच, राक्षसालय में चोरवेष में प्रवेश कर के जगत के अमूल्य रत्न को तू ने हरा है।"

रावण चाप में अग्निशिखा सम शर लगा कर भैरव रव से गरज उठा। भीमनादी सौमित्रि केशरी ने भीम सिंहनाद से उत्तर दिया—"हे राक्षस-कुल-पति, मेरा जन्म क्षत्री-कुल में हुआ है। मैं यम से भी नहीं डरता—तुम्हारी तो बात ही क्या है? आज तुम पुत्र-शोक से आकुल हो। हे रथि, यथासाध्य धैर्य्य धारण करो। तुम्हें तुम्हारे पुत्रवर के पास भेज कर तुम्हारा शोक शीघ्र निवारण करूँगा।"

घोर रण आरम्भ हुआ। देव-नर विस्मित होकर दोनों की ओर देखने लगे। सौमित्रि वारम्वार हुङ्कार कर शरजाल काटने लगा। रावण ने विस्मय से कहा—"रे सौमित्रि केशरी, मैं तेरी वीरता की प्रशंसा करता हूं। रे सुरथि, तू शक्तिधर से अधिक शक्ति रखता है, किन्तु आज मेरे हाथ से तू नहीं बच सकता।"

शूर रावण ने पुत्रवर मेघनाथ का स्मरण कर के महा-शक्ति को छोड़ा। भीषण रिपुनाशिनी शक्ति सौदामिनी की भांति गगन-मण्डल को उज्ज्वल करती हुई वज्रनाद से चली। देव और नर भय से कांप उठे। लक्ष्मण उस के भीमा-घात से भूतल पर नक्षत्र की भांति गिर पड़ा। उस के समस्त देवास्त्र उस की देह पर झनझना उठे। रक्तस्रोत* से आभाहीन होकर वह गिरिसम गिर पड़ा। चारों ओर आर्त्तनाद होने लगा। देव-नर रथिया ने हाहाकार करते हुए वीर की शव को घेर लिया।

---

* खून निकलने से

शूरसिंह सिंहनाद करता हुआ रथ पर सवार हुआ। राक्षस-वाद्य बज उठा। राक्षस-गण गम्भीर नाद करने लगे। राक्षस-सैन्य ने पुरी में ऐसे प्रवेश किया जैसे रण-विजयनी भीमा चामुण्डा रक्तबीज का नाश कर रक्ताधर से अट्टहास करती हुई चली थी। जैसे उस समय देवदल ने मिल कर देवी की स्तुति की थी वैसे वन्दी-वृन्द आनन्दित होकर विजय-संगीत से राक्षस-सैन्य की वन्दना करने लगे।

आठवाँ सर्ग।

प्रेतपुरी।

रावण राज-कार्य समाप्त कर विराम-मन्दिर में गया और उसने किरीट उतार कर रख दिया। दिनदेव तिमिर-नाशक किरणों सहित अस्ताचल में विलीन हो गए। रात्री ने तारादल के साथ आगमन किया। शान्त सुधानिधि रजनी-कान्त* ने दर्शन दिया।

रणक्षेत्र में चारों ओर अग्निराशियां जल उठीं। जहां सुरथी सौमित्रि भूपतित हैं, वहीं वैदेहीनाथ भ्रातृ-शोक से अचेतन पड़े हैं। नयनों से अविरल अश्रुधारा बह रही है। रक्त से सारी मही भीग गई है। रघुसैन्य खेद से शून्यमना‡ है। विभीषण, कुमुद, अङ्गद, हनुमान, नल, नील, शरभ, सुमाली, वीरकेशरी सुबाहु और सुग्रीव सब प्रभु के दुःख से दुखी हैं। नाथ चेतन होकर कातर भाव से कहने लगे;—"हे लक्ष्मण, जब मैंने राज्य त्याग कर वन में वास किया था तब, हे सुधन्वि, तुम नित्य निशाकाल में धनुष लेकर निरन्तर

---

* चन्द्रमा ‡ उदास

जागा करते थे। हे महाबाहु, आज मैं राक्षसपुरी में शत्रुओं के बीच विपद्-सलिल में मग्न हूं किन्तु तुम भूतल में आराम कर रहे हो। कहो आज मेरी रक्षा कौन करेगा? हे बली उठो। तुम भ्रातृ-आज्ञा पालन करने में कभी विरत नहीं हुए, तथापि मैं अपने भाग्य-दोष से इस हीनावस्था को प्राप्त हुआ हूं। इस लिए तुमने भी मुझे त्याग दिया? हे प्राणाधिक, क्या जानकी ने कोई अपराध किया है? वह तो कारागार में देवर लक्ष्मण को स्मरण करके रात दिन रोती है। हे भाई, तुम जिसकी सेवा मातृसम आदर से करते थे, आज उसे कैसे भूल गए? हे राघव-कुल-चूड़ा, पौलस्तेय * ने तुम्हारी कुलवधू को बन्दी बना रक्खा है। क्या ऐसे दुष्ट चोर को संग्राम में दण्ड दिए बिना इस प्रकार शयन करना उचित है? इस दुर्वार संग्राम में तुम बलवीर्य में सर्व-भुक्सम ¶ हो। हे रघुकुल-जयकेतु भीमबाहु उठो। मैं तुम्हारे बिना ऐसा असहाय हूं जैसे बिना पहिये के रथ का रथी। हे बली, तुम्हारे शयन से बलवान हनुमान ऐसा बलहीन है जैसे गुणहीन ‡ धनु। अङ्गद विषाद से विलाप कर रहा है। मित्र सुग्रीव दुखी है। राक्षस-कुलोत्तम विभीषण अधीर है। समस्त बलीदल व्याकुल है। हे भाई, जल्दी उठो और आंखें खोलकर मेरे नयनों को तृप्त करो।

"किन्तु हे धनुर्द्धर, यदि इस दुरन्त रण में तुम क्लान्त हो गए हो तो आओ वन को लौट चलें। ऐसी दशा में अभागिनी सीता का उद्धार करना निष्प्रयोजन है। राक्षसकुल

* रावण, पुलस्त का नाती ¶ सबको खाने वाली अग्नि के समान ‡ बेतार का धनुष

के विनाश करने की कोई आवश्यकता नहीं । तनय-वत्सल सुमित्रा जननी सरयू-तीर पर तुम्हें याद करती होगी। हे लक्ष्मण, यदि तुम मेरे साथ न लौटे तो मैं यह मुख उसे कैसे दिखाऊंगा ? माता जब पूछेगी कि 'हे राम, मेरे नयनों की मणि तेरा अनुज कहां है'—तब, मैं क्या कहूंगा ? मैं वधु उर्मिला और पुरवासी जनों को क्या कहकर समझाऊंगा ? हे वत्स, आज तुम उस भ्राता के अनुरोध को क्यों नहीं मानते जिसके प्रेमवश तमने राज्यभोग त्याग कर कानन में प्रवेश किया था। तुम सदा मेरे दुःख से दुखी रहे; मेरे अश्रु-मय नयनों को देख कर रोये और उनको बड़े यत्न से पोंछा। अब मैं नयन-जल से भीग रहा हूं, किन्तु तुम मेरी ओर नहीं देखते। हे लक्ष्मण, तुम्हारा भ्रातृ-वात्सल्य जगत में विदित है। ऐसा व्यवहार तुम्हें शोभा नहीं देता। तुम मेरे चिरानन्द हो। मैंने जन्म भर धर्म को लक्ष्य करके देवताओं की पूजा की। क्या देवताओं को मुझे यही फल देना था। हे रजनि, तू दयामयि है। तू सूर्यताप से शुष्क कुसुम को शिशिर-विन्दुओं से नित्य सरस करती है। आज इस प्रसून (कली) को भी प्राणदान दे। हे सुधांशु देव, तुम सुधा-निधि हो। जीवन-दायिनी सुधा देकर आज लक्ष्मण को जीवन-दान दो। हे करुणामय, प्रार्थी राम की प्रार्थना को स्वीकार करो।" प्रभु राम ने प्रिय भाई को गोद में लेकर रणक्षेत्र में इस प्रकार विलाप किया। वीरवृन्द ने विषाद से कातर हो गहन विपिन को अपने हृदय-विदारक रोदन से परिपूर्ण कर दिया।

शैलसुता कैलास में रघुनन्दन के दुःख से दुखी हैं। देवी की गोद में रक्खे हुए शिव के पाद-पद्म पर अश्रुवारि की ऐसी अविरल धारा गिर रही है जैसे प्रातः समय शतदल

पर शिशिर। शङ्कर ने पूछा "हे सुन्दरि, तुम किस लिए इतनी कातरा हो ?"

गौरी ने उत्तर दिया;—"हे देव, तुम क्या नहीं जानते। राम लङ्कापुरी में लक्ष्मण के शोक से करुणस्वर से विलाप कर रहे हैं। उनके विलाप से मेरा हृदय अधीर हो गया है। हे विश्वनाथ, इस विश्व में इस दासी को अब कौन पूजेगा ? हे प्रभु, आज तुमने मुझे अत्यन्त लज्जित किया है और मेरे नाम को कलङ्क-सलिल में डुबो दिया है। हे तापसेन्द्र, क्या यह दासी तपोभङ्ग-दोष की दोषी है, जिसके लिए आपने मुझे इस प्रकार दण्ड दिया है। क्या इन्द्र वृथा ही मेरे पास आया था ? क्या मैथिलीपति ने कुसमय में मेरी पूजा की थी ?

महादेवी अपमानावेश में रोकर नीरव हो गई। शम्भु ने हंस कर कहा—"हे नगेन्द्र-नन्दिनि, इस जरा सी बात के लिए तुम क्यों दुखी हो ? राम को माया के साथ यमपुरी में भेज दो। वह मेरे प्रसाद से सशरीर प्रेत-देश में जा सकेगा। यमराज राम से सन्तुष्ट होकर रामानुज के पुनर्जीवन का उपाय बताएगा। हे सुन्दरि, मेरा यह त्रिशूल माया को दे देना। तमोमय यमलोक में यह अग्निस्तम्भ की भाँति जल कर उस देश को उज्ज्वल करेगा। प्रेतकुल इस की ऐसी पूजा करेगा जैसे प्रजाकुल राजदण्ड की।"

दुर्गा ने कैलाश में माया को स्मरण किया। माया ने तत्काल आकर अम्बिका को प्रणाम किया। पार्वती ने मृदु-स्वर से कहा—"हे विश्वविमोहिनी, तुम लङ्काधाम में जाओ। वहां मैथिलीपति सौमित्रि के शोक से व्याकुल हैं। उन्हें मधुर भाषा में सम्बोधन करना और उनको साथ

लेकर प्रेतपुर में जाना। हे सति, त्रिशूली के शूल का पद्मकर में धारण करो। यह अस्त्रवर अग्निस्तम्भ की भांति प्रज्ज्वलित होकर तमोमय यमलोक को उज्ज्वल करेगा।" माया उमा को प्रणाम कर आकाश-मार्ग को अपनी रूपच्छटा से प्रभावित करती हुई चली। उस समय तारावली ऐसी चमक रही थी जैसे सौर कर से मणिकुल। रूपवती माया अपने पीछे आकाश मण्डल में प्रकाश की रेखा छोड़ती हुई लङ्का की ओर ऐसे गई जैसे कोई वेगवती तरी विशाल सागर में घूमकर सिन्धुतीर पर आती है। वह थोड़ी देर में वहां पहुंची जहाँ रघुकुल-मणि राम सैन्य सहित दुख से व्याकुल पड़े थे। कनक-लंका स्वर्गीय सौरभ से पूर्ण हो गई।

जननी ने राम से कहा—"दशरथि रथि, आंसू पोंछ डालो। तुम्हारा प्राणसम भाई फिर जी जाएगा। सिन्धु के पवित्र जल में स्नान कर तुम मेरे साथ यमालय को शीघ्र चलो। तुम शिव के प्रसाद से सशरीर प्रेतपुर में प्रवेश कर सकोगे। यमदेव स्वयम् सुलक्षण लक्ष्मण के जीवन लाभ करने का उपाय बतावेंगे। हे भीमबाहु, चलो शीघ्र चलो। मैं सुरङ्ग-पथ बताऊंगी। तुम उस में निर्भयता से प्रवेश करना। मैं मार्ग दिखलाती हुई तुम्हारे आगे चलूंगी। सुग्रीव आदि सब नेताओं से कह दो कि वे लक्ष्मण की रक्षा करें।"

राम ने सब नेताओं को सावधान कर महातीर्थ सिन्धु के पवित्र स्रोत-पथ में प्रवेश किया। जैसे रात्रि में चमकीली सुधांशु-* अंशु तिमिराच्छन्न कानन-पथ में

* चन्द्र-किरण।

प्रवेश करती है वैसे पथी ने अपने पथ पर पदार्पण किया। कुछ देर बाद रघुवर ने चौंक कर एक ऐसा भयंकर जल-कल्लोल सुना मानो शत सहस्र सागर घोर गर्जन से उमड़ रहे हों। दूर देश में वह भीषण पुरी दिखाई दी जहां चिर ‡ निशावृत वैतरिणी नदी प्रेतपुर के चारो ओर वज्रनाद से वहती है। तरङ्गें रह रहकर वेग से ऐसे उठ रही हैं जैसे तप्त तवे से पानी अथवा जैसे भीषण अग्नि से धूमपुञ्ज। वहां आकाश में दिनमणि शोभा नहीं पाता। वहां चन्द्रमा और तारे नहीं दिखाई देते। घनघनावलि से उत्पन्न हुई पावक-राशि वायुपूर्ण शून्य पथ में कड़कड़ाती हुई चारो ओर दौड़ रही है।

रघुनाथ ने नदी के ऊपर एक अद्भुत सेतु देखा। वह कभी अग्निमय हो जाता है, कभी धूमावृत दृष्टिगोचर होता है और कभी सुन्दर सुवर्ण-निर्मित जान पड़ता है। उस सेतु की ओर करोड़ों प्राणी हाहाकार करते और करोड़ों उल्लास करते हुए जा रहे हैं।

वैदेही-नाथ ने पूछा—"हे कृपामयि, यह सेतु निरन्तर नाना रूप क्यों धारण करता है और अगण्य प्राणी पतङ्गों की भाँति इस अग्निशिखा-सम सेतु की ओर क्यों जाते हैं?

माया-देवी ने उत्तर दिया—"हे सीतानाथ, यह सेतु काम * रूपी है वह पापी के लिए अग्निमय और धूमावृत रहता है किन्तु पुण्यात्मा के लिए स्वर्ग-पथ सा सुन्दर और प्रशस्त हो जाता है। हे नरमणि, वे असंख्य आत्माएं मृत्युलोक में

---

‡ सदा अन्धकार से ढकी हुई। २ धुएं से ढका।

* इच्छानुसार रूप बदलने वाला।

देह त्याग कर कर्मफल भोगने के लिए इस प्रेतपुर में आई हैं। जो धर्म-पथ गामी हैं वे सेतु-पथ के उत्तरी, पश्चिमी और पूर्वीद्वार में जाते हैं। जो पापी हैं उन्हें रात दिन महा क्लेश से तैर कर नदी को पार करना होता है और यमदूत नदी-तट पर उन्हें पीड़ा देते हैं। ये पापी प्राणी जल में ऐसे जलते हैं जैसे मछली तप्त तेल में। तुम मेरे साथ अभी ऐसे दृश्य देखोगे जिन्हें मानव नेत्रों ने कभी न देखा होगा।"

राम माया के पीछे धीरे धीरे चले। देवी सुवर्ण-प्रदीप के समान विकट देश को उज्ज्वल करती हुई जा रही है। राम ने सेतु के पास विराट मूर्त्ति दण्डपाणि यमदूत को देखा। तमचर ने वज्रनाद से गर्जन करके पूंछा—"तुम कौन हो? हे साहसि, तुम ने किस बल से इस आत्मामय देश में सशरीर प्रवेश किया है? शीघ्र बोलो, नहीं तो इस दण्डाघातसे क्षण मात्र में तुम्हारा नाश करूंगा।" मायादेवी ने हँस कर शिव का त्रिशूल दिखा दिया।

दूत ने विनीत भाव से नमस्कार कर सती से कहा—"हे साध्वि, मेरी सामर्थ नहीं कि मैं तुम्हारी गति को रोक सकूं। आप आनन्दपूर्वक स्वर्णमय सेतु को देखिए। आपके आगमन से सेतु ऐसा हो गया है जैसे ऊषा के आगमन से आकाश हो जाता है।" दोनों वैतरणी नदी पार हो गए। राम ने यमपुरी का लौहमय द्वार देखा। द्वार के चारों ओर चक्राकृति अग्नि-राशि अविराम गति से घूम रही है। भीषण तोरण के ऊपर आग्नेय अक्षरों में लिखा है—'हे प्रवेशक, स्पृहा*

* सुख-भोग की इच्छा।

त्याग कर इस देश में प्रवेश करना। इस पथ से पापी जन चिरदुःख भोगने को दुःख इस देश में जाते हैं।'

सुरथी ने द्वार पर अस्थिचर्म मात्र ज्वर-रोग को देखा। क्षीण तनु कभी शीत से थर थर काँपता है और कभी घोरदाह से ऐसा जलता है जैसे वड़वानल-तेज से जलदल पति‡। पित्त, श्लेष्मा और वायु ज़ोर से आक्रमण कर रहे हैं। ज्वर के निकट विशाल उदर वाली उदरपरता है। यह दुर्मति अजीर्ण-भोजन-द्रव्य* को वमन करता है और वारम्वार उसे दोनों हाथ से उठाकर सुखाद्य‡ की भाँति खाता है। उस के पास प्रमत्त‡‡ आँखें मिचमिचाता हुआ हँस रहा है। वह कभी नाचता है, कभी गाता है, कभी लड़ता है, और कभी रोता है। यह मूढ़ सदा ज्ञान-शून्य रहता है। इसके पास दुष्ट काम है। उसकी देह विगलित शव+ सी हो रही है। किन्तु पापी का हृदय कामानल-ताप से दग्ध होकर सदा रति-क्रीड़ा में आसक्त रहता है। इसके पास यक्ष्मा रातदिन खांस खांस कर शोणित निकाला करता है और महापीड़ा में हांपा करता है। ज्योतिहीन नेत्रों वाली विसूचिका के मुख और मलद्वार से लोहू की लहरी (धारा) वह रही है। तृषारूपी रिपु उस पर वारम्वार आक्रमण करता है। अङ्ग-ग्रह नामी भयङ्कर यमचर क्षीण अंगों को प्रवलता से ऐसे ग्रास कर रहा है जैसे वन में व्याघ्र पशु को मार कर उसे कौतुक से काटता है। उस से कुछ दूर पर उन्मत्तता बैठी है। कभी वह ऐसी उग्र होती है जैसे अग्नि-शिखा आहुति को पाकर; कभी बलहीना हो

---

‡ समुद्र। * जो भोजन हज़म नहीं हुआ, ‡ अच्छा भोजन, ‡‡ नशेवाज़, × गला मुरदा।

जाती है; कभी विविध भूषणों से भूषित होती है; कभी इतनी नग्न हो जाती है जैसे समर-रङ्ग में हरप्रिया काली; कभी विकट हास्य से हँसती है; कभी तीक्ष्ण अस्त्र से अपना गला काटती है; कभी विष खाती है; कभी जलाशय में डूबती है; कभी गले में रस्सी बाँधती है; कभी अपने को धिक्कारती है; कभी विभ्रम विलास से कामातुरा होकर कामी को बुलाती है; मल-मूत्र का कुछ विचार न कर कभी अनायास उसे अन्न के साथ खाती है; शृङ्खलाबद्ध कभी ऐसी धीर होती है जैसे पवन-विहीन स्रोतहीन प्रवाहिणी+। वहां और भी कितने ही रोग हैं जिनका वर्णन कोई नहीं कर सकता। राम ने रण* को अग्निवर्ण रथ में देखा। उसके वस्त्र रक्त से आर्द्र हैं और उसके हाथ में तेज़ तलवार है। रथाग्र में क्रोध रथी के वेष में बैठा है। गले में नर-मुण्ड-मालायें हैं और नरदेह-राशि उसके सामने है। भीम खड्ग-पाणि हत्या भी दिखाई दी। वह हत्या करने के लिए सदा उर्द्धबाहु है। आत्महत्या वृक्ष की शाख में बँधी हुई रस्सी को गले में डालकर निर्जन स्थान में झूल रही है। उसकी लाल जिह्वा और उन्मीलित आंखें भयंकर हैं। मायादेवी ने राम से मधुर स्वर में कहा—"हे रघुरथि, जिन विकट यमदूतों को तुम देखते हो वे सब नाना वेषों में भूमण्डल में निरन्तर ऐसे भ्रमण किया करते हैं जैसे घोर वन में किरात मृगयार्थ। हे सीता-कान्त, यम-नगर में प्रवेश करो तो तुम्हें दिखलाऊंगी कि आत्म-देश में आत्माएं किस प्रकार जीवन व्यतीत करती हैं। यह

+नदी, *मूर्त्तिमान रण।

दक्षिण द्वार है। इस देश में चौरासी नरक-कुण्ड हैं। चलो, शीघ्र चलो।"

सीता-कान्त का यमपुरी में प्रवेश करना मानो दाव-दग्ध॥ वन में ऋतुराज वसन्त का आगमन था अथवा मानो जीवशून्य देह में अमृत डाला गया था। अन्धकारमय पुरी में चारो ओर आर्त्तनाद उठ रहा है। भूकम्प से जल थल सब थर थर कांप रहे हैं। मेघावलि क्रोध से कालाग्नि‡ उद्गीरण* कर रही है। ऐसा दुर्गन्धमय समीर बह रहा है मानों लाखों शव श्मशान में जल रहे हों। थोड़ी देर में रघुश्रेष्ठ ने एक महाकुण्ड देखा। कालाग्नि द्रव रूप में कल्लोल से वह रहा है। उसमें करोड़ों प्राणी छटपटाते और बिलबिलाते हुए हाहाकार कर रहे हैं। "हाय, निर्दय विधाता ने क्या इसी लिए सब को पैदा किया था! हा दारुण अदृष्ट! हम मां के उदर में जठरानल से ही क्यों न जल गए? हे दिनमणि, तुम कहाँ हो! हे निशापति सुधांशु, तुम कहाँ चले गए। हे देव, क्या तुम दोनों के दर्शन कर अपने नेत्रों को कभी तृप्त कर सकूंगा? अरे सुत, दारा और आत्मीय जनों, तुम सब कहां हो? हाय! वे सब कहां हैं जिनके लिए अर्थोपार्जन धर्म को तिलाञ्जलि देकर और सदा कुपथ में रत रहकर किया था। हा! वह धन और वैभव कहां गया जिसे अन्याय और दुराचार द्वारा एकत्र किया था। जिनके लिए मैंने मत्सर और छल का जीवन व्यतीत किया था आज वे नहीं दिखाई देते। यश और कीर्ति के लिए मैंने अनेक आडम्बर रचे किन्तु अब वे सब निष्फल हैं। अरी दुष्टा निर्दयता,

॥ वन की आग, ‡ प्रलय काल की अग्नि, * निकालना।

मैंने तेरे वश सनाथों को अनाथ, सधवाओं को विधवा, निर-पराधियों को अपराधी, साधुओं को असाधु, सज्जनों को दुर्जन बनाया । रे मन्दमति स्वार्थ ! आज तेरे कारण ही इस घोर यातना में पड़ा हूं । असत्य को सत्य, न्याय को अन्याय, अधर्म को धर्म, अनाचार को आचार, कुरीति को सुरीति, गुणी को अवगुणी, कुपंथ को सुपंथ, अपमान को मान, अप-यश को सुयश, नीचता को उदारता, आलस्य को तपस्या और अशुद्धता को शुद्धता बतलाना तेरा ही काम था । ×

कहीं भीषण मूर्ति यमदूत मस्तक पर दण्ड मार रहा है; कहीं कीड़े काट रहे हैं; कहीं वज्रनखा मांसहारी पक्षी उड़ २ कर आंखें और आंतें नोचते हैं । पापियों के आर्तनाद से पुरी परिपूर्ण हो रही है ।

माया दुखी होकर राम से कहने लगी—"हे रघुमणि, इस अग्निमय कुण्ड का नाम रौरव है । जो दुर्मति पर-धन हरता है उसका यहां वास होता है । यदि विचारक ‡ अवि-चार * में रत होता है तो वह भी इस कुण्ड में डाला जाता है । यहां की अग्नि कभी नहीं बुझती । कीट सदा काटते हैं । हे राम, जिस घोर नरक की अग्नि में प्रेत-कुल जलता है वह साधारण अग्नि नहीं है । यहां विधि का कोप अग्निरूप में सदा प्रज्वलित रहता है । हे रथि, चलो अब मैं तुम्हें दिखा-ऊंगी कि कुम्भीपाक नरक में यमदूत पापियों को तप्त तेल में कैसे भूनते हैं । हे बली, देखो; वह घोर क्रन्दन-ध्वनि आ रही है । मैंने मायाबल से तुम्हारे नासापथ को बन्द कर दिया था, नहीं तो तुम यहाँ नहीं ठहर सकते ।"

‡ जज, हाकिम * अन्याय । × यहां अनुवाद में कुछ बढ़ाया गया है ।

राम ने हाथ जोड़ कर कहा—"हे क्षेमंकरि, [1] दास को क्षमा करो। मैं ऐसे पर-दुख को और अधिक नहीं देख सकता। नर असहाय और निर्बल है। क्या इस पाप-पुञ्ज का निवारण किसी प्रकार किया जा सकता है?"

माया ने उत्तर दिया—"हे धनुर्धारी, इस संसार में ऐसा कोई विष नहीं है जिसकी औषधि न हो, किन्तु यदि कोई उस औषधि की अवहेलना करे तो फिर उसे कौन बचा सकता है? जो मतिमान् कर्मक्षेत्र में पाप से सदा युद्ध करता है वही जीवन-मरण के दुःखों, रोगों, तापों और विषों से मुक्त हो सकता है। धर्म अभेद्य कवच से उसकी रक्षा करता है। जिन्होंने मन और वाणी का संयम किया है; जिन्हों ने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने की निरन्तर चेष्टा की है; जिनका चित्त कामिनी और कञ्चन की ओर चलायमान नहीं होता; जिनकी आत्मा पर-दुःख में दुखी और पर-सुख में सुखी होती है; जो ईर्षा-द्वेष, काम-क्रोध, लोभ-मोह, तृष्णा-अहंकार के चक्र में पड़ कर अपने स्वरूप को नहीं भूलते, वे ही जन पाप-पुञ्ज के भीषण परिणामों से निवृत्ति प्राप्त करते हैं। हे धन्वि, यदि तुम इस दण्डस्थल को नहीं देखना चाहते तो दूसरे पथ से चलो।" सीताकान्त ने उस नीरव, असीम और दीर्घ वन में बहुत दूर तक प्रवेश किया। उस भीषण जङ्गल में पक्षी नहीं बोलते, समीर नहीं चलता और वन-सुशोभिनी कुसुमावलि भी नहीं खिलती। रश्मियां पत्र-पुञ्ज को भेद कर प्रवेश करती हैं, किन्तु वे ऐसी तेजहीन हैं जैसे रोगी का हास्य।

---

[1] मंगलदायिनी।

लाखों प्राणियों ने विस्मित होकर सहसा रघुनाथ को ऐसे घेर लिया, जैसे मधु-पात्र को मक्खियां। किसीने करुण स्वर से पूछा—"हे शरीर धारी, तुम कौन हो, और किस बल से यहां आए हो? तुम देव हो अथवा नर? हे गुणनिधि, हम सब को वाक्य-सुधा-वर्षण द्वारा तृप्त करो। जिस दिन इस पापी प्राण को यमदूत ने निकाला था, उस दिन से हम सब रसना-जनित ध्वनि से वञ्चित हैं। हे रथि, तुम्हारे अंगों को देख कर हमारे नयन तृप्त हुए हैं। हे वराङ्ग, अपने वचनों से हमारे कानों को तृप्त करो।"

रामने उत्तर दिया—"हे प्रेतकुल, यह दास रघुकुलोद्भव है। दशरथ रथी मेरे पिता हैं और कौशल्या देवी मेरी जननी हैं। इस दास का नाम राम है। भाग्य-दोष से मैं वनवासी हुआ हूं। त्रिशूली के आदेशानुसार धर्मराज से भेंट करने यहां आया हूं।" एक प्रेतने कहा—"हे राम, मैं तुम्हें जानता हूं। तुम्हारे शर से मैंने पञ्चवटी वन में शरीर त्याग किया था।" रामने पूछा—"हे राक्षस, किस पाप से तुम इस भीषण वन में आए हो?" प्राणी ने उत्तर दिया—"हे रघुराज, दुर्मति रावण इस दण्ड का हेतु है। उसका कार्य करने के लिये मैंने तुम से छल किया था, इस लिए मेरी यह दुर्गति हुई।" अब खर और दूषण एक साथ दिखाई दिये। वे दोनों रघुनाथ को देखकर ऐसे भागे जैसे विषदन्त-हीन सर्प नेवले को देख कर भागता है। सहसा भैरव रव से वन पूर्ण हो गया। माया ने राम से कहा—"हे रघुमणि, यह प्रेत नाना कुण्डों में बसते हैं। कभी २ वे विलाप-वन में आकर अकेले विलाप करते हुए भ्रमण करते हैं। वह देखो, यमदूत क्रोध से सब को अपनी अपनी जगह पर बैठा रहा है।" वैदेही-हृदय-कमल-रवि ने

भूता के दल के दल और भीषण मूर्त्ति यमदूतों के समूह के समूह देखे। भूत निनाद करते हुए वेग से ऐसे भाग रहे हैं जैसे क्षुधातुर सिंह की ताड़ना से मृगगण। दया-सिन्धु राम सजल नयन और दुखित होकर माया के साथ आगे चले।

राम थोड़ी देर में एक दूसरा आर्त्तनाद सुन कर रोमाञ्चित हो गए। उन्हें दूर देश में दिन की शशिकला की सी आभाहीन लाखों नारियाँ दिखाई दीं। कोई अपनी दीर्घ केशावली को नोंच कर कहती है—"यौवन-मद में उन्मदा होकर और धर्म को भूल कर कामी के मन को जीतने के लिए मैं तुझे चिकनाया और बाँधा करती थी।" कोई नखों से अपने वक्ष को विदीर्ण करके कहती है:—"हाय, हीरे मोतियों से तुझे सजा कर मैंने अपने दिन वृथा ही काटे। अब इसका फल यह मिला।" कोई खेद से अपने नयनों को निकाल कर कहती है—"रे पापी चक्षु, तुम्हें अञ्जन से रञ्जित कर और सब को कटाक्ष-शर से विद्ध कर मैं हँसती थी और तेरी विभा को दर्पण में देखकर कुरङ्ग-नयन से घृणा करती थी। अब अन्त में क्या तेरी गरिमा का पुरस्कार यही है?" वामादल रोता हुआ चला गया। उनके पीछे यमदूती हैं। केशों में भीषण सर्प फुसकार मार रहे हैं। उनके नख असि-सम हैं। अधर ओष्ठ रक्ताक्त हैं। उनके कदाकार स्तन नाभीतल में हिल रहे हैं। माया ने राम से कहा—"हे रघुमणि, यह नारीकुल जिसे तुमने अभी देखा है, मही में भेश-भूषा-सक्ता थीं। जैसे वसन्त में वनस्थली सजती है वैसे ये दुष्टा अपने आप को सजा कर और कामातुरा होकर अपनी चेष्टाओं से कामीजनों को सर्वदा छलती थीं। हाय, अब वह रूप-माधुरी और यौवन-धन कहां है?" वैसे ही प्रतिध्वनि हुई। "हाय! अब वह रूप-

माधुरी और यौवन-धन कहां है।" वामाकुल विलख २ कर रोता और चिल्लाता हुआ नरक-कुण्ड में जा गिरा।

"हे मात, तुम्हारे प्रसाद से अनेकों अद्भुत काण्ड देखे किन्तु धर्मराज कहां हैं? मैं उन से किशोर लक्ष्मण को विनयपूर्वक मांग लूंगा। मेरी विनती है कि मुझे अब उनके सुधाम में ले चलो।"

माया ने हँसकर कहा—"हे राम, यह पुरी असीम है। तुमको इसें किञ्चितमात्र दिखाया है। हे शूर, यदि हम दोनों सहस्र वर्ष तक इस यम-नगर में घूमते रहें तो भी इसके सब भागों को नहीं देख सकेंगे। पूर्वद्वार में पतिपरायणा साध्वी पति के साथ सुख से वास करती हैं। स्वर्ग का वह भाग अतुलनीय है। मनोहर कानन में सुरम्य प्रासाद हैं। सुन्दर सरोवर रम्य कमलों से सदा परिपूर्ण रहते हैं। वासन्त समीर सदा सुस्वर से वहती हैं। सुन्दर पिक-पुञ्ज सदा पञ्चस्वर से गाता है। वीणा, मुरज, मन्दिरा, वांसुरी और सप्तस्वरा अपने आप वजा करते हैं। दधि, दुग्ध और घृत की नदियां सदा वहा करती है। कानन में चारों ओर अमृत-फल लग रहे हैं। अन्नदा* स्वयम् परमान्न‡ प्रदान करती है। चर्व†-चौष्य,‖-लेह्य¶ और पेय* आदि नाना व्यञ्जन तैयार रहते हैं। हे राम, जैसे स्वर्ग में कामलता सदा फलवती रहती है वैसे यहां सब की कामनाएं पूर्ण होती हैं। हे वलि, अब वहां जाने का प्रयोजन नहीं। चलो उत्तर द्वार पर चलें और वहां भी क्षणकाल भ्रमण करें। हे नृपमणि, तुम शीघ्र ही धर्मराज से मिलोगे।"

---

* अन्नपूर्णा, ‡ उत्तम भोजन, † चाव कर, ‖ चूस कर, ¶ चाटकर, * पीकर खाये जाने वाले पदार्थ,

दोनों उत्तर दिशा को चले । वैदेही-नाथ ने देखा कि वहां सैकड़ों वन्ध्य × गिरि हैं । किसी तुङ्ग शृङ्ग के शिर पर हिम की राशियां हैं । कोई गर्जन करके बारम्बार अग्नि निकालता है । अग्निमय स्रोत से शिलाओं के द्रवित होकर बाहर निकलने से आकाश भस्म से भर गया है । चारों दिशाएं कोलाहल से पूर्ण होरही हैं । प्रभु ने सैकड़ों ऐसे असीम मरुक्षेत्र देखे जहां उत्तप्त वायु वालुवृन्द* को तरंग-दल की भांति वहा ले जा रहा था । बली ने सागर सदृश अकूल तड़ागों को देखा । कहीं पर पर्वताकृति तरङ्गें उठ रहीं हैं; कहीं गतिहीन जलराशि सड़ रही है । उस सड़े पानी में भीषण मूर्त्ति मेंढक गम्भीर स्वर से चीत्कार कर रहे हैं । उसमें अनेक सर्प और भीमकाय अजगर तैरते हैं । किसी जगह हलाहल-सागर सागर-मन्थन की भाँति उथल पुथल रहा है । पापी इस देश में विलाप और हाहाकार करते हुए फिरते हैं । सांप डसते हैं । विच्छू और भीषण कीट काटते हैं । भूतल पर अग्नि है और आकाश में घोर शीत । इस उत्तर द्वार में कोई क्षण भर भी आराम नहीं पा सकता । जैसे कोई मल्लाह आकुल सागर में बहुत दिन तक फिरते २ उद्यान की कुसुम-सौरभपूर्ण वायु को सूंघकर और पक्षियों के राग और मनुष्यों के कल्लोल को सुनकर तीर की सन्निकटता का अनुमान करके आनन्द से आनन्दित होता है, वैसे रघुवर सुखकर वाद्यध्वनि सुन कर आनन्दित हुए । सुमति ने विस्मय से स्वर्णभवन, कनक-पुष्प प्रसु कानन-राजी और प्रस्फुटित कमलों के सुदीर्घ सरोवर को देखा । माया ने मधुर स्वर से कहा—" इस द्वार पर वे वीर सुख भोगते हैं जिन्होंने समर में लड़कर प्राण दिये हों ।

× कुछ न पैदा करने वाले । * वालू के ढेर

हे राम, इस भाग में सुख-सम्भोग अशेष हैं। हे भीमबाहु, कानन-पथ से चलकर तुम देखोगे कि यह सञ्जीवनी पुरी यशस्वियों के यश से ऐसी पूर्ण है जैसे निकुञ्ज सौरभ से पूर्ण रहता है। इस पुण्यभूमि में विधाता के हास्य रूपी चन्द्र सूर्य और तारागण सदा उज्ज्वल रहते हैं। " वली ने थोड़ी देर बाद रङ्गभूमि रूपी एक क्षेत्र देखा। कहीं विशाल शाल सदृश शूल धरे हैं, कहीं तुरङ्गराजी रण भूषणों से मण्डित होकर हिनहिना रही है, कहीं गजेन्द्र गर्ज रहे हैं और कहीं चर्मधारी असि और चर्म धारण करके खेल रहे हैं। कहीं पर मल्लगण लड़ रहे हैं। पताका रणानन्द से उड़ रही है। कवि कुसुमासन पर बैठे हैं और स्वर्ण-वीणा बजाकर वीरकुल कीर्त्तन‡ से श्रोताओं को मोहित कर रहे हैं। वीरदल उस संगीत से मत्त होगया है। पारिजात*-राशि की वृष्टि से सुसौरभ पूर्ण हो रहा है। अप्सराएं नाच रही हैं। किन्नर गा रहे हैं। माया ने राम से कहा,—" हे क्षेत्र-चूड़ामणि, आज उन सब वीरों को यहाँ देखलो जो सतयुग के समर-क्षेत्र में हत हुए थे। उन्होंने हैमकूट सदृश निशुम्भ के काञ्चन-शरीर को देखा। उसके किरीट की आभा गगन में उठ रही है। यह रथी महावीर्य्यमान था। देवतेजोद्भवा चण्डी ने घोर रण में इस शूर का नाश किया था। शुम्भ को देखो। वह पराक्रम में शूली शम्भु के समान है। भीषण महिषासुर त्रिपुरारि-अरि शूर त्रिपुर को देखो। वृत्र आदि जगत विख्यात दैत्यों को देखो। सुन्द उपसुन्द पुनः भ्रातृप्रेम-नीर में मग्न हैं।" राम ने पूंछा—" हे दयामयि, कुम्भकर्ण, अतिकाय, नरान्तक और इन्द्रजित आदि राक्षस शूर यहां क्यों नहीं दिखाई पड़ते ?"

---

‡ वीरों के यश का कीर्त्तन * स्वर्गीयफूल

देवी ने उत्तर दिया—" हे वैदेहीपति, जिनकी अन्त्येष्टि-क्रिया नही हुई वे इस नगर में नहीं आ सक्ते। ऐसे प्राणी उस समय तक नगर के बाहर फिरा करते हैं, जब तक कि उनके बान्धव यत्न से उनकी प्रेतक्रिया नहीं करते। हे वीरवर, देखो एक सुवीर इधर आ रहा है। मैं तुम्हारे साथ अदृश्य रूप से रहूंगी। तुम आनन्द से मिष्टालाप करो। " इतना कह कर माता अदृश्य हो गई।

रघुवर ने विस्मय से तेजस्वी वीरेश को देखा। उसके किरीट-चूड़ा में सौदामिनी दमक रही थी। उसकी महाकाय के आभरण नयनों में चकाचौंध कर रहे थे।

सुरेश्वर ने अग्रसर होकर राम से पूछा:—हे रघुकुल चूड़ामणि, तुम यहां सशरीर किस लिए आए हो? तुमने सुग्रीव को सन्तुष्ट करने के लिए अन्याय से समर में मेरा संहार किया था। हे राघव, भय दूर करो। इस यमपुर में हम सब क्रोध को नहीं जानते। हम जितेन्द्रिय हैं। पृथ्वीमण्डल में मानव जीवन का स्रोत मलीन रहता है, किन्तु इस देश में वह विमल धारा में वहता है।" रामने रथीन्द्र किष्किन्ध्यानाथ को पहचान लिया। वालिने हँस कर कहा;—"हे दशरथि-रथि, आओ मेरे साथ चलो। दूर पर वह जो सुवर्ण-कुसुमों का उद्यान देख रहे हो उस में तुम्हारे पितृ-सखा जटायु सदा विहार करते हैं। वह तुम्हें देखकर परम प्रीति करेंगे। उस महामति ने विपद में सती नारी की रक्षा के लिए धर्मार्थ जीवन दान दिया था। इसी लिए उसका गौरव असीमहै।" राम ने पूछा—" हे सुरथि, कृपाकर कहो, क्या इस देश में तुम सब समान रूप से सुखी हो? " वालि ने उत्तर दिया—

"हे राघव, खान के गर्भ में सहस्रों मणि जन्म लेती है किन्तु वे सब आभा में बराबर नहीं होती। इसी प्रकार मिष्टालाप करते हुए दोनों चलने लगे। रम्यवन में पीयूष-सलिला नदी कलकल-रव से बह रही है, और गरुड़-पुत्र देवाकृति जटायू हस्तीदन्त निर्म्मित और विविध-रत्न-खचित आसन पर आसीन है। चारों ओर वीणाध्वनि हो रही है। पद्म*पर्ण-वर्ण विभाराशि ने उस वनराजी को ऐसा उज्ज्वल किया है जैसे उत्सव-आलय में चंदोए को भेद कर सौरकरपुञ्ज अपने प्रकाश को फैलाता है। वहां सदा परिमलमय वसन्ती समीर बहा करता है। वीर ने सादर राम से कहा—"हे मित्रपुत्र रघुकुलमणि, आज मेरे नयनों की तृप्ति हुई। तुम धन्य हो! हे शुभ, तुम्हारी जननी ने तुम्हें शुभक्षण में गर्भ में धारण किया था। तुम्हारे जन्मदाता सखा दशरथ धन्य हैं। तुम देव-प्रिय हो, इस लिए सशरीर इस नगर में आए हो। हे वत्स, रक्ष-वार्त्ता कहो तो सुनूं। क्या दुर्मति रावण समर में मारा गया?" प्रभु ने प्रणाम कर मधुर स्वर से कहा—"हे तात, तुम्हारे पद-प्रसाद से घोर संग्राम में अनेक राक्षसों का विनाश किया। अब राक्षसपुर में अकेला राक्षस-कुल-पति वीर रावण रहगया है। उसके शर से अनुज लक्ष्मण मारा गया है। यह दास शिव के आदेश से इस दुर्गम देश में आया है। हे रथि, कृपा कर मुझ दास से कहो कि तुम्हारे सखा मेरे पिता कहाँ हैं?"

बली जटायु ने कहा—"पश्चिम द्वार पर राज-ऋषिराज

---

*कमल के पत्ते का रंग रखने वाली सूर्य की किरणों का समूह।

ऋषिदल में विराजमान हैं। हे रिपुदमि, उस देश में जाना मुझे मना नहीं है। चलो, मैं तुम्हारे साथ चलता हूं।"

राम ने बहुविध रम्य देश और स्वर्ण-अट्टालिकाएं देखीं। अनेक देवाकृति वीर कुसम-कानन के सरोवर में सहर्ष ऐसे केलि कर रहे हैं जैसे मधुकाल में निकुञ्जवन में भ्रमरकुल गुञ्जार करता है अथवा जैसे निशा में खद्योतकुल दशदिक उज्ज्वल करते फिरते हैं। दोनों द्रुतगति से चले। लाखों प्राणियों ने राम को घेर लिया।

बली जटायु ने कहा,—"यह सुरथी रघुकुलोद्भव है। शिव के आदेश से पितृ-पद-दर्शन करने के लिए सशरीर इस प्रेत-पुर में आये हैं। हे प्राणीदल, तुम आशीर्वाद देकर अपने २ स्थान को चले जाओ।" सब आशीर्वाद देकर चले गए। फिर दोनों महानन्द से चलने लगे। चूड़ाधारी हेमाङ्गगिरि आकाश को छू रहा है। प्रवाहिनी कल कल शब्द कर के बह रही है। हीरा, मणि और मुक्ता रूपी कमल स्वच्छ जल में तैर रहे हैं। नीचे देश में कहीं श्याम-भूमि कुसुम-शोभित है। उस में कमल-खचित सर हैं। वन में पिकवर निरन्तर कुहू कुहू कर रहे हैं। जटायु ने राम से कहा—"हे रघुमणि! देखो पश्चिमी-द्वार हिरण्यमय है। इस सुदेश की गृहावली हीरों की बनी है। हे नरमणि! देखो दिलीप साध्वी सुदक्षिणा को लिए और उन्नत मस्तक पर मरकत-पत्र का छत्र धारण किये स्वर्ण-वृक्ष के मूल में कनक-आसन पर बैठे हैं। तुम अपने वंश के आदि पुरुष की पूजा भक्तिभाव से करो। इस देश में इक्ष्वाकु, मान्धाता, नहुष प्रभृति जगत के विख्यात असंख्य राजर्षिगण विराजमान हैं। हे महाबाहु! अग्रसर होकर पितामह की पूजा करो।"

राम ने अग्रसर होकर दम्पति के पदतल में साष्टाङ्ग प्रणाम किया। दिलीप ने आशीष देकर पूछाः—"तुम कौन हो? हे देवाकृति रथि! तुम सशरीर प्रेत-देश में कैसे आये हो? तुम्हारा चन्द्रानन देख कर मेरा हृदय आनन्द-सलिल में मग्न हो गया है।" सुदक्षिणा ने मधुर स्वर से कहाः—"हे सुभग, तुम कौन हो? जैसे विदेश में स्वदेशीय जन को देख कर आँखें तृप्त होती हैं, वैसे तुम्हें देख कर मेरी आँखें तृप्त हुई हैं। हे सुमति! किस साध्वी नारी ने तुम्हें अपने गर्भ में धारण किया था? हे देवाकृति! यदि तुम देवकुलोद्भव हो तो हम दोनों की वन्दना क्यों करते हो? यदि तुम देव नहीं हो तो नरदेव रूप में तुमने किस कुल को उज्ज्वल किया है?"

दशरथि ने हाथ जोड़ कर उत्तर दियाः—"हे राजर्षि! भुवन-विख्यात रघु नामी तुम्हारे पुत्र के जो अपने बल से भुवन-जयी और दिग्विजयी हुआ था, वसुधा, पालक अज नाम का पुत्र जन्मा था। इन्दुमती ने अज के साथ विवाह किया और उस के गर्भ में महामति दशरथ ने जन्म लिया था। उनकी पटरानी, माता कौशल्या ने शुभ दास को जन्म दिया है। सुमित्रा जननी का पुत्र लक्ष्मण केशरी है और कैकेयी ने भरत भ्राता को गर्भ में धारण किया था।"

राजऋषि ने कहाः—"राम, तुम इक्ष्वाकु-कुलशेखर हो। तुम्हें मैं आशीर्वाद देता हूं। हे कीर्तिमान! जब तक चन्द्र-सूर्य आकाश में उदय होंगे तब तक तुम्हारी कीर्त्ति जगत में स्थापित रहेगी। हे गुणीश्रेष्ठ! तुम्हारे गुणों से मेरा वंश भूतल में उज्ज्वल है। वह जो स्वर्ण-गिरि देख रहे हो, उस के पास वैतरणी-तट पर विख्यात अक्षय वट है। उस

वृक्षमूल में तुम्हारे पिता तुम्हारे लिए धर्मराज को सदा पूजते हैं। हे महाबाहु! रघुकुल-अलङ्कार, तुम उनके पास जाओ। वह तुम्हारे दुख से व्याकुल हैं।" राम ने चरणार-विन्द की वन्दना की और शूर जटायु को विदा कर आनन्द से अकेले सुरम्य स्वर्ण-गिरि--देश को चलने लगे। राम ने वतरणी-तीर अक्षय वृक्ष को देखा। इस भूमि में यह नदी पीयूष*--सलिला है। वृक्ष की शाखाएं सुवर्ण की हैं। मरकत के पत्ते हैं। उस के फलों की शोभा कौन वर्णन कर सकता है? तरुराज देवाराध्य और मुक्तिदाता है। राजर्षि ने पुत्रवर को दूर से देख दोनों बाहु फैला कर (वक्षःस्थल अश्रुजल से आर्द्र है) कहाः—"हे प्राणाधिक! क्या तुम इतने दिन में देव-प्रसाद से मेरे नेत्रों को तृप्त करने के लिए इस दुर्गम देश में आये हो? रे मेरे हाराधन‡! क्या तुम आज मुझे सचमुच मिल गये हो? हे रामभद्र! तेरे वियोग से मैंने कितने दुःख सहे सो कैसे कहूं? जैसे अग्नि-तेज से लोहा, पिघल जाता है वैसे मैंने तेरे शोक से अकाल में देह त्याग की। हाय, हृदय की जलन से मेरा प्राण विसर्जन हुआ था। रे वत्स, तू तो धर्मपथगामी है किन्तु दारुण विधि ने मेरे कर्म-दोष से तेरे भाग्य में क्लेश लिखा था। इस लिए यह घटना घटित हुई और कैकेयी ने मत्त मातङ्गिनी की भाँति मेरे जीवन--कानन की शोभायुक्त आशालता का दलन किया।" बली दशरथ के विलाप करने पर दाशरथि चुपचाप रोने लगा।

राम ने कहाः—"हे तात! अब यह दास अकूल सागर में वहा जाता है। इस विपद में मेरी रक्षा कौन करेगा? यदि

* अमृत जल वाली, ‡ खोया हुआ धन।

भवमण्डल की सब घटनाएं इस नगर में विदित होती रहती हैं तो आप को यह अविदित न होगा कि यह किंकर इस देश में क्यों आया है। आज घोर रण में प्रिय अनुज लक्ष्मण मारा गया है। उसे मिले बिना अब मैं चन्द्र, सूर्य, और तारों से शोभायुक्त मृत्युलोक में न जाऊँगा। हे तात! आज्ञा दो तो मैं अभी तुम्हारे चरणतल में देह त्याग दूं। उसके विरह में मैं जी नहीं सकता।" राम पितृपद में रोने लगे। दशरथ ने पुत्र-दुख से कातर होकर कहाः—"हे पुत्र! मैं जानता हूं कि तुम किस लिए इस पुरी में आये हो। मैं सुखभोग को जलाञ्जलि देकर तुम्हारे मंगल के हेतु धर्मराज को सदा पूजता हूं। तुम सुलक्षण लक्ष्मण को पाओगे। उसका प्राण देह में अभी ऐसे बद्ध है, जैसे कारागार में बंदी। हे वत्स! सुगन्ध मादन-गिरि के श्रृंग--देश में हेमलता नामी एक औषधि है उसे लाकर अपने अनुज को जिलाओ। स्वयम् यमराज ने आज प्रसन्न भाव से यह उपाय बताया है। तुम्हारा अनुचर वायु-पुत्र हनुमान है। वह प्रभञ्जन सम पराक्रमी बली मुहूर्त्त भर में औषधि ले आएगा। तुम नियत समय पर विषम संग्राम में रावण का वध करोगे। तुम्हारे शर से दुष्टमति सवंश नष्ट होगा। रघुकुल-लक्ष्मी पुत्रवधु रघु-गृह में लौट कर गृह को फिर उज्ज्वल करेगी। किन्तु हे वत्स! तुम्हारे भाग्य में सुख-भोग नहीं है। जैसे धूपदान में गन्धरस जल कर और बहुत क्लेश सह कर देश को सुगन्ध से भर देती है, वैसे हे यशस्वि! तुम अपने सुयश से भारतभूमि को पूर्ण करोगे। मेरे पाप के लिए विधि ने तुम्हें दण्ड दिया है। हे पुत्र! अब भूमण्डल में आधी रात बीत गई है। तुम दव-बल से बली होकर अभी लंका को लौट जाओ और

वीर हनुमान को शीघ्र महा औषधि लाने के लिए भेजो। रात रहते रहते वह औषधि आनी चाहिए।"

दशरथ ने शूर को आशीष दी। पुत्र ने पितृ-पद-धूलि लेने के लिए चरण-पद्म में करपद्म वृथा ही बढ़ाया। वह पद स्पर्श नहीं किया जासका। दशरथ ने राम से मधुर स्वर से कहाः—"हे प्राणाधिक! यह देह जिसे तुम देख रहे हो भूतपूर्व देह नहीं है। यह ता छायामात्र है। तुम शरीरी हो अतएव इसे स्पर्श नहीं कर सकते। यह शरीर दर्पण अथवा जल के प्रतिविम्ब की भांति है। हे प्रियतम! शीघ्र ही लंका-धाम को जाओ।"

राम ने विस्मित होकर चरणों में प्रणाम किया और माया के साथ चले। थोड़ी देर में वह लक्ष्मण के पास जा पहुंचे। वीरवृन्द शोक से निद्राहीन है। राम-सैन्य चिन्ता से व्याकुल है। प्रभु राघव को देख कर सब उनके निकट आ गये।

नवां सर्ग।

संस्कार।

प्रभात हो गया। लङ्का के चारों ओर राघवेन्द्र की विकट सेना 'जयराम' का गम्भीरनाद करने लगी। रावण विषाद से कनक-आसन त्याग कर भूतल पर आ बैठा। उसने राम-सैन्य की सागर-कल्लोल सम भीषण ध्वनि सुनकर बड़े विस्मय से सारण से पूछाः—"हे सचिव-श्रेष्ठ, वैरि-वृन्द रात भर शोकातुर रहा है किन्तु अब किस लिए आनन्द से निनाद कर रहा है सो शीघ्र बताओ। क्या कपट—समरी मूढ़ सौमित्रि ने पुनः प्राणदान पाया है? देवताकुल उसके अनुकूल हैं। कौन जाने

चाहे उन्होंने यह भी किया हो। जिस राम ने अविराम-गति सागर को अपनी कौशल से बाँध डाला, जिसकी माया के तेज से जल में शिला तैरने लगीं; जो समर में दो बार मरता २ बच गया उसके लिए जगत में असाध्य क्या है? हे मंत्रीवर कहो, अब कौनसी घटना घटित हुई है?

मन्त्रिवर ने हाथ जोड़ कर खेद से उत्तर दिया:—"हे राजेन्द्र, इस मायिक संसार में दैवी माया को कौन समझ सकता है? देवात्मा शैलकुल-पति गन्धमादन ने गत निशाकाल में महा औषध दे कर लक्ष्मण को पुनः जीवन दान दिया है। इसी लिए राम-सैन्य उल्लास से नाद कर रही है। जैसे हिमान्त में भुजङ्ग तेजपूर्ण होता है वैसे शूर सौमित्रि वीरमद में मत्त हो गर्ज रहा है। दाक्षिणात्य* सुग्रीव के साथ ऐसे गर्ज रहे हैं, जैसे करियूथ‖ यूथनाथ‡ को गर्जन करते हुए सुन कर गर्जता है।"

सुरथी लङ्केश विषाद से साँस लेकर कहने लगा:—"विधि की विधि का खण्डन कौन कर सकता है? सन्मुख समर में अमर-मर¶ को विमुख करके मैंने जिस रिपु का वध किया था क्या वह दैव-बल से फिर बच गया? हे सारण, मेरे भाग्य-दोष से यमराज स्वयम् अपना धर्म भूल गया है। क्या सिंह कुरङ्ग का ग्रास करके उसे छोड़ देता है? किन्तु इस वृथा विलाप से क्या प्रयोजन? मैं समझ गया कि राक्षस-कुल-गौरव-रवि निश्चयतः अंध तिमिर में डूबने वाला है। शूली शम्भुसम मेरा भाई कुम्भकर्ण और शक्तिधर कुमार इन्द्रजित दोनों ही समर में मारे गए। अब मैं किस लिए प्राण धारण

---

* दक्षिण निवासी। ‖ हाथिओं झुण्ड। ‡ सरदार-हाथी
¶ देव और नर।

करूं ? क्या इस भवतल में उन दोनों को फिर पाऊंगा ? हे सारण, तुम सुरथी राम से जाकर इस प्रकार कहोः—" हे महाबाहु, राक्षस-कुल-निधि-रावण तुम से यह भिक्षा माँगता है कि तुम सात दिन तक वैर-भाव त्याग कर सैन्य सहित विश्राम करो । राजा अपने पुत्र की सत्क्रिया यथाविधि करना चाहता है । हे रघुपति वीर, तुम धर्म का पालन करो । वीर-गण विपक्षी वीर का सदा सन्मान करते हैं । तुम्हारे बाहुबल से वीर-योनि स्वर्ण-लङ्का अब वीर-शून्या है ! तुम वीरकुल में धन्य हो ! हे नरमणि, तुम ने शुभक्षण में धनुष धारण किया था । मंगल-कर्त्ता विधि तुम्हारे अनुकूल है । दैव वश राक्षस-पति विपद्ग्रस्त है । हे सुरथि, आज परमनोरथ पूर्ण करो । हे मन्त्रिवर, तुम शीघ्र राम के शिविर में जाओ । "

सचिव-श्रेष्ठ रावण की वन्दना कर और सङ्गिदल को साथ लेकर चला । द्वारपालों ने भीषण द्वारों को खोल दिया । राक्षस-मन्त्री धीरे धीरे कोलाहलमय पयोनिधि*-तीर की ओर विषाद से चला !

प्रभु रघुकुल-मणि आनन्द-सागर में मग्न हैं । रथीश्वर सौमित्रि ऐसे सुशोभित हैं जैसे शीतकाल के अन्त में नवरस युक्त तरु अथवा मेघान्त-आकाश में पूर्णिमा का सुप्रकाशित पूर्ण शशि अथवा जैसे निशावसान में प्रफुल्ल पद्म ।

दक्षिण की ओर मित्र विभीषण और संग्राम में दुर्दमनीय नेता ऐसे विराजमान हैं मानो वे देवेन्द्र को घेरे बैठे हों ।

सम्वाद-वाहक ने शीघ्र संक्षेप में यह सम्वाद दियाः—" हे देव, जगत-विख्यात राक्षस-कुल-मन्त्री सारण सङ्गीदल सहित शिविर-द्वार पर आया है; जो आज्ञा हो सो दास उस से कहे ! " रघुवर ने कहा " हे सम्वाद-वाहक, मन्त्रीवर को

---

* समुद्र ।

सादर शीघ्र यहाँ ले आओ। कौन नहीं जानता कि समर में दूत अवध्य है।"

सारण ने शिविर में प्रवेश करके इस प्रकार कहा:— (राजपद-युग को वन्दना करता हूं) "हे महाबाहु, राक्षस-कुल-निधि रावण तुम से यह भिक्षा मांगता है कि तुम सात दिन तक वैर-भाव त्याग कर सैन्य सहित इस देश में विश्राम करो। राजा अपने पुत्र की सत्क्रिया यथाविधि करना चाहता है। हे रघुपति, तुम धर्म का पालन करो। वीरगण विपक्षी वीर का सदा सन्मान करते हैं। हे बलि, तुम्हारे बाहुबल से वीर योनि स्वर्ण-लंका अब वीर-शून्या है। तुम वीर-कुल में धन्य हो। हे नरमणि, तुमने शुभक्षण में धनुष धारण किया था। मंगलकर्ता विधि तुम्हारे अनुकूल है। दैववश राक्षस-पति विपदग्रस्त है। हे सुरथि, आज पर-मनोरथ पूर्ण करो।"

रघुनाथ ने उत्तर दिया:—"हे सारण, तुम्हारा स्वामी मेरा परम शत्रु है तथापि मैं उसके दुःख से बड़ा दुखी हूं। सूर्य को राहु-ग्रस्त देख कर किसका हृदय विदीर्ण नहीं होता? जो तरुराज सूर्य के तेज से जलता है उसका मुख भी उस समय मलिन हो जाता है। हे मन्त्रिवर, विपद में शत्रु-मित्र मेरे लिए सब बराबर हैं। तुम लङ्का को लौट जाओ, मैं सैन्य सहित सात दिन तक अस्त्र धारण नहीं करूंगा। हे बुध, राक्षस-कुल नाथ से कह देना कि जो अपने धर्म-कर्म में रत है उसे धार्मिक जन कभी नहीं मारते।" इतना कहकर राम चुप हो गए।

मन्त्री ने उत्तर दिया,—"हे रघुकुल-मणि, तुम नर कुलोत्तम हो। जगत में तुम विद्या, बुद्धि और बाहुबल में अतुल हो। हे महामति, तुम्हें ऐसा ही उचित है। क्या सुजन कभी अनुचित कर्म करते हैं? जैसे बली नकषेय राक्षसदलपति

है वैसे हे राघव, तुम नरदलपति हो। न जाने किस कुक्षण में तुम दोनों ने एक दूसरे को रिपुभाव में देखा था! किन्तु विधि के नियम का खण्डन कौन कर सकता है? हे महाबाहु, जिस विधि ने पवन को सिन्धु का शत्रु बनाया, मृगेन्द्र* को गजेन्द्र का रिपु ठहराया, और खगेन्द्र‡ का नागेन्द्र से वैर कराया उसी के माया-जाल से तुम में और लंकेश में वैर हुआ। इसमें किसका दोष है?"

प्रसाद पाकर दूत शीघ्र रावण के पास गया। राक्षसनाथ शोकार्त्त होकर और नयन-नीर से वस्त्र भिगोकर चुपचाप बैठा है। उधर नरपति राम ने नेतावृन्द को आज्ञा दी। सब आनन्द से रण-सज्जा त्याग कर अपने अपने शिविर में विराम करने लगे।

अशोक-वन में जहां वैदेही बैठी थीं—वहां सरमा नामी राक्षस-वधू ने आकर सीता के चरणारविंद की वन्दना की और उनके पदतल में बैठ गई।

मैथिली ने मधुस्वर से पूछा:—"हे विधुमुखि, दो दिन से पुरवासी जन हाहाकार क्यों कर रहे हैं? मैंने कल सारे दिन रणभूमि का रणनाद भय से सुना, वीरों के पद-भार से घन इतनी शीघ्रता से कांपता था, जैसे भूकम्प से पृथ्वी। आकाश में अग्नि-शिखा सम शर दिखाई देते थे। सन्ध्या समय राक्षस-सैन्य ने जयनाद से नगर में प्रवेश किया था और राक्षस-वाद्य गम्भीरता से बजे थे। हे सरमे, शीघ्र कहो, कल कौन जीता और कौन हारा? अरी मेरा मन व्याकुल है। चित्त को शान्ति नहीं होती। यहां मैं किसी को नहीं जानती। किस से पूछूं? यदि मैं चेरियों से पूछती हूं

---

* सिंह ‡ गरुड़।

तो वे उत्तर नहीं देतीं । हे सखि, चामुण्डा रूपिनी, लोहित-‡ लोचना, विकटा त्रिजटा, गत निशाकाल में क्रोधान्ध हो हाथ में तेज तलवार लेकर मुझे काटने आई थी। हे सुकेशिनी, अन्य चेरियों ने उसे रोक दिया इस लिए यह तापित प्राण बच गए। उस दुष्टा के स्मरण मात्र से मेरा हृदय कांपने लगता है।

सरमा ने मधुर वाणी से कहा,—"हे भाग्यवती, तुम्हारे सौभाग्य से इन्द्रजित रण में मारा गया है, इस लिए सारी लङ्का रात दिन इस प्रकार विलाप किया करती है। हे देवि, इतने दिन में बली राक्षेश्वर का बल क्षीण हुआ है। मन्दोदरी रोती है। राक्षस कुल-नारी दुःख से आकुल और निरानन्द है। हे पद्माक्षि, तुम्हारे पुण्यबल से तुम्हारे देवर सुरथी लक्ष्मण ने संग्राम में देवासाध्य कार्य किया है। उन्होंने जगत-अजेय इन्द्रजित का वध कर डाला है।"

प्रियम्वदा सीता ने कहा,—"हे राक्षसवधू, तू इस पुर में मेरे लिए शुभ सम्वाद है। सौमित्रि केशरी वीरेन्द्र-कुल में धन्य है। सुमित्रा सास ने ऐसे पुत्र को शुभक्षण में सुगर्भ में धारण किया था। इतने दिन में विधाता की कृपा से मेरे कारागार का द्वार खुलेगा। अब दुर्मति रावण लङ्काधाम में अकेला रह गया। देखो अब और क्या घटना होती है। न मालूम मेरे भाग्य में अभी और क्या २ दुःख हैं? अरी सरमे, ध्यान से सुन, क्रमशः हाहाकार-ध्वनि बढ़ रही है।"

सुवचनी सरमा ने कहा—"हे सति, राक्षसेन्द्र राघवेन्द्र के साथ सन्धि करके तनय को प्रेत-क्रिया के लिए सिन्धुतीर

‡ खूनी आंखों वाली।

भेजा रहा है! अब लङ्का में सात दिन तक कोई वैर-भाव से अस्त्र धारण नहीं करेगा। नरमणि ने यह प्रतिज्ञा रावण के अनुरोध से की है। हे देवि, राघवेन्द्र दयासिन्धु हैं। दैत्य-बाला पतिपरायणा सती प्रमीला सुन्दरी (हे साध्वि, वह कथा स्मरण करने से हृदय विदीर्ण होता है) आज देह त्याग कर पति से पुनः मिलने के लिए स्वर्ग-धाम को जायगी। हे देवि, जब कामदेव हर के कोपानल से जलकर मरा था, तब क्या सती रति अपने प्राणनाथ को लेकर भस्म हुई थी?"

राक्षसवधु अश्रुनीर से भीग गई और शोकाकुला होकर रोने लगी। दुःख में सदा कातरा और भवतल में दया-स्वरूपा सीता नेत्रों में जल भर कर कहने लगी,—"हे सरमा, मेरा जन्म कुक्षण में हुआ था। अरी सखि, मैं अमंगलारूपी जिस घर में प्रवेश करती हूं उस घर के सुख-प्रदीप को बुझा देती हूं। विधाता ने मेरे दग्ध भाग्य में ऐसा ही लिखा है। देखो, मेरे नरोत्तम पति और सुलक्षण देवर लक्ष्मण बनवासी हैं। हे सखि, श्वशुर ने पुत्र-शोक से प्राण त्याग दिया। अयोध्यापुरी अन्धकारमय है। राज-सिंहासन शून्य है। मुझ दासी की मान-रक्षा के लिए विकट विपक्षी के भीम भुज-बल से वृद्ध जटायु मारा गया। इधर देखो, इस अभागिनी के दोष से इन्द्रजित का वध हुआ और असंख्य राक्षस-रथी कालरूपी रण के ग्रास हुए। देखो, अब अतुलनीया सौन्दर्यमयी दानव-बाला प्रमीला भस्म होगी। हाय रे, वसन्तारम्भ में ऐसा फूल सूखा जाता है।" सरमा ने नयन-जल पोंछ कर कहाः—"हे रूपवती, तुम क्या कहती हो! इस में तुम्हारा क्या दोष है? इस स्वर्णलता को

तोड़कर रसाल-राज को किसने वञ्चित किया ? इस राक्षस-देश में राघव-मानस-पद्म को कौन उठा लाया ? लंकाधिपति अपने कर्म-दोष से डूब रहा है । बस, इस दासी का इतना ही कहना है ।" सरमा शोक से रोने लगी । और उस के साथ अशोक-वन में राघव-वाञ्छा सीता भी पर-दुःख से दुखी होकर रोने लगी ।

पश्चिमी द्वार अशनि‡-निनाद से खुल गया । एक लाख राक्षस हाथ में स्वर्ण-दण्ड लिए हुए बाहर आए । उनके रेशमी पताके आकाश में उड़ रहे हैं । राजपथ के दोनों ओर पताकी-गण श्रेणीबद्ध हो चुपचाप चलने लगे । सब से आगे हाथियों की पीठ पर दुन्दभी वाले हैं । गम्भीर रव से देश पूर्ण हो गया । पैदल सिपाही कतारों में चलने लगे । हाथियों के पीछे घोड़े हैं । रथीवृन्द मृदुगति से रथ हांक रहे हैं । वाद्य करुणस्वर से बज रहा है । जहाँ तक दृष्टि जाती है शोकातुर राक्षस-दल समुद्र की ओर जा रहा है । स्वर्ण-वर्म आंखों में चकाचौंध करते हुए झिलमिला रहे हैं । सोने के ध्वज-दण्ड रवि-कर-तेज से शोभा पाने लगे । शिरों पर शिरोमणि हैं । कमरबन्ध में असि-कोष * हैं । हाथ में दीर्घ शूल हैं किन्तु नयनों में विगलित अश्रु-धारा है ।

वीराङ्गना (प्रमीला की दासी) अब बाहर आई । वह पराक्रम में भीमसमा (दुर्गा) और रूप में विद्याधरी है । वह रण-भेष में कृष्णवर्ण अश्व पर आरूढ़ है । उसका वदन ऐसा मलिन है जैसी शशिकलाविहीन निशा ।

‡ बिजली की कड़ाकड़ाहट । * मियान ।

अविरल अश्रुधारा वस्त्र, अश्व, और वसुंधा को भिगोती हुई बह रही है। कोई वामा दीर्घ श्वास ले रही है। कोई चुप-चाप रोती है। कोई अग्निमय आँखों से रघु-सैन्य की ओर ऐसे देख रही है, जैसे वाघिनी जलावृत होकर व्याध को देखती है। हाय, अब वह हँसी कहां है; वह सौदामिनी-छटा कहां है; काम-समर का वह सर्वभेदी कटाक्ष-शर कहां है? चेरिओं के बीच में शून्यपृष्ठ और शोभा शून्य घोड़ी है। किङ्करी चारों ओर चमर डुला रही हैं। वामागण रोती हुई चल रही हैं। गगन में कोलाहल उठ रहा है। प्रमीला का वीर भेष (असि, चर्म, तूण, धनु और अमूल्य रत्न-मण्डित किरीट) घोड़ी की पीठ पर झिलमिला रहा है। मणिमय सारसन और कवच सुवर्ण से खचित हैं। वे दोनों दुखी हैं; सारसन उस पतली कमर का स्मरण करके और कवच गिरिशृङ्ग सदृश उच्च कुचयुग की चिन्ता करके। दासियां कौड़ी, खीलें, रुपये और मोहरें फेंकती जा रही हैं। गायकी करुण स्वर से गा रही हैं। राक्षसी छाती पीट पीट कर रोती हैं। रथवर रथवृन्द में मृदुगति से अब बाहर हुआ। उसका घन-वर्ण है। चक्र म बिजली की छटा है। उसके ऊपर इन्द्र-चाप रूपी ध्वजा है। किन्तु आज वह ऐसा कान्तिशून्य है जैसे विस-र्जन के अंत में प्रतिभा-विहीन प्रतिमा-पञ्जर। रावण घोर कोलाहल से रोता है। क्षण क्षण में बड़े दुख से छाती पीटता और अचेतन हो जाता है। रथ में भीम-धनु, तुणीर, फलक, खड्ग, शङ्ख, गदा आदि अस्त्र, और सुकवच, सौरकर‡ राशि सदृश किरीट और सब वीर भूषा शोभा पा रहे हैं। गीती* करुण गीतों में राक्षसों के दुःखों को रोकर गा रहा है। कोई

---

‡ सूर्य की किरणों का समूह * गाने वाला

स्वर्ण मुद्रा फेंक रहा है और किसी ने इतने फूल डाले हैं कि मानों घोर आंधी में पेड़ों से कुसुम गिरे हों। जल-वह धूल को दमन करने के लिए सुवासित जल छिड़क रहा है, किन्तु वह पद-भार सहन करने में अक्षम है। रथ सिन्धु की ओर चला।

प्रमीला सुन्दरी सोनेके कुसुमावृत शिविकासन पर शव के पास बैठी है, मानों वह मृत-काम की सहगामिनी रति है। उसके ललाट में सिन्दूर-विन्दु, गले में फूल-माला, मृणाल-भुजा में कंकण हैं, और विविध भूषणों से भूषिता है। वाम-रिणी सुन्दर चमर को रोती हुई डुला रही है। वामाएं अश्रु-धारा बहाती हुई फूलराशि फेंक रही हैं। राक्षस नारीकुल विषाद से आकुल होकर हाहारव कर रहा है। हाय! अब वह ज्योति कहाँ है जो मुख-चन्द्र में सदा वास करती थी! हाय! अब वह सुचारु हँसी कहां है जो मधुर अधर में नित्य ऐसी शोभा पाती थी, जैसे पंकज के विम्बाधर में दिनकर‡ कर-राशि! विधुमुखि अब मौन-व्रत में इतनी व्रती है मानो उसका प्राण देह को त्याग कर पति-लोक को चला गया। जैसे तरुराज के सूख जाने से लता भी सूख जाती है, वैसे सुन्दरी की दशा हो गई है। राक्षसगण हाथ में नंगी तलवार लिए श्रेणियों में जारहे हैं। उन पर किरणें पड़ कर चमचमा रही हैं। काञ्चन-*कञ्चुक की विभा नयनों में चकाचौंध कर रही है।

चारों ओर वेदज्ञ उच्चस्वर से मंत्रोच्चारण कर रहे हैं। होत्री महामन्त्र जप करते हुए हविर्वह लेजा रहा है। राक्षस-वधु स्वर्णपात्र में विविध भूषण, वस्त्र, चन्दन, कस्तूरी, केशर, कुन्कुम, और पुष्प, लेजा रही हैं। स्वर्णकुम्भ में पवित्र गंगा-

‡ सूर्य की किरणें। * सुनहरी चोली।

जल है। चारों ओर सुवर्ण-दीप जल रहे हैं। ढाक, ढोल, करताल, मृदङ्ग, तुम्दकी, झांझ और शङ्ख बज रहे हैं। सधवा राक्षस-नारियां अश्रुनीर से आर्द्र होकर मंगल-ध्वनि कर रही हैं। हाय ! अमंगल दिन में मंगलध्वनि हो रही है !

अब राक्षसनाथ रावण सफेद वस्त्र धारण किए हुए बाहर आया। उसके चारों ओर मन्त्रिदल शोक से शिर नीचा किये हैं। लंकापति के नेत्र अश्रुपूर्ण हैं और उसकी वाणी नितान्त नीरव है। सचिववृन्द और अधिकारीवर्ग वाक्यहीन है। लंकावासी राक्षस, आबाल, वनिता, और वृद्ध सब रोते हुए उसके पीछे हो लिए। पुरी ऐसी शून्य हो गई, जैसे गोकुल-भवन, श्याम के वियोग से हो गए थे। सब अश्रुनीर बहाते हुए और आकाश को विषाद-निनाद से पूर्ण करते हुए धीरे धीरे सिन्धु की ओर चले।

प्रभु ने अंगद से सुमधुर स्वर से कहा—"हे महाबलि युवराज, दश सौ योद्धाओं को लेकर राक्षसों के साथ मित्रभाव से सिन्धुतट पर जाओ। हे सुरथि, सावधानी से जाना। राक्षसकुल के शोक से मेरा हृदय आकुल है। हे कुमार, इस विपद में शत्रु-मित्र का विचार मन में न लाओ। शायद लक्ष्मण को देखकर राक्षसाधिपति पूर्व कथा स्मरण करके रुष्ट हो, इस लिए, हे युवराज, तुम जाओ। तुम्हारे राजचूड़ामणि पिता ने रावण को समर में पराजित किया था, इस लिए, हे शिष्टचारी, तुम उसे शिष्टाचार से संतुष्ट करो !"

सुरथी अंगद दश सौ रथी लेकर लेकर सागर की ओर चला। आकाश में देवगण आ गए। ऐरावत पर देव-पति इन्द्र अनन्त यौवना शची सहित हैं। शिखिध्वज नामी रथ में सेनापति ता-रिकारि विराजमान है। चित्रितरथ में रथी चित्र-

रथ हैं। मृग पर पवन हैं। भीषण महिष पर यमराज हैं। अलकापति यक्षराज पुष्पक में है। शान्त सुधानिधि सूर्य-तेज से मलिन है। प्रफुल्ल वदन अश्विनीकुमार आदि अन्य देवता भी आए। सुर, सुन्दरी, गन्धर्व, अप्सरा किन्नर और किन्नरी भी आईं। आकाश में दिव्य वाद्य आनन्द से बजने लगा। देव, ऋषि और सब त्रिदिव-निवासी आनन्द में मग्न हो गए।

सागर-तीर पहुँच कर राक्षसों ने चिता की रचना शीघ्रता से यथाविधि की। वाहक सुगन्धित चन्दन लाद कर लाया। घृतभार* ने बहँगी से घृत उतारा। राक्षस-दल ने मन्दाकिनी के पवित्र जल से शव को यत्न-पूर्वक नहला कर और रेशमी वस्त्र पहना कर दाह-स्थान पर रक्खा। राक्षस पुरोहित गम्भीर स्वर से मन्त्र पढ़ने लगा। साध्वी सती प्रमीला ने महातीर्थ (समुद्र) में स्नान किया और रत्न-आभरण उतार कर सहचरी दैत्य-बालाओं में उन्हें बाँट दिया। मधुरभाषिणी ने गुरुजन को प्रणाम किया और दैत्यबाला-दल को सम्बोधन कर कहने लगीः—"ऐ सहचरियो, इतने दिन पश्चात् आज जीवलीला-स्थल में मेरी जीवनलीला समाप्त होती है। अब तुम सब दैत्य-देश में लौट जाओ। अरी वासन्ति, पिता से विनयपूर्वक यह सब कह देना। मेरी माँ से' हाय' सहसा नयन से नीर बहने लगा। सती नीरव हो गई और दानव बालाएं हाहाकार-रव से रोने लगीं।

सुन्दरि मुहूर्त भर में अपने शोक को दमन कर फिर कहने लगी—"मेरी माँ से कहना कि विधाता ने जो भाल में लिखा था सो इतने दिन बाद पूरा हुआ। पिता-माता ने इस

---

* घी उठाने वाला।

दासी को जिनके हाथ में समर्पण किया था, मैं आज उनके साथ जा रही हूँ। जगत में पति बिना अबला की सुगति नहीं। प्रमीला तुम सब से यह भिक्षा मांगती है कि उसे भूलना नहीं।"

सती पुष्पासन रूपी चिता पर चढ़ कर आनन्द से पति के पद-तल में बैठी। उसके केशों में प्रफुल्ल कुसुमों की माला है। राक्षस-वाद्य बजने लगा। वेद पाठी उच्चैस्वर से वेद पाठ करने लगे। राक्षसनारी मंगल-गान गाने लगीं। उस रव के साथ आकाश में हाहारव उठने लगी। चारों ओर पुष्पवृष्टि होने लगी। राक्षस-बालाएं विविध भूषण, वस्त्र, चन्दन, कस्तूरी, केशर, कुंकुम-आदि यथाविधि चिता के चारों ओर रखने लगीं। राक्षसों ने तीक्ष्ण शरों से पशुओं को मारकर और उन्हें घृताक्त कर चिता के चारों ओर ऐसे रक्खा जैसा शाक्तों के गृह में महा नवमी को शक्ति के पीठतल में किया जाता है।

राक्षसराज ने अग्रसर होकर कातरता से कहा—"हे मेघनाद, मुझे आशा थी कि मैं तुम्हारे सन्मुख निज नयन बंद कर और तुम्हें राज्यभार देकर महायात्रा करूंगा किन्तु विधि की लीला समझ में नहीं आती। उसने मुझे उस सुख से वञ्चित किया। हे वत्स, आशा थी कि तुम्हें राक्षसकुल-राज-सिंहासन पर और तुम्हारे बांई ओर राक्षसकुल-लक्ष्मी पुत्र-वधू को रानी के रूप में देख कर नयनों को तृप्त करूंगा; किन्तु यह आशा वृथा थी। पूर्व जन्म के फल से तुम दोनों को आज इस कालासन पर देख रहा हूं। राहु ने राक्षस-गौरव-रवि का ग्रास कर लिया है। क्या मैंने शिव की सेवा यह फल भोगने के लिए की थी? अब मैं शून्य लंका को कैसे लौटूंगा? जब रानी मन्दोदरी मुझ से पूंछेगी कि 'मेरा पुत्र

और मेरी पुत्र-वधू कहां हैं; उन दोनों को सिन्धु-तीर छोड़ कर कैसे चले आए' तो मैं उसे क्या कह कर समझाऊंगा? हाय, क्या कह कर? हा पुत्र! हा वीरश्रेष्ठ! हा रण में चिरजयी! हा सती राक्षस लक्ष्मि! दारुण विधिने किस पाप के कारण मेरे भाल में यह लिखा था?"

कैलाश में शूली अधीर हो गए! मस्तक में जटा हिल उठी। भुजङ्गवृन्द भीषण गर्जन से गर्ज उठे। भाल से अनल ज्वाला निकल पड़ी। त्रिपथ गामिनी गंगा भैरव कल्लोल से ऐसा कल्लोल करने लगी जैसे वर्षा में वेगवती स्रोतस्वती पर्वत कन्दरा में कल्लोल करती करती है। कैलास-गिरि थर२ कांपने लगा। विश्व आतङ्क से काँप उठा। सती अभया भय से हाथ-जोड़ कर महेश से कहने लगी—"हे प्रभु, तुम किस लिए क्रोधान्वित हो सो मुझ दासी से कहो? विधि के विधान से मेघनाद समर में मारा गया है इसमें रघुवर दोषी नहीं हैं। हे नाथ, यदि अन्याय से उसका नाश करोगे तो मुझे पहले भस्म कर दो।" जननी ने शंकर के दोनों चरण पकड़ लिए।

धूर्जटि ने आदर से सती को उठा कर कहा—"हे देवि, राक्षस-दुःख से मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। तुम जानती हो कि मैं शूर नैकषेय को कितना चाहता हूं। हे क्षेमङ्करि, तुम्हारे अनुरोध से मैं राम और लक्ष्मण को क्षमा करूंगा।" त्रिशूली ने विषाद से अग्नि से कहा—"हे सर्वशुचि, तुम्हारे स्पर्श से सब पवित्र हो जाता है। तुम राक्षस-दम्पति को शीघ्र इस सुधाम में ले आओ।"

अग्नि विद्युत के रूप में भूतल पर गया। सहसा चिता जल उठी। सब ने चकित होकर आग्नेय रथ में सुवर्ण-आसन

पर दिव्यमूर्त्ति इन्द्रजित् वीर को आसीन देखा। वामभाग में रूपवती प्रमीला है। उसके तन में अनन्त यौवन-कान्ति शोभा पा रही है। मधुर अधर में चिर सुखदायिनी हंसि-राशि विराजमान है।

रथवर गगन-पथ में वेग से चढ़ा। देवगण फूल बरसाने लगे। विपुल विश्व आनन्द-निनाद से पूर्ण हो गया।

राक्षसों ने दुग्धधार से उज्ज्वल पावक को बुझाया। सब ने भस्म को परम यत्न से उठाकर सागर-तल में विसर्जन किया। दाहस्थल जाह्नवी के जल से धोया गया। लाखों राक्षस शिल्पियों ने चिता पर स्वर्ण-ईंटों का मठ बनाया। मठचूड़ा अभ्र को भेद कर आकाश में सुशोभित हुआ।

राक्षसों ने सिन्धु में स्नान किया और अश्रुनीर में भीगता हुआ लंका को लौटा। राक्षसपुरी सात दिन तक विषाद से रोया की।